Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ारिका

नवंबर १९७५

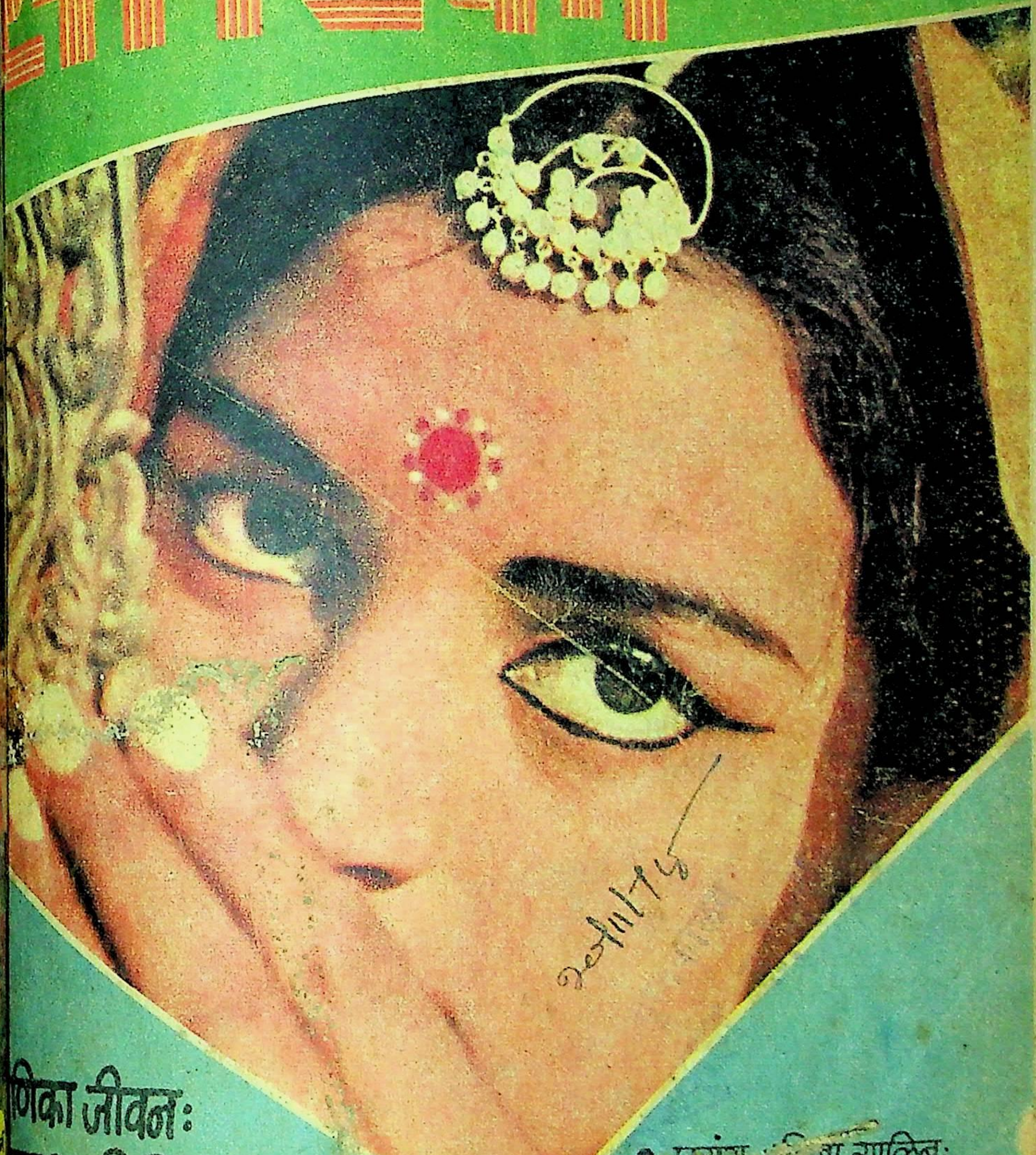

णिका जीवन:
छ अपरिचित आयाम

मद नदीम कासमी, नूरशाह, जोगेंद्र पाल,
न, सुहैल अज़ीमाबादी, श्याम संन्यासी
दि की कहानियां, डायरी- अं
घुकथाएं तथा टिप्पणियां

थ ही - वीरेंद्र मेंहदीरत्ता, प्र काश बाथम, हबीब कैफ़ी
रिश, शरत, अनिल ठांगे

• प्रसंग : ज़ा ग़ालिब:
कुछ गलत फहमियां:
प्रकाश पंडित

• अन्य लेखक : संतासिंह सेखों
जसवंतासिंह विरदी,
चंद्रगुप्त विद्यालंकार आदि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहीं आप सस्ते सौदों के गुलाम तो नहीं हो गए?

कमला वस्त्रों के सस्ते दाम-धनवान सी शान

Creative Unit

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आप इनमें से किस पुरुष जैसे दिखते हैं?

आप अपने शरीर को शक्तिशाली मर्दाना बनाइए— सिर्फ़ १४ दिन में परिणाम देखिए— अन्यथा दाम न दीजिए !

आदम कद शीशे के सामने खड़े होकर, अपनी शारीरिक अवस्था के बारे में खुद भ्रम में पड़ जाना कितना सरल है। क्या सचमुच आपका शरीर वैसा ही मर्दाना है जिससे दूसरे पुरुषों में ईर्षा जाग उठे और स्त्रियों में प्रशंसा? अगर नहीं तो यह खबर सुन आप झूम उठेंगे। एक अति क्रांतिकारी, नये किस्म का साधन बनाया गया है जो आपको वैसाही बदन देगा जैसा आप हमेशा से चाहते रहे हैं और वह भी सिर्फ कुछ सप्ताहों में ही। कल्पना कीजिए... आपकी मांस पेशियाँ फौलादी हो... बाहों की मछलियों का शक्तिशाली मर्दाना उभार... पेड़ के प्रचंड तने जैसी रानें। अब आप इसे हक़ीकत बना सकते है। इस नये साधन का नाम है— बुलवर्कर ३। विश्व के नवीनतम वैज्ञानिक सिद्धांत आइसोटॉनिक/आयसोमेट्रिक पर बने होने के कारण बुलवर्कर ३ आपके पूरे शरीर में प्रचंड नई ताक़त और स्फूर्ति भर देता है— परंपरागत पद्धतियों से कई गुना तेज़ रफ्तार से। और आप स्वयं यह केवल १४ दिनों में सिद्ध कर सकते है।

नये पावर मीटर

से आप अपनी मांस पेशियों की शक्ति को दिन-ब-दिन बढ़ते हुए देख सकते हैं।

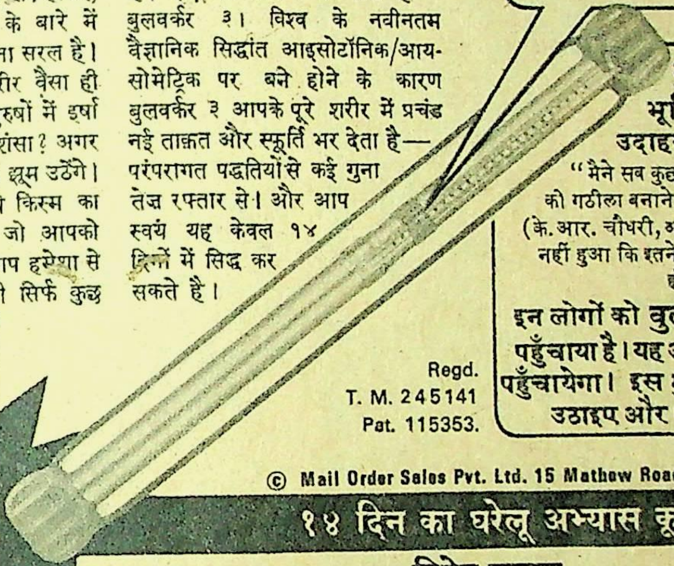

Regd.
T. M. 245141
Pat. 115353.

बुलवर्कर की लोगों ने भूरि-भूरि प्रशंसा की है। उदाहरण के तौर पर देखिये :

"मैने सब कुछ आजमा कर देखा, किंतु शरीर को गठीला बनाने में बुलवर्कर ३ का जवाब नहीं" (के. आर. चौधरी, आन्ध्र प्रदेश) "मुझे विश्वास ही नहीं हुआ कि इतने थोड़े अभ्यास से इतना कमाल हो सकता है। (ए. हाल बर्नली)

इन लोगों को बुलवर्कर ने अद्भुत लाभ पहुँचाया है। यह आपको भी अद्भुत लाभ पहुँचायेगा। इस मुफ्त प्रस्तावका फायदा उठाइए और स्वयं ही देख लीजिए...

अब सिर्फ रु. ३९ तथा शेष आसान माहवारी किस्तों में।

© Mail Order Sales Pvt. Ltd. 15 Mathew Road, Bombay 400 004

१४ दिन का घरेलू अभ्यास कूपन

विशेष प्रस्ताव

SB.10

208/39-H

बुलवर्कर सर्विस मेहता महल, १५ मैथ्यू रोड, बम्बई ४०० ००४

मुझे १४ दिन के घरेलू अभ्यास के लिये तुरंत बुलवर्कर ३ भेजिये। यदि मैं परिणामों से संतुष्ट न हुआ तो अपनी पूर्ण रकम तुरंत वापस पाने के लिये सबकुछ १४ दिन की अभ्यास अवधि के भीतर लौटा दूंगा।

कृपया अपनी पसंद के खाने में ☑ निशान लगाइये।

☐ वी.पी.पी. द्वारा बुलवर्कर मिलते ही मैं डाकिये को रु. ३९ (तथा रु. ९ भेजने का खर्च) दे दूंगा। १४ दिन की अभ्यास अवधि के बाद मशीन को अपने पास रखने की हालत में मैं स्वीकार करता हूं कि बाकी रकम १३ अतिरिक्त मासिक किश्तों में प्रतिमाह रु. १९ के हिसाब से चुकाऊंगा। ☐ रु. ४८ चेक/बैंक ड्राफ्ट/भारतीय पोस्टल ऑर्डर द्वारा प्रेषित हैं। उपर्युक्त मासिक किश्त योजना स्वीकृत है। ☐ रु. [illegible] मनी-ऑर्डर द्वारा (रसीद नं.......... दिनांक..........) प्रेषित हैं। उपर्युक्त मासिक योजना स्वीकृत है। तुरंत नकद रकम अदा कर **रु. ३२ की बचत कीजिये।** ☐ वी.पी.पी. द्वारा बुलवर्कर मिलते ही मैं डाकिये को रु. २६३ (तथा रु. ९ भेजने का खर्च) दूंगा। ☐ मैं रु. २६३ चेक/मनी ऑर्डर/भारतीय पोस्टल ऑर्डर द्वारा प्रेषित हैं। ☐ रु. २६३ मनी ऑर्डर द्वारा (रसीद नं.......... दिनांक.........) प्रेषित हैं— १४ दिन मे वापसी के विशेषाधिकार सहित।

हस्ताक्षर.......................................(अथवा मा बाप के अगर १८ से कम आयु हो).......

नाम...

पता...

मुफ़्त २०वीं शताब्दी का कॅलेन्डर —सचित्र, रंगबिरंगा, आकर्षक कॅलेन्डर इस कूपन के ५ दिन में भेजने पर!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दस साल से मैं एक ही चाय इस्तेमाल कर रही थी, लेकीन आदत ऐसे बदल गई

मैं सालों से अपने परिवार वालों और मेहमानों को वही चाय पिलाती आ रही थी. अब क्या कहूं, किसी ने कभी तारीफ़ के पुल नहीं बांधे, वैसे किसी ने शिकायत भी नहीं की.

एक दिन एक लड़की आई और सूपर ललित चाय का एक सैम्पल पैकेट दे गई. मैंने चाय बनाई और क्या बताऊं, चाय बहुत ही बढ़िया बनी. मेरे परिवार वालों को भी यह चाय बड़ी पसंद आई. लेकिन जैसे ही पैकेट खत्म हुआ, हमने अपनी पुरानी चाय शुरू कर दी, आदत जो पड़ चुकी थी.

खैर; अगली बार बनिए की दुकान पर गई तो सूपर ललित चाय का पैकेट दिखा, और मैंने यों ही दाम पूछा. दाम सुनकर मेरे आश्चर्य का ठिकाना न रहा कि इस का दाम हमारी पुरानी चाय से कुछ ही पैसे ज़्यादा था, जब कि स्वाद में कितना फर्क था. मैंने झट से खरीद लिया, उस दिन से हम पीते हैं तो एक ही चाय—सूपर ललित.

श्रीमती मधु चौहान,
बम्बई.

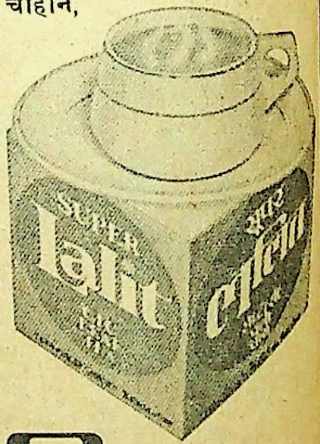

सूपर
ललित

अनोखी चाय, सुनहला रंग
पी के रहे, फिर पीने की उमंग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ब्लैंकेट
शाल
ब्लेज़र
मफ़लर

SIMPLEX WOOLLEN MILLS
swm
BOMBAY

सिम्प्लेक्स
वूलन मिल्स, बम्बई-४०० ०६८

IMPRESSIONS 641

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सांस में दुर्गंध जुदाई कराये...

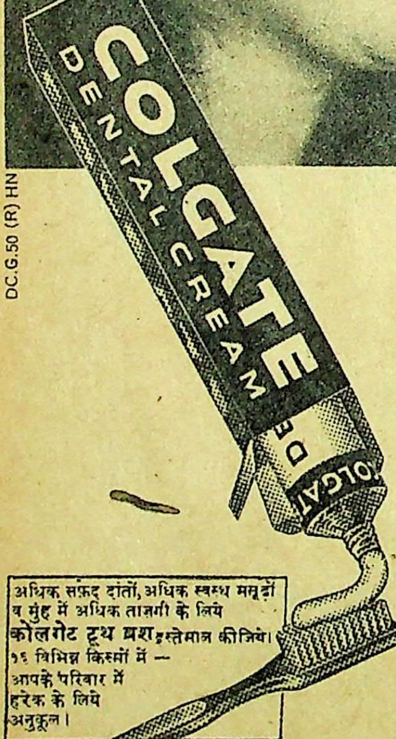

DC.G.50 (R) HN

कोलगेट डेन्टल क्रीम से सांस की दुर्गंध रोकिये... दंतक्षय का दिनभर प्रतिकार कीजिये!

वैज्ञानिक परीक्षणों से यह सिद्ध हो चुका है कि १० में से ७ लोगों के लिए कोलगेट सांस की दुर्गंध को तत्काल खत्म कर देता है और खाना खाने के तुरंत बाद कोलगेट विधि से दांत साफ़ करने पर अब पहले से अधिक लोगों का—अधिक दंतक्षय रुक जाता है। दंत-मंजन के सारे इतिहास की यह एक बेमिसाल घटना है। क्योंकि एक ही बार दांत साफ़ करने पर कोलगेट डेन्टल क्रीम मुंह में दुर्गंध और दंतक्षय पैदा करने वाले ८५ प्रतिशत तक कीटाणुओं को दूर कर देता है। इसका पिपरमिंट जैसा स्वाद भी कितना अच्छा है—इसलिए बच्चे भी नियमित रूप से कोलगेट डेन्टल क्रीम से दांत साफ़ करना पसंद करते हैं।

ज़्यादा साफ़ व तरोताज़ा सांस और ज़्यादा सफ़ेद दांतों के लिए...
दुनिया में अधिक लोग दूसरे टूथपेस्टों के बजाय कोलगेट ही खरीदते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सारिका
कहानियों और कथा-जगत की संपूर्ण पत्रिका
नवंबर, १९७५
वर्ष : १५; पूर्णांक : १७५

गणिका-जीवन : कुछ अपरिचित आयाम—विशिष्ट खंड

कहानियां

अहमद नदीम कासमी (उर्दू) : सफेद घोड़ा : १२
कन्हैयालाल नंदन : मानकुंवर : एक आपबीती : १६
नूरशाह (कश्मीरी) : अंधेरे-उजाले : २४
जोगेंद्रपाल (उर्दू) : महाभारत का दूसरा युद्ध : ३२
चंदूलाल पटेल (गुजराती) : गुलाब और हिना : ३६
सैयद जमीर हसन (उर्दू) : लुच्ची : ४४

टिप्पणियां-लघुकथाएं

प्राचीन काल में गणिका : श्यामू संन्यासी : १०
समदर्शी : १८
गर्मी की दोहपर : ओविड (रोमन) : १८
बेटियां : १८
सावित्री : सुहैल अजीमाबादी (उर्दू—संक्षिप्तीकरण) : १९
महानगर बंबई : वेश्यावृत्ति के सामाजिक आयाम : रमाकांत आजाद : २०
देवदासी : माताहारी (डायरी का अंश) : २८
ठोकर गली : नसीम दुर्रानी (उर्दू—संक्षिप्तीकरण) : २९
विक्रमोर्वशीयम् : (संक्षिप्त कथा) : ३१
कीमत : ऑलुस गेलियस (रोमन) : ३५

● ●

अन्य कहानियां

हबीब कैफी : भाई : ४८
परेश : शहर आ गया, श्यामली : ६०
वीरेंद्र मेंहदीरत्ता : बारात : ६४
प्रकाश बाथम : क्षौर-कर्म : ६८
शरत् : लत : ७२
अनिल डांगे (मराठी) : अमीबा : ८४
ज्योतिस्वरूप तिवारी : बेटियों वाले : ८८

लघुकथाएं

लिकुम और आवो लिपी : (नागा लोककथा) : ५९
दोनों तजे प्राण : (लोककथा) : ६३
नदी का दूसरा किनारा : रामसरूप अणखी (पंजाबी) : ७४
पत्थर के आंसू : नीओबी (ग्रीक) : ७४
पराक्रमी बेलारफोंटीज (ग्रीक) : ७५
मयूराक्षी (ग्रीक) : ७५

स्थायी स्तंभ

पाठकीय : ८
आद्यकथाकार : संतसिंह सेखों (पंजाबी) : जसवंतसिंह विरदी : ५२
संतसिंह सेखों : भत्ता : ५६
कृतियां : रा. अ., चेतन आर्य, मुद्गल : ७६
प्रसंग : गालिब : कुछ भूलें, कुछ भ्रांतियां : प्रकाश पंडित : ८०
विविधा : उपमन्यु : ८३
फिल्में : ८७

विशिष्ट टिप्पणी

कहानी की लोकप्रियता और शक्ति में उतार : चंद्रगुप्त विद्यालंकार : ७८

गोष्ठी रिपोर्ट

चौथा समांतर लेखन सम्मेलन : ९०
● आमुख : राजनारायण शर्मा

संपादक : कमलेश्वर

● मुख्य उप-संपादक : आनंदप्रकाश सिंह
● उप-संपादक : अवधनारायण मुद्गल, सुदीप
● कार्यालय-सहयोगी : श्रीनाथ पांडेय, देवचंद्र झा, भिकाजी शिर्के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पाठकीय

अगस्त अंक

● **डॉ. बी. पी. एस. निगम, प्रधान चिकित्सक, शासकीय आयुर्वेदिक औषधालय, कानाकाकड, झाबुआ (म. प्र.) से लिखते हैं :**

'**सारिका**' के अगस्त-अंक को श्रेष्ठ अंक मानने पर मजबूर होना पड़ा. 'नींद', '**भाले पर लटकी इनसाफ की तराजू**', '**पायदान**' आदि कहानियां अपने आप में पाकिस्तान का आधुनिक इतिहास समेटे हुए थीं. लघुकथाओं और अन्य लेखों ने इस अंक को संवारा है. अन्य कथाओं में '**आत्म-कथन**' अच्छी रही. . . ☐

● **श्री सतीश क्षेत्रपाल, दल्ली-राजहरा, दुर्ग से लिखते हैं :**

'**सारिका**' सचमुच बधाई की पात्र है कि हम जैसे व्यस्त ढर्रे में जीने वाले लोगों को आज के साहित्य के संपर्क में रखती है. 'पांच भाषाओं के पाकिस्तान' वाला अगस्त अंक सही में पाकिस्तानी आबोहवा का थर्मामीटर है. . . श्रीमती अनीता औलक ने '**चंद सतरें और**' के माध्यम से राकेश जी के जिस व्यक्तित्व का परिचय दिया है, वह हम लोगों के लिए एक उपलब्धि है, क्योंकि केवल पत्र-पत्रिकाओं में पढ़ कर उनका जो परिचय हम लोगों ने पाया था, वह अधूरा ही था (अब ऐसा लगता है). . . ☐

● **डॉ. जवाहर आजाद, धीर भवन, फगवाड़ा (पं.) से लिखते हैं :**

'**सारिका**' का ऐतिहासिक दस्तावेज! पांच भाषाओं का पाकिस्तान! कथा-यात्रा के इस श्रेष्ठ खंड के प्रस्तुतीकरण पर साधुवाद! अंक की कहानियों में '**कर्ज**' (अहमद नदीम कासमी) सामान्य जन की कहानी है. इसका नायक रहमान मेरे अपने अंदर का आदमी लगा. और '**हस्सू चाचा**' (फारिग बुखारी) में पाठक की पूर्ण सहानुभूति प्राप्त करने वाले पात्र का चित्रण किया गया है. इसे बार-बार पढ़ने को जी चाहता है. '**भाले पर लटकी इनसाफ की तराजू**', '**शंदी गुल**', '**पायदान**', '**कच्चे कोठों का गीत**'–किस-किसकी तारीफ करूं? पाकिस्तान के लेखकों की श्रेष्ठतम् रचनाओं का गुलदस्ता भारतीय पाठकों के समक्ष रख कर '**सारिका**' ने सराहनीय कार्य किया है. ☐

● **श्री उमाशंकर, सहायक, प्रखंड विकास कार्यालय, देसरी, वैशाली (बिहार) से लिखते हैं :**

'**सारिका**' ने आम आदमी की जिंदगी की कुछ खास सामाजिक स्थितियों और उसके जीने की शर्तों के साथ जुड़ी हुई लड़ाई से संबद्ध लेखन को बढ़ावा दिया है. . . अगस्त-अंक मुख्यतया उत्कृष्ट लघुकथांक था. . .और ये लघुकथाएं बराबर याद रहेंगी. 'साहित्य के जरिये पाकिस्तान की मौजूदा आबोहवा का जायजा' के अंतर्गत टिप्पणियां और यात्रा-संस्मरण प्रकाशित करके सराहनीय कार्य किया गया है. कहानियों में लक्ष्मी-नारायण लाल ('आत्मकथन') वैचारिकता के धरातल पर स्वस्थ उगी-अंकुरी है. फारिग बुखारी ('हस्सू चाचा') ने सामाजिकता को उम्दा व्यक्तित्व दिया है. ☐

> ● **श्री राकेश दयाल सक्सेना, मौलाना आजाद कॉलेज ऑफ टेक्नोलॉजी, भोपाल, से लिखते हैं :**
>
> हमारे होस्टल में दो ही चीजों का इंतजार लोगों को सालता रहता है— हर दोपहर लंच की घंटी बजने का और हर माह '**सारिका**' के बाजार में आने का. मुझे होस्टल में रहते पांचवां वर्ष है. तीन साल पहले '**सारिका**' इतनी लोकप्रिय नहीं थी. तीन साल में ही '**सारिका**' होस्टल के प्रत्येक विद्यार्थी की प्रिय पत्रिका बन जायेगी, ऐसा सोचा भी नहीं था. इसकी कहानियां आज के आदमी से इतनी जुड़ी रहती हैं कि तमाम परेशानियों के रहते भी यह हमें एक सांत्वना दे जाती है. . . ☐

सितंबर अंक

● **डॉ. राही मासूम रजा, १०, बैंड स्टैंड, बांद्रा, बंबई-५० से सितंबर अंक में प्रकाशित राजेंद्र सिंह बेदी की. कहानी के शीर्षक की ओर ध्यान आकर्षित किया है. वह लिखते हैं :**

बेदी साहब की कहानी का शीर्षक लिखने में गलती हो गयी है. '**चश्म-ए-बददूर**'—यूं नहीं लिखना चाहिए. फारसी की इजाफत के साथ नाइनसाफी हो गयी. असल में 'बद' और 'दूर' दो अलग-अलग शब्द हैं. और 'बद' चश्म के साथ आया है — 'चश्मे-बद', बुरी नजर. 'चश्मे-बद दूर' यानी बुरी नजर दूर हो या दूर रहे. यानी नजर न लगे. '**सारिका**' में ऐसी गलतियां अच्छी नहीं लगतीं. ☐

● **नयी दिल्ली से सर्वश्री सलीम रुस्तम, अभय तथा रहमान यूसुफ ने सामूहिक पत्र में प्रतिवाद किया है कि :**

काजी अब्दुल सत्तार ने अपने लेख में उर्दू की नवीनतम पीढ़ी को जानबूझ कर नदारद करने की कोशिश की है. उर्दू का कौन अच्छा पाठक यह नहीं जानता कि उर्दू की नवीनतम पीढ़ी के शौकत हयात, हमीद सहरवरदी, कमर अहसन, इस्मोएल अहमद आदि जैसे युवा कथाकार न केवल यह कि जम कर लिख रहे हैं, बल्कि बहुत अच्छा लिख रहे हैं. और कई मायनों में पिछली पीढ़ी के कई नामवर कथा-कारों से बहुत अच्छा लिख रहे हैं. इस अंक में उर्दू के किसी भी नवीनतम लेखक की चर्चा और कहानी न देख कर बहुत निराश हुई, क्योंकि हम तमाम लोग उर्दू के युवा लेखन के सच्चे समर्थक हैं. ☐

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

● हृदयेश्वर

हाजीपुर में समांतर कहानी पर बहस

गत ३१ जुलाई को हाजीपुर नगर के आठ लेखक-लेखिकाओं की एक अनौपचारिक बैठक श्री उमाकांत वर्मा (हिंदी विभागाध्यक्ष, स्थानीय आर. एन. कॉलेज) के निवास-स्थान पर हुई. बहस का विषय था—'समांतर कहानी'. हाजीपुर जैसे छोटे नगर में यह गोष्ठी अपने-आप में एक प्रयोग थी.

बहस का आरंभ करते हुए रतन ने कहा कि यहां सवाल उन विवादों का नहीं है, जो समांतर कहानियों के संदर्भ में कुछ अरसे से पढ़े-सुने जा रहे हैं, बल्कि सवाल उन कहानियों का है, जो समांतर कथा-लेखन का ठप्पा-मुहर दे कर बाजारों में उतारी गयी हैं. ये कहानियां क्या सचमुच जनाकांक्षाओं को रेखांकित कर पाती हैं? या एक विशेष प्रकार के मतवाद को स्थापित करने के उद्देश्य से किसी फार्मूले के तहत 'डिक्टेट' करके लिखवाई गयी वणिक-बुद्धि की कहानियां हैं? विचार कहानियों की रचनात्मकता के स्तर पर होना है.

कहानियों की रचनात्मकता के स्तर पर उन्होंने मधुकर सिंह, इब्राहीम शरीफ, लानी तथा राम अरोड़ा की कहानियों की चर्चा की. जितेंद्र भाटिया की कहानी 'शहादतनामा' की विस्तार से चर्चा करते हुए उन्होंने पूछा कि इसमें लेखक क्या मामूली आदमी की हैसियत से अपने पात्रों को नहीं देख रहा है?

डॉ. उमेशकुमार सिंह को बहस के परिसीमन पर एतराज था. उन्होंने कहा कि रचनाओं पर एक विशेष प्रकार का ट्रेड-मार्क लगाये जाने का मतलब ही है रचनाओं को उसी संदर्भ में पढ़े-परखे जाने का दुराग्रह. कहानियों के दूसरे छद्मों की तरफ इशारा करते हुए उन्होंने कहा कि (क) इनमें जिस मामूली आदमी का जिक्र बार-बार आया है, उसकी तस्वीर हिंदुस्तान के औसत मामूली आदमी की तस्वीर से मेल नहीं खाती. इनमें ग्रामीण परिवेश का प्रायः अभाव है. (ख) जिस रूपवादी फॉर्म के विरोध में ये कहानियां मुखर लगती हैं, उनके बीच भी **'एक और महाश्वेता'** जैसी कहानियां लिखी जा रही हैं. (ग) इनके लेखकों में अधिकांश कॉफी-हाउसों के लेखक हैं. वे स्वयं मामूली आदमी नहीं हैं.

बिंदु सिन्हा के विचार में इन कहानियों ने आम आदमी की सही तस्वीर खींचने के सिवा न तो कोई व्यापक समस्या उठायी है और न कोई नया आयाम ही स्थापित किया है.

हृदयेश्वर ने बहस में हस्तक्षेप करते हुए इस तरह के आक्षेप को पक्षपातपूर्ण बताया. उन्होंने कहा, ये कहानियां आदमी के मामूलीपन तथा समाज के साथ 'अस्तित्व की लड़ाई' के संदर्भ में उसके चौमुखे तनावों का खुला दस्तावेज हैं. इसलिए सवाल सिर्फ ग्रामीण परिवेश के होने-न होने का नहीं है. 'सारिका' के समांतर कहानी अंक—१ से अंक—१० तक की प्रायः सभी कहानियां उद्देश्यों में समान होते हुए भी गुण एवं प्रभाव में निम्न-मध्य-वित्त और 'तीसरी दुनिया' से जुड़े अनेक प्रश्नाहत आसंगों की कहानियां हैं. इनमें से प्रत्येक कहानी का अपना अलग टैंपो है, उसकी अपनी प्रयोजनीयता है.

प्रभा सिंह इन कहानियों के बदले हुए तेवर, उनके सहज शिल्प और आम जनोन्मुखता को ले कर काफी उत्साहित नजर आयीं. उन्होंने कहा कि समांतर कहानियां केवल आम जन की नहीं, बल्कि समग्र जन-जीवन की पीड़ा, विसंगति, विडंबना और संघर्ष की सही तस्वीर प्रस्तुत करती हैं. सुदीप की कहानी **'अंतहीन—दो'** की चर्चा करते हुए उन्होंने कहा कि इस कहानी के पात्र [illegible] और अन्याय को बड़ी गहराई तक महसूसते और भोगते नजर आते हैं.

उमाशंकर बहुत अंशों में प्रभा सिंह के विचारों के साथ होते हुए भी अपनी इस जिद पर अडिग थे कि इस समांतर शब्द में आंदोलन की बू है.

रत्नेशकुमार ने उमाशंकर जी के विचारों को दुराग्रहपूर्ण तथा उनके इस नजरिये को अतिवादी बतलाया. उन्होंने कहा कि विदेशी शिल्प, नकली भाषा और गंधाती कला-सौंदर्य की लीक से अलग ये कहानियां लिखी जा रही हैं और अपना प्रतिमान स्वयं ही हैं. यह समांतर कहानी कोई आंदोलन नहीं है, बल्कि मामूली आदमी की लड़ाई में शामिल उसके अपने ही लेखक के रचनागत सरोकारों का धारदार आलेख है. समांतर लेखक, मूल अर्थ में अपने आहत आदमी और उसकी तमाम मूर्त-अमूर्त तकलीफों में स्वयं भी शामिल है. **'सारिका'** की प्रायः सभी कहानियों में यह तादात्म्य देखा जा सकता है. इनमें कथाकारों और पात्रों के बीच उनकी अलग-अलग पहचान के लिए कोई समीकरण नहीं ढूंढ़ा जा सकता. . . . जैसे कमलेश्वर जी ने ही लिखी है **'लाश'** और **'फालतू आदमी'** से अलग हट कर **'इतने अच्छे दिन'**. **'सारिका'** की कहानियां बिगड़े हुए स्वादों को बदलने में काफी सफल सिद्ध हो रही हैं.

बहस का समापन करते हुए प्रो. उमाकांत वर्मा ने गोष्ठी-आयोजकों को उनके इस सुंदर और रचनात्मक प्रयास के लिए साधुवाद दिया और हाजीपुर में एक 'समांतर लेखकीय मंच' की आवश्यकता पर बल दिया. उन्होंने कहा कि समांतर लेखन एक बहुत ही सार्थक एवं स्वस्थ प्रयोग-दिशा है. देखना सिर्फ यह है कि आम आदमी की तकलीफों में उसके समांतर लेखक की यह साझेदारी कहां पर जा कर बिल्कुल खत्म हो जाती है और सिर्फ तादात्म्य बच रहता है. □□□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गणिका-जीवन: कुछ अपरिचित आयाम—विशिष्ट खंड

● पी. सी. कुंडलिया

यह बात सचमुच बड़े ताज्जुब की है कि गणिका-जीवन के जितने आयामों से हम परिचित होते जाते हैं, उनसे कहीं अधिक आयामों से अपरिचित होने का एहसास भी हमें होता रहता है.

गणिका या वेश्या एक ऐसा विषय है, जिसे ले कर दुनिया भर के लेखकों ने कुछ-न-कुछ लिखने की कोशिश जरूर की है. बल्कि अक्सर इसे चुनौती के रूप में स्वीकार किया है. हर बार, हर रचना के माध्यम से गणिका-जीवन का कोई-न-कोई नया अंग, कोई-न-कोई अनछुआ रंग, कोई-न-कोई अपरिचित पहलू सामने आया है— फिर भी ऐसा नहीं पाया है कि लगे कि अब उसके बारे में लिखने को कुछ भी शेष नहीं रह...

★ ★

'सारिका' अपने पाठकों को दो गणिका-विशेषांक पहले भी दे चुकी है (नवंबर, १९७३ और जनवरी, १९७४). इस अंक में दिया जा रहा विशिष्ट खंड इन दोनों विशेषांकों में छूटे रह गये अनेक रिक्त स्थानों को तो भरता ही है, अपने आप में भी स्वतंत्र और पूर्ण है. इस विशिष्ट खंड में एक बार फिर आदिकाल से ले कर अब तक के गणिका-जीवन पर दृष्टि-पात की कोशिश की जा रही है. साथ ही इस अंक में कुछ एकदम ताजा विश्लेषणात्मक रचनाएं भी दी जा रही हैं.

गणिका -जीवन से संबंधित रचनाओं के इस विशिष्ट खंड का चित्रांकन युवा चित्रकार टी. ए. राणा ने विशेष रूप से किया है. राणा का नाम 'सारिका' के पाठकों के लिए नया नहीं है. उनकी अपनी विशिष्ट शैली है और रेखाओं का उनका प्रयोग एकदम अनूठा है.

प्राचीन काल में गणिका

वेदों में वेश्याएं

★ जिस प्रकार युवक साधारण्याओं के साथ मनचाहा आचरण करता है, उसी प्रकार श्वेत आयुधधारी मरुतगण मनचाहे स्थानों में निवास करते हैं. (ऋग्. १।१६७।४)

★ तरुण कामी पुरुष जिस प्रकार अपना समस्त द्रव्य परस्त्री को दे देता है उसी प्रकार ऋभृष्य ने मुझे एक सौ एक भेड़े काट कर दे दिये. (ऋग्. ८।११७।३)

★ जिस प्रकार कोई स्वेच्छाचारी, लंपट पुरुष धन को अनुपयुक्त स्थान में त्याग देता है, इस तरह का व्यवहार तू हमारे साथ मत करना. (ऋ ग्० ७।१०४।५) □

यूनान की वेश्याएं

★ एथेंस के शासक हर्मोडियस की रखैल या उपपत्नी लीना नाम की वेश्या थी. एक बार उस वेश्या के कुछ मित्र राजकीय षड्यंत्र में शरीक हो गये. लीना ने इस भय से कि कहीं मित्रों का नाम उसके मुंह से न निकल जाये, अपनी जबान ही काट डाली. □

★ पुरातन ग्रीस की प्रसिद्ध वेश्या ली मूलत: सिसीली की थी. युद्ध में बंदी बना कर वह एथेंस में बेचने के लिए लायी गयी. वह पानी भर रही थी तो तत्कालीन चित्रकार एमेल ने शरीर सौष्ठव देख कर मुग्ध हो गया और खरीद लिया. नृत्य, कला, वाक्चातुर्य आदि की शिक्षा दे कर कोरिंथ नामक बंदरगाह में उसका वेश्यागृह खुलवा दिया. कोरिंथ में उन दिनों सभी कोटि की वेश्याओं के आलय थे और वह वेश्या वृत्ति का प्रसिद्ध केंद्र था.

ली बड़ी ही अहंकारिणी थी. उसने उस समय के सुप्रसिद्ध दार्शनिक डिमोस्थिनीज की सारी संपत्ति को ठोकर मार दी और डायोजिनीज नामक बदसूरत और फटेहाल दार्शनिक को अपना लिया था.

कोरिंथ के नागरिकों ने उसकी प्रतिमा नगर के चौराहे पर स्थापित करने का फैसला किया. मीरोन नामक वृद्ध मूर्तिकार को मूर्ति बनाने का काम सौंपा गया. रोज सामने बिठा कर मूर्ति गढ़ते-गढ़ते मीरोन उस पर अनुरक्त हो गया. ली को पाने के लिए उस बूढ़े मूर्तिकार ने अपनी जीवनभर की संचित संपत्ति उसके चरणों में रख दी. ली ने आंख उठा कर देखा भी नहीं. मीरोन भी हार मानने वाला न था. बालों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

रंग-ढंग कर युवक के वेश में प्रेम की भिक्षा मांगने पहुंच गया. ली को ताड़ते देर न लगी. नाक चढ़ा कर बोली-- वाह बेटा, कल तेरे पिता को जिसके लिए इनकार कर चुकी वही मांगने तू आज आया है!

मगर इस ली को एक बार बुरी तरह मुंह की खानी पड़ी थी. अफलातून (प्लैटो) के शिष्य जेनो क्रोटीस की जितेंद्रियता और संयम की बड़ी धूम थी. ली ने उसे स्खलित करने का बीड़ा उठाया. बरसती रात में उसके यहां पहुंची और आश्रय मांगा. जेनो क्रोटीस ने उसे आश्रय दे दिया. अब वह लगी उसे लुभाने. पुरुष को लुभाने के तमाम हथियार इस्तेमाल कर डाले, यहां तक कि निर्वस्त्र भी हो गयी. परंतु जेनो क्रोटीस पर कोई प्रभाव न पड़ा. तब ली बुरी तरह खिसिया कर यह कहती हुई वहां से चल दी, मैं आदमी के हृदय को विचलित करने आयी थी पत्थर के हृदय को विगलित करने नहीं. □

वाल्मीकि रामायण--बालकांड

महर्षि विश्वामित्र के कठोर तप करने से इंद्र सहित समस्त देवताओं में बड़ी खलबली मच गयी. वे लोग बहुत घबराये. तब इंद्र ने रंभा नाम की अप्सरा को देवताओं के हित में उनका तप खंडित करने का आदेश दिया.

रंभा डर गयी और लजा कर बोली-- हे सुरेंद्र, विश्वामित्र बड़े क्रोधी हैं, उनके समीप जाते ही वे मुझे शाप दे देंगे.

इंद्र ने उसे आश्वस्त करते हुए कहा-- डरो मत! मैं स्वयं कोकिल पक्षी बन कर कामदेव के साथ, किसी सुंदर वृक्ष पर तुम्हारे आसपास ही रहूंगा.

उसने शृंगार किया और मंद-मंद मुसकाती हुई विश्वामित्र को लुभाने चली. कोयल की मधुर कूक सुन कर विश्वामित्र ने प्रसन्न हो कर रंभा की ओर देखा. लेकिन उन्हें संदेह हो गया. समझते देर न लगी कि यह इंद्र का षड्यंत्र है. फौरन क्रोधित हो कर रंभा को शाप दिया कि हे दुर्भगे, तू दस हजार वर्ष तक शिला हो कर रहेगी.

विश्वामित्र के महाशाप से रंभा शिला हो कर गिर पड़ी. □

तीन गणिकाएं

हिंदू

ग्राहकों की प्रतीक्षा में मिथिला नगर की एक गणिका पिंगला आधीरात तक जागती रही. लेकिन एक भी पुरुष उसके घर नहीं अया. धन की लालसा पूरी नहीं हुई तो उसे अपने शरीर, अपने लावण्य और अपने व्यवसाय से वैराग्य हो गया. उस दिन से उसने निश्चय कर लिया : 'आज से किसी पुरुष की ओर आंख उठा कर भी नहीं देखूंगी.' □

बौद्ध

अर्धकाशी वाराणसी के एक प्रसिद्ध श्रेष्ठि की पुत्री थी. पिता ने उसे खूब पढ़ा-लिखा कर नृत्य-गीत में पारंगत किया. धन की तो उसे आवश्यकता थी नहीं; वैवाहिक जीवन उसे रुचिकर नहीं हुआ; अंत में उसने गणिकावृत्ति को अपना लिया.

रूप, गुण और योग्यता में वह इतनी बढ़ी-चढ़ी थी कि उसने अपने देह उपभोग का एक रात का मूल्य काशीराज की एक दिन की आय के बराबर रखा. इतनी भारी कीमत दे कर उसके यहां शायद ही कोई जा पाता था: इसलिए उसने अपना मूल्य घटा कर आधा कर दिया, और तभी से 'अर्धकाशी' कहलाने लगी.

अकस्मात् बौद्ध धर्म में उसकी रुचि जाग्रत हुई. बहुत-सी संपत्ति दान-पुण्य में खर्च कर शेष धन अपने साथ ले कर उसने काशी से श्रावस्ती जाने का निश्चय किया.

काशी से चलते ही खबर मिली कि डाकुओं का दल उसे रास्ते में लूटने को तैयार है. अर्धकाशी ने यात्रा स्थगित कर दी. उसने भगवान बुद्ध को सूचना दी. उन्होंने एक महातपस्वी विद्वान भिक्षु को भेज कर उसे काशी में ही दीक्षा दिला दी. कालांतर में अपने समय की श्रेष्ठ भिक्खुणी हुई. □

(जातक कथा)

जैन

गुणवती अपने समय की श्रेष्ठ गणिका थी. रूप-सौंदर्य में जितनी अनुपम, वाणी, व्यवहार और आचरण में भी उतनी ही श्रेष्ठ. उसके यहां राजपुत्रों, अमात्यपुत्रों और श्रेष्ठिपुत्रों का तांता ही लगा रहता था.

खाली हाथ लौटने वाले अपने हर प्रेमी से वह गणिका अनुरोध करती--आप मुझे त्याग रहे हैं, कोई बात नहीं. लेकिन मुझ-जैसी गुणहीना का कोई स्मृतिचिन्ह तो लेते जाइए.

और स्मृतिचिन्ह स्वरूप जो भी आभूषण उसका प्रेमी मांगता वह सहर्ष उसे दे देती थी.

एक श्रेष्ठिपुत्र ने चलते समय गुणवती से उसका पंचरत्न जटित महामूल्यवान भुजबंद मांग लिया. गणिका ने निस्संकोच उतार कर दे दिया.

वह श्रेष्ठिपुत्र रत्नों का पारखी था. भुजबंद के रत्नों से हीरों का व्यापार कर वह पुनः धनवान हो गया और अपने देश लौट कर अनेक वर्ष सुखपूर्वक रहा. □

('वसुदेह हींडी' -- दम्यपुत्रका कथानक)

(प्रस्तुतकर्ता : श्यामू संन्यासी)

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सफेद घोड़ा

• अहमद नदीम कासमी

यह इलयास का फोन था.

मैंने कहा— मैं अभी आया, वहीं अपने पुराने होटल में ठहरे हो न?

इलयास की आवाज आयी— ठहरा भी वहीं हूं, और बोल भी वहीं से रहा हूं. मगर तुम अभी न आओ, इस वक्त मैं एक दफ्तर जा रहा हूं, बहुत जरूरी काम है. लाखों का मुआमला है, इसीलिए हवाई जहाज से आया हूं और कल हवाई जहाज से वापस पिंडी चला जाऊंगा, तुम शाम को आना, आठ बजे, बल्कि साढ़े सात बजे, और रऊफ, सुनो, अब तो तुम और भी बड़े अफसर हो गये हो. आजकल तुम्हें कौन-सा ब्रांड पसंद है?

मैंने जवाब दिया— वही, जिसकी तुमने मुझे लत डाली है— सफेद घोड़ा!

इलयास बोला— बस ठीक है, सफेद घोड़ा भी होगा और सफेद घोड़ी भी!

मैंने बन कर कहा—— यह कोई नया ब्रांड है क्या?

और वह इतने जोर से हंसा और हंसता चला गया कि मजबूरन मुझे भी हंसना पड़ा वरना मैं ऐसी बातों पर शायद ही हंसता था. मैं हंसा तो वह समझ गया कि सफेद घोड़ी का मफहूम पा लिया है, इसलिए वह बोला—खफा तो नहीं हो गये? फिर हंसते हुए कहने लगा—यार तुम अब तक उल्लू के उल्लू ही रहे?

मैंने कहा— खैर यह तो शाम को तय करेंगे कि हम में बड़ा उल्लू कौन है!

वह बोला— बहुत अच्छा, तो फिर साढ़े सात बजे तय?

मैंने कहा— तय!

* *

सवा सात बजे इलयास के होटल पहुंचा तो वह नहा रहा था. मैंने कहा—यह कौन सा वक्त है नहाने का?

वह गुसलखाने में से बोला— अरे तुम्हें अब तक खबर नहीं? मैं तो गुसल करके व्हिस्की पीता हूं. मेरी छोटी अटैची रखी है न, उसे खोलो, उसमें तुम्हारा सफेद घोड़ा बंद है!

मैंने अटैची से व्हाइट हार्स की बोतल निकाल कर मेज पर रखी तो वह तौलिया लपेट कर बाहर निकला.

फिर इधर से इलयास बड़े कमरे में दाखिल हुआ, उधर से होटल का एक संजीदा और बाविकार बैरा आया. बहुत नेक आदमी लगता था, बस माथे पर सहराब की कमी थी. वह इलयास की तरफ देख कर मुसकराया. . . उसकी मुसकराहट ने उसकी सारी शख्सियत बदल डाली.

उसने आंख मार दी और फिर दरवाजे का पर्दा यूं उठा जैसे छुरा निकला हो. . .

पहले एक औरत अंदर आयी. यह बड़ी तनदुरुस्त औरत थी. खून इसके पूरे चेहरे में से फूटा पड़ रहा था, यह खून इसकी आंखों में भी चमक रहा था और इसकी हथेलियों में भी. इसके जिस्म का बाकी हिस्सा ढंका था मगर मुझे यकीन था कि वह भी लहूलहान होगा.

एक कदम अंदर आ कर इसने हमें एक नजर देखा फिर इलयास का रुख करके इसने अपनी आंखें झुकायीं और सलाम के तौर पर सर को जरा-सा खम किया. फौरन बाद वह पलट कर सरगोशी में बोली— आ भी जाओ न बिल्कीस!

औरत ने इलयास से कहा— नई नवेली है, डरती है! फिर दरवाजे में गयी— बेवकूफ हो तुम, बिल्कुल देहातन! अब ऐसा भी क्या, आ जाओ बिल्लो!

इलयास ने तकिये के नीचे से बटवा उठा कर सौ के नोटों में से एक नोट निकाला और दरवाजे के पास जा कर बोला—ये लीजिए मेरे कमरे की देहलीज उलांघने का नजराना!

औरत ने फौरन इलयास के हाथ से नोट ले लिया और बोली—अब तो आना ही पड़ेगा बिल्लू! ये लो! उसने नोट वाला हाथ आगे बढ़ाया मगर फिर उसे तह करके मुठ्ठी बंद कर ली और सरगोशी में बोली— अरी पगली, होटल का मुआमला है. चलो अब जल्दी से आ जाओ. एक घंटा से जो मैं तुम्हें समझा रही थी तो क्या उसका तुम पर यही असर हुआ? बेवकूफ! फिर उसने बाहर बिल्कीस को जैसे धक्का दे दिया.

बैरे ने परदा गिरा दिया तो इलयास बोला— देखो सिराज, कुछ मेज दो, कबाब और तिक्के, क्यों ठीक है? उसने मुझसे पूछा. मगर जवाब औरत ने दिया— जरा तेज मिर्चों वाले कबाब हों, समझे भाई सिराज!

सिराज चला गया. इलयास ने बढ़ कर चिटखनी चढ़ा दी और बोला— तशरीफ रखिए!

सब बैठ गये. बिल्कीस भी. पर उसने बुर्के की नकाब

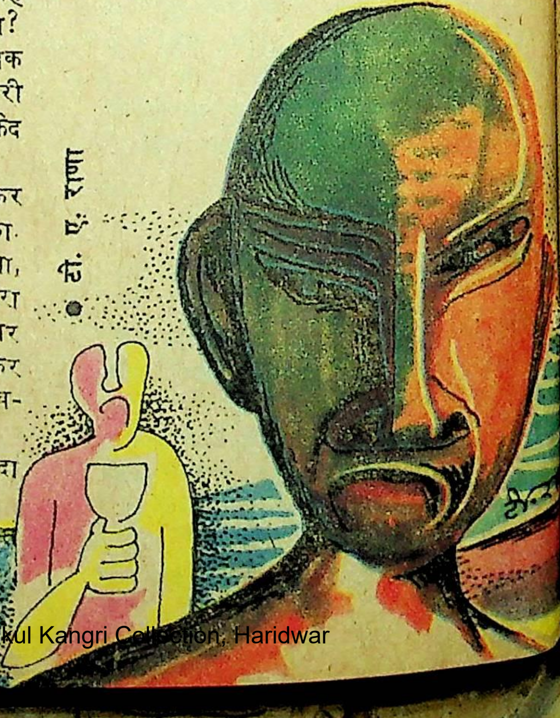

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गिरा रखी थी.

—यह मेरी अजीब दीवानी बेटी है. आपने अभी इसका चेहरा तो नहीं देखा, पर इसका कद पसंद है न आपको?

इलयास बोला—— जी हां, सुब्हानल्ला!

मैंने झटके के साथ पलट कर उसको देखा. इतने प्यार और पवित्र शब्द उसने कितने गंदे लहजे में अदा किये थे. वह हंसने लगा और बोला—— ये मेरे दोस्त बड़े शर्मीले! इनसे कसम ले लीजिए जो इन्होंने आज तक किसी औरत को छुआ भी हो. इनका नाम रऊफ है मगर आप उन्हें मर्दों की बिल्कीस समझ लीजिए!

औरत बे अख्तेयार हंसने लगी. वह इतनी हंसी कि उसकी आंखों में आंसू आ गये. फिर उसने बुर्का उतार कर सोफे की पुश्त पर डाल दिया. तौबा! वह किस बाला की सेहतमंद औरत थी!

—सुन लिया बिल्कीस! औरत बोली—— जरा-सी भी हया हो तो अब बुर्का उतार दो. नहीं उतारोगी तो मैं तुम्हें औरतों की रउफ कहने लगूंगी! अबके इलयास बेअख्तयार हंसने लगा.

दरवाजे पर जैसे किसीने उंगली के जोड़े से दस्तक दी इलयास ने दरवाजा खोला. सिराज ट्रे में कबाब और तिक्के सजा कर लाया और मेज पर रख कर बोला—— और कोई हुक्म!

—जरूरत पड़ी तो मैं घंटी बजा दूंगा. इलयास ने कहा. सिराज वापस जाते हुए रुका. पहले बिल्कीस की तरफ देखा, फिर इलयास को वही खौफनाक आंख मार कर बोला—— यूं कब तक बैठे रहेंगे साहब, 'मुंह दिखाई' दीजिए और फिर—— और फिर तिक्के खाइये.

और सिराज चला गया तो उसने दरवाजा बंद करके पर्दा खींच कर, बटुवे में से सौ का एक और नोट निकाल कर दोनों हाथों में यूं रखा जैसे तश्तरी में सजाया है. औरत ने नोट को तह किया और पहले नोट समेत उसे ब्लाउज में उड़स कर मुसकरायी! सर को यूं जुंबिश दी जैसे इजाजत दे रही है. . . इलयास पलटा और उसने बिल्कीस की नकाब उलट दी. . .

वह बड़ी अजीब-सी लड़की थी. अजीब यूं कि कुछ ऐसी खूबसूरत तो नहीं थी मगर खूबसूरत लगती थी. उसका रंग बहुत सफेद था. मगर मैंने उसके चेहरे को देख कर सोचा कि उसमें कुछ कमी रह गयी है. अलबत्ता इस सवाल का कोई जवाब मेरे पास नहीं था कि कमी कहां रह गयी है.

नकाब उलटते ही उसने कनखियों से औरत की तरफ देखा तो वह बोली—— लो ऐसी वाहियात शर्म भी क्या? मैंने घर से चलते हुए बता नहीं दिया था कि अपने आदमी हैं.

इलयास ने तिपाई उठा कर बिल्कीस के सामने रखी. फिर व्हाइट हार्स की बोतल और चार गिलास रखे. बिल्कीस पहली बार बोली—— जी मैं तो इस नेमत से महरूम हूं. इलयास ने इहतेजाज किया—— इस नेमत से तो रऊफ जैसा उल्लू भी महरूम नहीं है.

औरत ने इलयास की बात कही—— सिराज ने कहा कि आपको ताजा माल चाहिए. मैंने उससे कह दिया था कि बिल्कीस बेचारी आज पहली बार किसी होटल में जायेगी इसे क्या पता कि ये सब क्या होता है. तिपाई यहां मेरे पास लाइए. मगर इलयास उठ कर औरत और बिल्कीस के दरमयान बैठ गया और बिल्कीस की ठोड़ी के नीचे से बुर्के की डोरी की गिरह खोलते हुए बाकायदा गाने लगा——

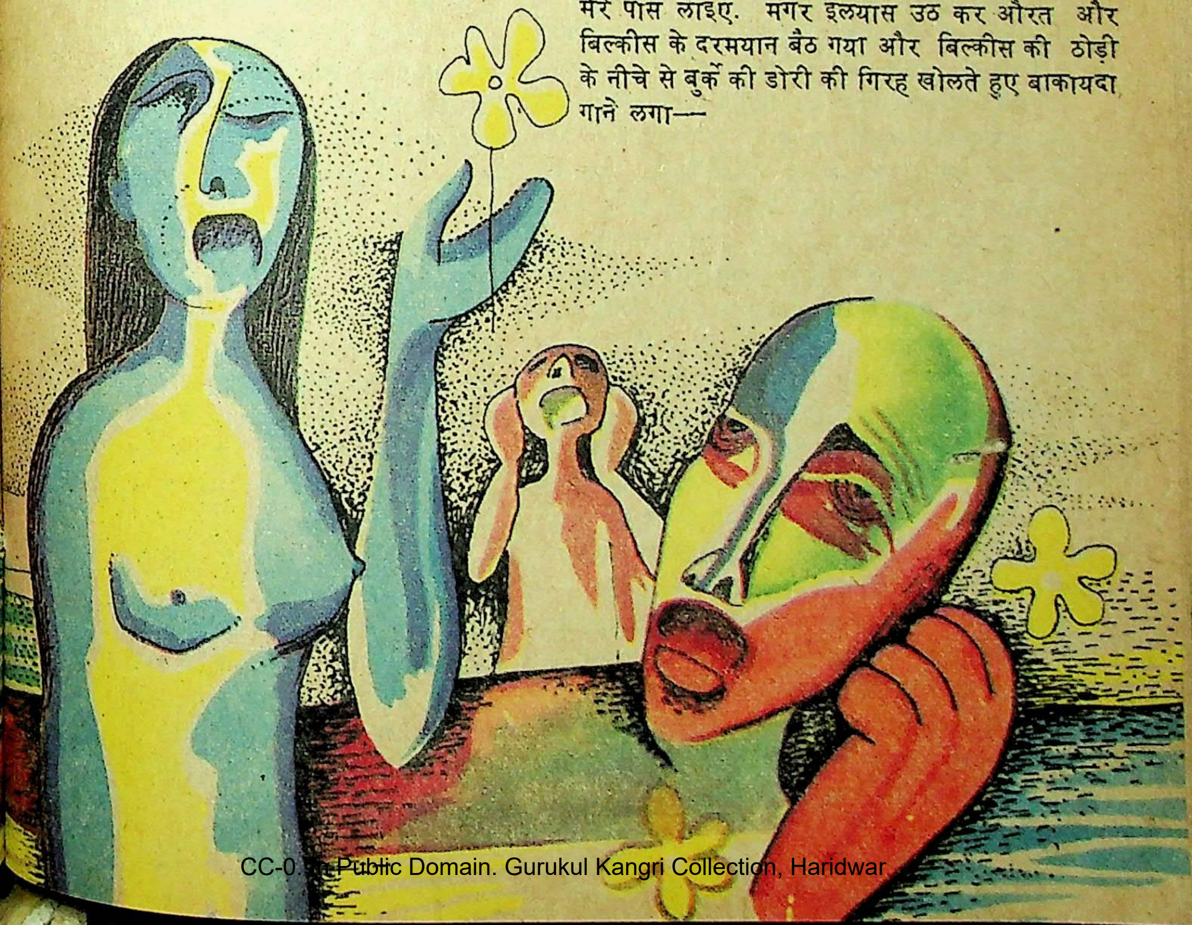

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साकीगरी की शर्म करो वरना आज हम,
हर शब पिया ही करते हैं मय जिस कदर मिले!

—मुझे तो कोई स्क्वाश ही पिला दीजिए! बिल्कीस ने बच्चों की तरह फरमाइश की. और जब तक इलयास घंटी बजाने के लिए उठता, मैंने कहा—मैं लाता हूं.

—हांय! औरत चहकी—रऊफ साहब तो बोलते हैं! उसके अलावा, इलयास और बिल्कीस भी हंसी. और बिल्कीस को हंसता हुआ पा कर इलयास जोर से हंसा और मैं बाहर निकल आया. सिराज को स्क्वाश भिजवाने को कहा और वहां से घर की राह ली.

★ ★

यह लड़की मेरे जेहन पर मुसल्लत हो गयी थी.

इलियास के यहां यूं तो मैंने बहुत-सी औरतें देखी थीं. उनकी सूरतें मुख्तलिफ थीं, मिजाज भी मुख्तलिफ थे, मगर मुसकराहट के मामले में वे सब एक जैसी थीं. मुसकरातीं तो लगता था कि वे मुसकराहट बाजार से खरीद कर लायी हैं. वह शर्माती थीं, तो मालूम होता था कि उन्हें बड़ा तकल्लुफ करना पड़ रहा है. मगर यह लड़की तो ऐसी लड़की थी जैसी मुतवस्सत तबके के घरों में होती हैं— मासूम, बेखबर और राजी ब रजा! मुझे इलयास पर गुस्सा तो कई बार आया था मगर नफरत आज पहली बार महसूस हुई.

जब चंद बरस पहले मैंने बड़ी कोशिशों से उसे आटे और चीनी का डिपो दिलवाया था, तो वह कितना प्यारा आदमी था. बस कभी कभार शराब पीता था. और सहगल की तर्ज में गाने और गालिब की गजलें गाता था. आवाज बहुत रसीली थी. इसलिए महफिले मौसीकी में मदऊ किया जाने लगा. और उसीकी वजह से मुझे भी शराब की लत पड़ी गयी. फिर ऊंचे तबकों की महफिलों में शिर्कत की. बर्कत से उसे चंद लाख का दरामदी (इम्पोर्ट) लाइसेंस मिल गया और थोड़े ही अर्से में कई लाख नकद की आसामी बन गया. वह पिंडी चला गया और वहीं अपना सदर दफ्तर कायम किया. अब वह लाहौर और कराची में बाज मिलें लगाने लगा. उन्हीं दिनों वह एक बार लाहौर से पिंडी आ गया तो मुझे उसी होटल में मदऊ किया और वहीं पहली बार मुझे मालूम हुआ कि वह अब शराब के अलावा औरत से भी शौक करने लगा है. लाहौर में उसकी तीसरी या चौथी आमद पर मैंने उसे समझाने की कोशिश की कि शराब की हद तक तो ठीक है कि तुम जिस सोसाइटी में घूमते हो उसमें शराब न पियोगे तो बदतहजीब कहलाओगे और कारोबार को भी नुकसान पहुंचाओगे, मगर यह औरत वाला किस्सा छोड़ो. औरत किसी-न-किसी की बीवी, बेटी या मां जरूर होती है और ये रिश्ते हमारे लिए आज भी मुकद्दस हैं. सो तुम यूं करो कि शादी कर लो.

इस पर उसने मुझे इतला दी कि उसने शादी कर ली है. और उसकी एक प्यारी-सी बीवी है, तीन बच्चे हैं. और फिक्र न करो रऊफ, मेरी बीवी पुराने जमाने की औरत नहीं है. मैं उसे हर महीने दो हजार रुपये नकद पेश कर देता हूं और उसके बदले में उसने मुझे हर बात की इजाजत दे रखी है. मैंने सोचा, सिर्फ जेब के भारी या खाली होने से कदरें कैसे बदल जाती हैं?. . .चुनांचे मैं चुप[?] रहा. मगर जब भी गुफ्तगू में उसके घर का जि[क्र] आया तो मैंने उसकी बीवी के बारे में तुम्हारी बीवी क[ह] कर बात की, 'भाभी' न कह कर; क्योंकि भाभियां अप[ने] शौहरों को हर रात एक नयी औरत का इंतजाम क[र] लेने की इजाजत नहीं दिया करतीं!. . .मैंने शायद जमीर को मुतमइन करने के लिए यह फलसफा गढ़ लि[या] था कि इलयास अगर अय्याश है तो उसकी अय्याशी सिर्फ ऐसी औरतों तक महदूद है जो इलयास के पास नहीं आयेंगी तो किसी और के पास चली जायेंगी सो है तो यह खराब बात, मगर कुछ ऐसी भी खरा[ब] नहीं है कि मैं इतने अच्छे दोस्त से नफरत करने ल[गूं] मगर बिल्कीस को देख कर मुझे यकीन हो गया था कि इलयास अय्याशी की हदें फांद गया है और मैंने तो पागलों को भी देखा है कि थूकना चाहेंगे, और साम[ने] फूलों से लदी झाड़ी होगी, तो उससे हट कर थूकेंगे! जिंदगी में पहली बार मुझे यकीन हो गया था कि इल[]यास दरअसल कमीना आदमी है.

खासी देर पलंग पर करवटें बदलने के बाद मैं ए[क] दम उठा और चप्पल घसीटता हुआ बाहर लपका. मैं[ने] एक टैक्सी रोकी और कहा कि वह जितनी तेज च[ला] सकता है चलाये, मैंने ड्राइवर से मीटर से ज्यादा र[कम] देने का वायदा किया. और कार इलायास के होटल [की] तरफ उड़ने लगी. मैंने बड़ा जुल्म किया था कि उ[स] लड़की को इलयास के कमरे में दाखिल होते ही खबर[दार] न कर दिया था. इलयास यकीनन बुरा मानता मगर वह मेरी नियत पर शक न करता. होट[ल] के सामने टैक्सी रोक कर मैंने दो गुना किराया अ[दा] किया. और ऊपर लपका मगर सीढ़ियों ही में सिरा[ज] मिल गया. वह तिक्कों और कबाबों की खाली प्लेटें [ले जा] रहा था. मुझे देखा तो वही शैतानी मुसकराहट उस[के] होठों बल्कि उसके सारे चेहरे पर कूदी. फिर वह बोला—साहब तो बीवी को ले कर अभी कहीं चले गये हैं. मैं[ने] पूछा—कहां? वह हंस कर बोला—भोले बादशाहो, [ये] भी कोई बताने वाली बातें होती हैं?

घर आ कर मैंने इलयास को एक तवील खत लि[खा] जिसमें उसे कमीना, खबीस और जलील तक कह डा[ला] मैंने उससे हमेशा के लिए ताल्लुक तोड़ लिया औ[र] उसे खबरदार किया कि वह आइंदा मुझसे मिलने [की] कोशिश न करे. मैंने लिखा—मैं तुम जैसे खिला[फ] बाख्ता बदकर यारों पर लानत भेजता हूं!. . .जाहि[र] है इसके बाद इलयास से मेरी कभी मुलाकात नहीं हु[ई] फिर मेरा तबादला लाहौर से कराची हो गया और मैं पिंडी से दूर हो गया. कराची में मैं पहले रोज अप[ने] स्टाफ से जब मिला तो उस सफ में अपने एक पुरा[ने] दोस्त और हमजमाअत मुश्ताक को भी खड़ा पाया. वह इस दफ्तर में मेरा हेड कलर्क था. शाम को उसने दाव[त] पर मुझे अपने घर बुलाया और जब सब 'मोअजजा[ने] शहर' से मेरा तआरुफ करा चुका तो अलमारी से दो व्हाइट हार्स की बोतलें निकाल कर हम सब के साम[ने] पीने बैठ गया. हैरत हुई. मगर शराब का हद तक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बड़ा फराख दिल हूं, सबको मुआफ कर देता हूं. उसे भी माफ कर दिया. फिर जब खाने के बाद सब मेहमान चले गये तो वह बोला—आप दूसरा शौक भी यकीनन फरमाते होंगे?

—दूसरा शौक?

और जवाब में मुश्ताक यूं मुसकराया कि मैंने एक पल के लिए सोचा कि कहीं मुश्ताक के रूप में यह लाहौर का बैरा सिराज तो नहीं है. वह उठा और बोला : मैंने यह इंतजाम भी कर रखा है! उसने साथ वाले कमरे का दरवाजा खोला तो खुश्बू से लदी हुई एक औरत मटकती मुसकराती हुई अंदर आ गयी. मैंने समझा यह मुश्ताक की बीवी है इसलिए मैं अदब से खड़ा हो गया. फिर मैं सोफे पर बैठा तो मुश्ताक वही सिराज वाली मुसकराहट के साथ बोला—शौक फरमाइये! इसके साथ ही वह औरत खिसक कर मेरे साथ लग कर बैठ गयी. . . मेरा जिस्म जैसे बिजली के नंगे तार से छू गया! मैं तड़प कर उठा तो औरत और मुश्ताक बहुत जोर से हंसे मगर मैं जब मुश्ताक को बराबर गालियां देने लगा तो औरत तीर की तरह कमरे में घुस गयी और मुश्ताक मुझसे माफियां मांगने लगा.

दूसरे रोज मैंने जान बूझ कर दस मरतबा मुश्ताक को अपने दफ्तर में बुलाया. मगर उसने मुझसे आंखें ही न मिलायीं. वह मुझसे शर्मिंदा था इसलिए उसे यह पता ही न चला कि मैं उससे कहीं ज्यादा शर्मिंदा हूं! मैं बोला—मैं भी तो तुमसे बहुत शर्मिंदा हूं! और तुमसे भी ज्यादा उस बेचारी औरत से शर्मिंदा हूं. वह भी क्या सोचती होगी कि किस बदतमीज से साबका पड़ा. औरत चाहे कैसी भी हो उसका एहतराम करना चाहिए. और कल मैंने बड़ी बदतमीजी, बड़े उजड्डपन का मुजाहरा किया. दरअसल यह शराब इंसान को भी सफेद घोड़ा बना देती है. तुम तो खैर मेरे पुराने दोस्त हो तुम्हें तो मैं कान मरोड़ कर भी मना लूंगा. मगर किसी तरह मुझे उस औरत के पास ले चलो, मैं उससे माफी मांगूंगा.

वह बहुत कमाल की औरत निकली, उसने मुझे फौरन माफ कर दिया. फिर वह मुश्ताक की मौजूदगी ही में मुझसे लिपट कर रोने लगी और बोली—मुझे तो पहली ही नजर में आपसे मोहब्बत हो गयी और जाहिर है इस फिकरे के खत्म होने के फौरन बाद मुझे भी उससे मोहब्बत हो गयी! . . .

फिर अचानक वह औरत कहीं अंदरूने सिंध चली गयी और वहां किसी बड़े जमींदार से बाकायदा अकद (निकाह) कर के पर्दे में बैठ गयी. मैंने दफ्तर से छुट्टी ली और मशरकी पाकिस्तान के किसी इंतहाई मशरकी गोशे में तबादला कराने का प्रोग्राम बना लिया. मगर भला हो मुश्ताक का कि वह मेरी मदद को पहुंचा. उसने मेरे तबादले के प्रोग्राम को मंसूख करके हर रात एक नई औरत का प्रोग्राम मुरत्तब किया और प्रोग्राम पर अमल करके मैंने अपनी मोहब्बत की नाकामी के सब जख्म मुंदमिल कर लिये.

★ ★

एक दिन मुश्ताक ने एक बहुत अमीर कारोबारी के मुताल्लिक बताया—अर्से से उसका काम अटका हुआ है, आपकी कलम की एक जुंबिश से यह काम हो सकता है. मुझसे कई बार कह चुका है मगर न कोठी की बात करता है न कार की. कहता है, साहब से कहो मैं अछूते से अछूता माल पेश करने को तैयार हूं! . . . मैंने कहा—कारों, कोठियों को मारो गोली, बहुत जमा हो चुकी हैं. तुम आज ही उससे बात करो कि साहब मान गया है.

शाम को मुश्ताक बड़ी संजीदा व बाविकार सूरत लिये मेरे कमरे में आया तो मैं मेज पर व्हाइट हार्स की बोतल लिये बैठा था. फिर उसने सिराज की तरह मुझे आंख मारी और परदा उठा दिया. पहले एक औरत अंदर आयी. यह बहुत ही तंदुरुस्त औरत थी. खून इसके चेहरे से फूटा पड़ रहा था, यह खून उसकी आंखों में भी चमक रहा था और उसकी हथेलियों में भी! उसने मेरी तरफ देखा और लमहा भर के लिए जैसे जम कर रह गयी! मगर फिर फौरन ही उसने आंखें झुकायीं, सलाम के लिए सर को जरा खम किया और जैसे सरगोशी में बोली—आ भी जाओ न रजिया! फिर वह मेरी तरफ देख कर मुसकरायी—नई नवेली है न, डरती है! फिर वह दरवाजे में गयी—जाओ न रज्जू! फिर बाहर जा कर उसने रज्जू को जैसे धक्का दे दिया. उसने ज्यों ही मेरे कमरे में कदम रखा मैंने बढ़ कर उसकी नकाब एक झटके से उलट दी और वह सोफे पर जैसे गिर-सी पड़ी. . . वह बड़ी अजीब-सी लड़की थी, अजब यूं कि वह कुछ ऐसी खूबसूरत तो न थी पर लगती खूबसूरत थी.

—अच्छी हो बिल्कीस. मैं दांत भींच कर बोला, ऐसा न करता तो चीख पड़ता. . औरत एकदम बोली—जरा जल्दी से जाओ मुश्ताक भाई, कुछ तिक्के कबाब भिजवा दो, और देखो कबाब जरा मिर्चों वाले हों जो मुझे बिल्कुल रुला दें!

मुश्ताक चला गया तो मैंने देखा कि औरत कबाब के आने से पहले ही रो रही थी. उसने लपक कर चिटखिनी चढ़ा दी और पलट कर मेरे कदमों में लिपट कर ढेर हो गयी! वह अपने भीगे गाल मेरे पांव से रगड़ कर फरियाद करने लगी—मेरा पर्दा रख लीजिए, साहब! मेरा और मेरी बेटी का पर्दा खुदा के और आपके हाथ में है! . . . मैं क्या करूं साहब, मेरी एक ही बेटी है, मगर सब नई बेटी मांगते हैं. मैं अपनी बेटी को कैसे बदलूं साहब! इसीलिए शहर बदल लेती हूं. . मुझ निगोड़ी को क्या पता था कि आप लोग भी शहर बदल लेते हैं! खुदा के लिए साहब, खुदा के लिए मेरा और मेरी बेटी का परदा रख लीजिए, वरना कोई हमें दो पैसे को भी नहीं पूछेगा!

दूसरे दिन मैंने इलयास को खत लिखा कि अपने कारोबार के सिलसिले में कराची आना चाहते हो तो हजार बार आओ, मेरे पास मत आना, मैं कल रात से मर चुका हूं! □□□

(अनुवाद : जहीर नियाजी)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मानकुंवर : एक आपबीती • कन्हैयालाल नंदन

बहुत धुंधली-सी याद आज भी मन में चिपकी हुई है कि मैंने उसे एक पत्थर से चोटहिल कर दिया था. उस समय दर्जा दो में पढ़ता था. गांव का स्कूल. दोपहर के खाने की छुट्टी हुई तो बच्चों की रेहड़ छूटी और घर और स्कूल के बीच जिस तरह की भी मस्ती चलते-चलते बच्चों में हो सकती है, हो रही थी. मेरे किसी साथी ने मेरे सींकिया शरीर को चुनौती दे दी कि मैं उससे ज्यादा ऊंचा डीला नहीं फेंक सकता. मैंने ताव में आ कर एक मंझोले कद का ईट का टुकड़ा उठाया और पेड़ की ऊंचाई नापने को कस के फेंक दिया. उसकी चिंता नहीं थी कि यह कहां गिरेगा. चिंता तो तब हुई जब पता चला कि मानकुंवर की मां सरस्वती बाई मेरे घर पर उलाहना ले कर मुझसे पहले पहुंच चुकी है. पहुंचते ही मेरी मां ने मेरे गालों पर दे तड़ातड़, दे तड़ातड़. इस—बदमाश की बदौलत मुझे एक रंडी के उलाहने सुनने पड़ रहे हैं! और फिर तड़ातड़.

मेरा खाना मेरे आंसुओं में ढल चुका था. बाबा आये तो अपने पोते को रोते देख कर उनका विश्वामित्री क्रोध भड़क उठा— कहां गयी ससुरी सरसुतिया, उलाहना उसकी खोपड़ी से बहाऊंगा. साली रंडी, समझती क्या है अपने को! जितने आंसू मेरे नाती के बहे हैं, उतना खून न बहा दिया तो देवीदयाल नाम नहीं. और उन्होंने उठायी अपनी लाठी और चल पड़े मुझे बगल में साथ ले कर. वे तैश में थे, मेरे आंसुओं के सामने सरसुतिया की बिटिया के सर से बहता हुआ खून उनके लिए पानी था. . . . इसके बाद क्या हुआ था, अब याद नहीं. बस इतना याद है कि सरसुतिया बाई ने मेरे बाबा से अपने हीनता बोध के साथ उलाहना ले कर पहुंचने की मांफी मांग ली थी और बात आयी-गयी हो गयी थी. लेकिन तब से आज तक मैंने आसमान की ओर कोई पत्थर नहीं फेंका. जाने क्यों मानकुंवर की यह चोट खायी तस्वीर आज भी मेरे मन में ज्यों की त्यों जिंदा है.

एक बार हो तो एक बार, जब कोई घटना बार-बार कौंध कर मन ही मन आपको गुनहगार बनाने पर उतारू हो जाये तो भला चुप भी कब तक रहा जा सकता है! अभी पिछली बार जब मैं गांव गया तो मैंने अपने लंगोटिया यार शिव को साथ लिया और मानकुंवर के घर का दरवाजा खटखटा दिया— कौन? अंदर से आवाज आयी.

—मैं! परदेशी.

—अच्छा, आज परदेशी बन कर आये हैं? मानकुंवर ने अपनी मिस्सी लगी बत्तीसी के बीच से मोहक मुस्कान मारी और 'कब आये' वगैरह के साथ कुशल-क्षेम पूछते हुए बैठने का आग्रह किया.

बैठने को तो बैठ गये लेकिन हम दोनों के मन में एक तूफान उठ खड़ा हुआ. हम लोगों ने कई बार यह योजना बनायी कि मानकुंवर से एक बार खुल कर बातें की जायें और उससे उसके अंतर्मन के विचार जाने जायें कि एक वेश्या के रूप में उसका मन कैसा महसूस करता है, वह अपनी जिंदगी में दर्द का सिलसिला पाले हुए है तो क्यों नहीं उस विश्वासी के साथ शादी रचा कर बैठ गयी जिसने आजन्म अपनी मोहब्बत निभाने की कसमें खायी थीं. लेकिन कभी उसके दर्द को छेड़ने की हिम्मत न हुई और कभी संकोच रहा. इस बार इरादा मजबूती पकड़ गया था. मैंने कहा— मानकुंवर. . . . और मेरे सामने से मानकुंवर की जिंदगी की सारी सुनी-अनसुनी दास्तान गुजर गयी.

—बोलिये, बोलिये! क्या कह रहे थे आप?

—तुम्हें याद है, बचपन में मैंने तुम्हें बड़ी जबर्दस्त चोट पहुंचायी थी.

—नहीं मुझे याद तो नहीं, लेकिन वह चोट तो आयी-गयी हो गयी है. चोटें तो मैंने अब जो खायी हैं, उनका कोई हिसाब है?

—हिसाब भी तुम्हारे पास होगा. लेकिन क्या हर्ज है, अपनी जिंदगी के पन्ने पलट कर देख लो. हिसाब में कहीं भूल तो नहीं है.

—नहीं, भूल नहीं है. हिसाब बहुत साफ है.

मेरे सामने साइकिल का हैंडिल थामे, पान खाये, करीने से कढ़े बालों वाला एक नौजवान कौंध गया जिसे मैंने भी अनेकों बार मानकुंवर से बात करते, उसके यहां बैठे, पान खाते, आते-जाते देखा था. उस बात को सालों गुजर गये. मैंने पूछा— अब कहां हैं वो आजकल?

—हैं! अभी भी कभी मिल जाते हैं या सामने पड़ जाते हैं तो पूछते, कोई तकलीफ तो नहीं है. कोई तकलीफ हो तो जरूर बताना. मैं आज भी कुछ कह दूं तो अपनी कोशिश भर वे मदद करने से नहीं कतरायेंगे. सोचो भला, जब मुझसे पूछते थे कि तुम मुझसे शादी क्यों नहीं कर लेती तो मैं कह देती थी कि अगर मैं शादी कर लूंगी तो मेरी मां को रोटी कौन देगा? मेरी छोटी बहन पढ़ रही है, उसकी फीस कौन भरेगा?

मानकुंवर की आंखें छलछला उठी थीं. अपनी मां को नजरों से टटोलने के लिए इधर-उधर नजर घुमायी और जब जान लिया कि आसपास नहीं हैं, तो आंख से टपकता एक नन्हा-सा कतरा आंचल में सुखा लिया.

—मानकुंवर! और वह सोते से जाग उठी.

—क्या सुर छेड़ें हैं आपने भी! अपने आंचल में बंधी इलायची की फलियां निकाल कर मेरे सामने कर दिया. मैंने इलायची तो ले ली लेकिन चुप्पी का कसाव कसाव ढीला न कर पाया. चुप्पी उसी ने तोड़ी— पंद्रह साल की थी जब पहली बार किसी पुरुष का साहचर्य निभाने के लिए मजबूर हुई थी.

—उस व्यक्ति के बारे में आज भी कुछ कशिश महसूस करती हो?

—करती क्यों नहीं हूं. आखिर उसके साथ आठ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दस साल बीते हैं. लेकिन तब यह ज्ञान नहीं था कि हमारा साथ देनेवाला इस दुनिया में कोई नहीं है. आखिर मेरी मां को ही देख लीजिए न, हरबकश चाचा आज भी तो जिंदा हैं. अम्मां ने अपनी सारी जवानी हरबकश चाचा को सौंप दी किंतु आज कोई झांक कर नहीं देखता.

—तब फिर उन पर विश्वास कैसे किये बैठी हो. .. यह बात मैंने शरारतन चुटकी लेने के लिए कही थी.

मानकुंवर ने दहला मारा :

'यूं तो रंग एक है जिससे रची है ये दुनिया,
रंग उनका-सा मगर ढूंढ़ के पाया न गया.

मेरे लंगोटिया यार खिल उठे, शेर सुन कर उनकी सर्दी छूटी— अच्छा एक बात बताइए, आपने जब सबसे पहले किसी अजनबी पुरुष को अपने बिस्तर पर पाया तो कैसा महसूस हुआ था? और यह पूछते मेरे यार का चेहरा शरम से लाल हो गया.

किसी वेश्या के लिए यह सवाल कोई विशेष अहमियत नहीं रखता, लेकिन मानकुंवर झेंप गयी. —अजीब सवाल है आप का भी! फिर एक खिलखिलाहट और वही खामोशी. लेकिन मैं देख रहा था कि मानकुंवर उस अचीन्हे अनुभव को गिरफ्त में ले आने की कोशिश में लगी हुई थी. उसने उसे पकड़ भी लिया लेकिन शब्द धोखा दे गया—आप अपना सवाल जरा फिर दोहराइए. उसकी इस दृढ़ता से इस बार शिव को ज्यादा शरम आयी लेकिन उसने एक शोध छात्र की तरह अपना सवाल दोहरा दिया. मानकुंवर ने सहज हो कर जवाब दिया—जो आदमी बिस्तर तक पहुंचने की स्थिति में पहुंचता है, वह अजनबी नहीं रह जाता.

—यह जिंदगी तुम्हें नापसंद रही है, यह हम सभी जानते हैं, तब फिर तुमने इसे अपनाया क्यों?

—पहले अम्मा ने मेरे लिए कोई लड़का देख कर शादी कर देनी चाही थी, लेकिन फिर वही बात कि अगर मैं शादी करके चली जाती तो घर की रोटियां कैसे चलतीं! घर की परिस्थितिवश मैं मजबूर हो गयी. हां, एक बात जरूर रही है, जितने साल एक आदमी की हो कर रही हूं, दूसरे को शरीर देना कतई पसंद नहीं किया.

—कभी कोई ऐसा मौका भी तो आ पड़ा होगा, जब मजबूरी आ गयी हो और. . .

—मौके जरूर आये हैं, आये क्यों नहीं! नाच-गाना करती रही हूं, अकेले-दुकेले बाहर जाती रही हूं. एक मौका तो ऐसा आया था जब लगा कि आज बचूंगी नहीं. लेकिन उन्हीं सब बातों से ऊब कर नाच-कूद छोड़ दिया.

—एक बात बताओ मानकुंवर, तुम्हारे मन में यह नहीं होता था किसी नये आदमी को आया देख कर कि यह आज तक यहां कभी नहीं आया, आज क्यों आया है? और खासतौर से तब जब कि तुम स्वयं इस बात को मानती हो कि रंडी के कोठे पर जो भी जाता है, बरबादी का साफा सर पर बांध कर जाता है.

—होता क्यों नहीं! यह तो महसूस होता है कि क्यों आया है जब आज तक नहीं आया था. लेकिन अपने घर को दोष दे कर चुप रह जाती हूं.

—तुम्हारे सामने किसी की जिंदगी आदर्श रही है कभी? मैंने बात को सैद्धांतिक मोड़ देने की कोशिश की.

—बात नहीं समझी आपकी!

शिव ने धीरे-धीरे समझाते हुए बात का थोड़ा खुलासा किया लेकिन शायद मानकुंवर को खुलासे से ज्यादा जरूरत थी वर्तमान में लौटने की. बात को दो टूक करके बोली— यह सब सपना था मेरे लिए, आदर्श-वादर्श. मैं इतना जरूर सोचती हूं कि इस घर के बजाय और कहीं भी होती तो इससे तो अच्छी ही रहती.

एक हल्की-सी आह का पुट उसके इस वाक्य में था जो निश्चय ही तनहाइयों में कचोटता है. चलते हुए, मैंने सौजन्यवश कह दिया— और तो क्या कहूं तुमसे, लेकिन मेरे लायक कोई सेवा हो तो जरूर याद करना. अपने तईं. . . . मुझे पता नहीं था कि इस वाक्य से समंदर अचानक मचल जायेगा. मेरी जबान उसकी आंखों से झरते आंसू देख कर वहीं रुक गयी. मेरी समझ में नहीं आ रहा था कि जिसे सहानुभूति भी इतनी भारी पड़ने लगी हो, दर्द की उस तनहा तस्वीर के सामने कहूं तो क्या कहूं! और मैं मौन वापस चला आया. एक गुनाह से मुक्ति पाने गया था, उससे बड़ा गुनाह कर आया. तब से आज तक नहीं सोच पाया कि मानकुंवर से जब अगली बार सामना होगा तो क्या कहूंगा. □□□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

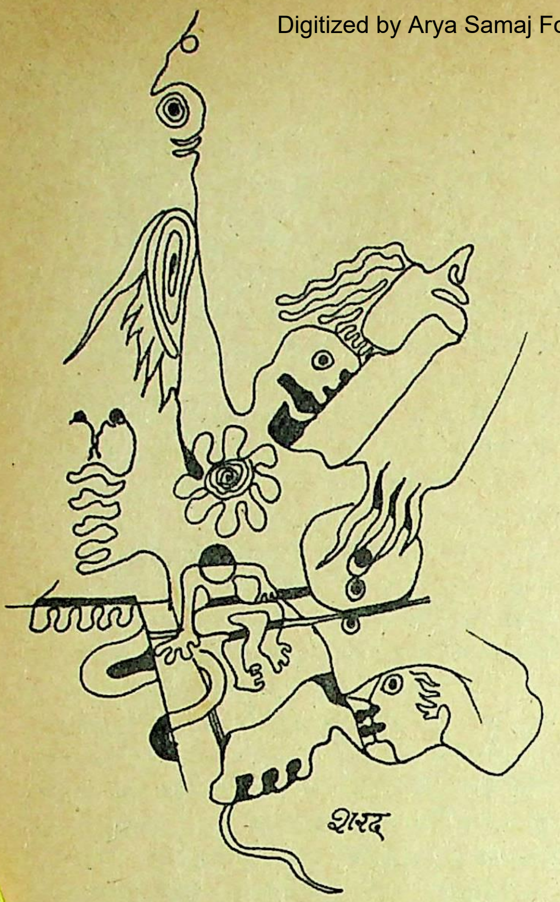

• शरद कांबले

समदर्शी

कुछ महिलाएं एक दिन श्री रामकृष्ण परमहंस के यहां, उनके सामने बैठी, उनसे बातचीत कर रही थीं. इतने में रमणी नाम की एक वेश्या गली में से निकली.

परमहंस ने उसे देखते ही पुकार कर कहा—तुमने तो आजकल इस ओर आना छोड़ ही दिया है, क्या बात है?

उन्हें इस प्रकार वेश्या से बात करते देख कर सामने बैठी महिलाएं झेंप गयीं.

कुछ देर के बाद परमहंस उन्हें मंदिर दिखाने ले गये. जब वे काली-मंदिर में पहुंचे, तो परमहंस ने काली माता को संबोधित करते हुए कहा——मां, तुम्हीं ने वेश्या रमणी का रूप धारण किया है. तुम्हीं वेश्या का रूप भी ग्रहण करती हो, और तुम्हीं पवित्रता का रूप भी धरती हो. धन्य हो तुम मां! उनके पास खड़ी महिलाओं की समझ में आया कि रमणी से घृणा करना गलत है; परमहंस उसमें भी काली माता को ही देखते हैं. सो उनका अपने पतिव्रता होने पर गर्व करना व्यर्थ है, क्योंकि यह भी काली माता की ही इच्छा का परिणाम है. □

गर्मी की दोपहर • ओविद

गर्मी के दिनों की बात है. दोपहर ढल चुकी थी.

मैं काउच पर लेटा था, कुछ आराम की उम्मीद में. खिड़की थोड़ी-सी खुली थी, थोड़ी-सी बंद थी और भीतर की रोशनी में जंगल का-सा असर था; यानी रंग कुछ वैसा ही था जैसे गोधूलि के वक्त होता है. उस लड़की के लिए जो कि अपने आपको दिखाना भी चाहती है और छिपाना भी, इससे बेहतर रोशनी और माहौल नहीं हो सकता.

और कोरिन्ना चली आयी, ढीला-ढाला कुरता पहने, अपनी सफेद गरदन पर अपने लहराते बालों को बिखेरे. ठीक वैसे ही जैसे रानी सेमीरामिस अपने शयनकक्ष में आती थी या फिर उस लाइस की तरह जिसे अनेकानेक नायकों ने अपने आलिंगन में लिया. मैंने कुरते को खींच लिया. बेचारा कुरता! उसकी कोई औकात नहीं थी, फिर भी वह उसे अपने चारों ओर लपेटे रखना चाहती थी. इसके बावजूद उसने कोई जद्दोजहद नहीं की, मानो वह जीत के लिए उत्सुक हो; इसीलिए वह शीघ्र ही पराजित हो गयी. अब वह मेरे सामने बिना किसी परदे के खड़ी थी और मुझे उसकी निर्दोष सुंदरता में कोई भी कमी नजर नहीं आ सकी. क्या कंधे थे, क्या बांहें थीं, जिनको मैंने छुआ, क्या गोलाइयां थीं सीने की और उनके नीचे क्या स्निग्धता थी! गर्मी और तराश! कितने भरे-भरे और गुदाज उसके नितंब! कितनी जवान, मरमरी उसकी जांघे! लेकिन इस सूची का क्या फायदा! एक-एक अणु प्रशंसनीय था! बस, मैंने उसे खींच लिया.

बाकी आप जानते ही हैं. □

बेटियां

'वतन' के संपादक, मौलवी इन्शा अल्लाह खां इकबाल से मिलने प्रायः उनके यहां जाया करते थे.

इकबाल अनारकली में रहते थे, जहां वेश्याओं के कोठे होते थे.

बाद में म्युनिसपल कमेटी ने वेश्याओं को वहां से उठा दिया था. उन्हीं दिनों मौलवी साहब इकबाल से मिलने कुछ एक बार गये तो वे घर न मिले.

आखिर एक बार जब मुलाकात हुई, तो मौलवी साहब ने कहा——डाक्टर साहब, जब से तवायफें अनारकली से गायब हो गयी हैं, आप भी यहां नजर नहीं आते. अजीब हैं यह तवायफें भी!

——मौलवी साहब, इकबाल ने कहा——आखिर तो वे 'वतन' की ही बेटियां हैं. □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सावित्री

• सुहैल अजीमाबादी

राजेश ने कमरे में पांव रखा तो अचानक लगा यह वह कमरा नहीं था जहां वह आता रहा है. यह एक साफ-सुथरा और सुरुचिपूर्ण कलात्मक ढंग से सजा हुआ कमरा था और कमरे के बीच में खड़ी थी सफेद साड़ी में लिपटी हुई एक सौम्य युवती, जो संगमरमर की तराशी हुई प्रतिमा लगती थी.

—बैठिए, युवती के होंठ हिले.

—ओह हां, जैसे राजेश सोते से जागा. फिर हड़बड़ा कर बोला—अगर मैं भूलता नहीं तो यहां पहले अनिता नाम की एक लड़की रहती थी.

—हां, लेकिन अब वह यहां नहीं है. उसने शादी कर ली है और कहीं दूसरी जगह रहती है.

—अच्छा ऽऽ

—क्या आपको उसका शादी करना अच्छा नहीं लगा?

—क्यों नहीं, यह तो बहुत खुशी की बात है . . . और उसे सचमुच खुशी हुई. फिर वह गंभीर होता हुआ बोला—लेकिन आप यहां . . . आपका नाम क्या है ?

—जी सावित्री . . . और आपका ?

—सत्यवान, अचानक उसके मुंह से निकला और दोनों हंसने लगे.

अब राजेश कुछ सामान्य हो गया था. उसने कमरे में इधर-उधर नजर डाली. एक रेक में कुछ किताबें और पत्र-पत्रिकाएं रखी थीं. उसे महसूस हुआ कि सावित्री एक पढ़ी-लिखी और शरीफ घर की लड़की है और सोनागछी में रहने वाली तमाम लड़कियों से बिल्कुल अलग है.

तभी सावित्री खड़ी होती हुई बोली—आप बैठिए तब तक मैं चाय बना कर लाती हूं. सावित्री ने अपने भाई चारू को पान लाने के लिए भेज दिया.

उन्होंने चाय पी, पान खाये और बहुत-सी बातें कीं वह भूल ही गया कि वहां क्यों आया है. तभी घड़ी ने बारह बजाये. राजेश चौंक उठा और खड़े होते हुए बोला—अरे, बारह बज गये ! अब मुझे चलना चाहिए... काफी दूर जाना है . . .

—कहां जाना है? सावित्री ने पूछा.

—पार्क सर्कस. होटल रोजलैंड. यहां से काफी दूर है.

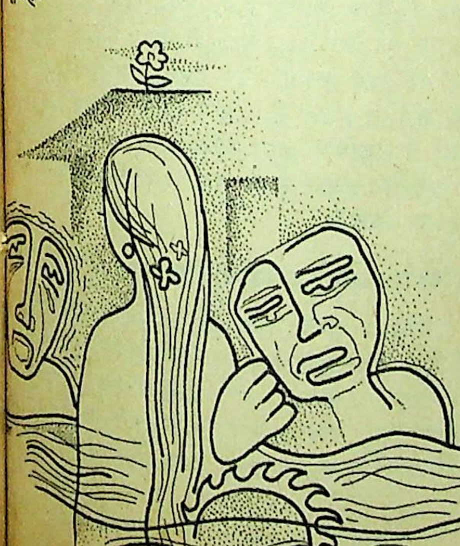

सावित्री उसका मुंह देखने लगी. राजेश को खयाल आया कि उसने सावित्री का सारा समय बातों में बरबाद कर दिया यदि वह किसी दूसरे कोठे पर होता तो या तो इतने समय के अतिरिक्त पैसे मांग लिये जाते या दूसरे ग्राहकों को निबटाने की जल्दी में उसे भगा दिया गया होता. उसने अचानक अपनी जेब में हाथ डाला और सौ रुपये का एक नोट सावित्री को पकड़ा दिया और चला गया. सावित्री आश्चर्य से उसे जाते हुए देखती रही. एकाएक उसकी नजर नीचे फर्श पर पड़ी, वहां एक कार्ड गिरा हुआ था. कार्ड पर लिखा था—राजेश कुमार अग्रवाल, स्टार फिजल्स कंपनी, रांची, उसने कार्ड संभाल कर रख लिया.

राजेश सावित्री को भूल जाने का प्रयत्न करता रहा लेकिन भूल न सका. इसीलिए वह दूसरे दिन गया भी नहीं. तब सावित्री स्वयं अपने भाई के साथ उसके होटल आयी और राजेश को उसके साथ जाना पड़ा.

उसी रात सावित्री ने राजेश को अपनी कहानी सुनाई, जिससे राजेश बहुत प्रभावित हुआ. उसने कहा—सावित्री, अगर मैं विवाहित न होता तो तुम्हीं से शादी करता लेकिन मैं तुम्हें इस स्थिति में देख भी नहीं सकता. हो सके तो यहां से मुक्त होने की कोशिश करना और मुझे खबर देना.

राजेश रांची लौट गया और अपने कारोबार में लग गया. तभी एक दिन सावित्री का भाई उससे मिला और बोला—दीदी आयी हैं. अपनी एक सहेली के घर ठहरी हैं . . . आपसे मिलना चाहती हैं . . .

राजेश ने उत्तर दिया—शाम को आऊंगा. वह बड़े ऊहापोह में पड़ गया क्योंकि जिस सहेली के पास सावित्री ठहरी थी उसे वह जानता था. अंत में उसने अपने मित्र मानक से बातें करने का निश्चय किया और सारी बातें बता कर उसे सावित्री के साथ शादी करने के लिए तैयार कर लिया. मानक की पत्नी दो छोटे-छोटे बच्चे छोड़ कर तीन साल पहले मर गयी थी. मानक बड़ा आदर्शवादी और चरित्रवान युवक था.

शाम को राजेश मानक के साथ सावित्री से मिलने गया और उसने सावित्री को भी शादी के लिए तैयार कर लिया.

शादी के बाद सावित्री सुख से रहने लगी. लेकिन अब वह नहीं चाहती थी कि राजेश उसके पास आये क्योंकि वह राजेश से प्यार करती थी लेकिन अपने पति को धोखा नहीं देना चाहती थी.

□□□

(संक्षिप्त रूपांतर : सुरजीत)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महानगर बंबई : वेश्यावृत्ति के सामाजिक आयाम

● रमाकांत आजाद

जिस तरह मद्यनिषेध की विफलता ने महानगर बंबई को शराब की सड़ांध में डुबो कर रख दिया है, उसी तरह हिंदी की अनेक कुत्सित और कामोत्तेजक फिल्मों एवम् इसी तरह के यौन-कुंठा ग्रस्त घटिया उपन्यासों ने मिल कर यहां की युवतियों में वेश्यावृत्ति की प्रवृत्ति का एक नवीनतम संस्करण अनुमोदित कर दिया है.

यौनसंबंध यदि यहां के उच्च तथा उच्च-मध्यम वर्ग की युवतियों और महिलाओं के लिए आधुनिकता के नाम पर सामान्य व्यवहार जैसी बात रह गये हैं, तो मध्यम और निम्न-मध्यम वर्ग की युवतियों के लिए ग्लैमर की पूर्ति तथा पेट की भूख मिटाने का साधन बन गये हैं.

माना कि देश में गरीबी है और गरीबी से तंग आ कर पहले भी अशक्त नारी को जीवन-निर्वाह के लिए तन की आहुति देनी पड़ती थी, और आज भी वह कई मायनों में उसके लिए विवश है; किंतु उनका अनुपात एवं सहयोग इस व्यवसाय बनाम कुटीर उद्योग में बहुत कम है, जिनका उल्लेख इस लेख में किया जा रहा है.

प्रथम श्रेणी : संभ्रांत वेश्याएं

बंबई की कोलाबा, गिरगांव, पैडर रोड, वार्डन रोड, वर्ली, दादर, बांद्रा तथा खार जैसी नामी-गिरामी बस्तियों में नव धनवानों तथा प्रभावशाली व्यक्तित्व वाले प्रतिष्ठित व्यक्तियों के हजारों ऐसे फ्लैट हैं, जहां उनकी रखैलें उनके प्रभाव की आड़ में खुलेआम वेश्यालय चलाती हैं और उस धन से उनके सेठ तथा प्रभावशाली व्यक्तित्व उद्योग-धंधों में पूंजी-विनियोजन करते हैं. इसी तरह सोशल क्लबों, नृत्यगृहों, मसाज-हाउसों और तथाकथित कला-केंद्रों में भी यह व्यवसाय फल-फूल रहा है.

पहले इस व्यवसाय में बूढ़ी और इस कला में विशिष्ट प्रकार से दक्ष-कुशल महिलाएं ही काम की हुआ करती थीं; किंतु बंबई में फिल्म नगरी होने के नाते अब फिल्म लाइन की रिटायर्ड, तथा रिजेक्टेड सिने नेत्रियां, इस पेशे के लिए अधिक सहायक सिद्ध हो रही हैं.

जिस तरह कतिपय पुरानी, पिटी हुई अभिनेत्रियों ने इस पेशे को सदिच्छा से स्वीकार लिया है, उसी तरह कुछ पुराने पिटे-पिटाये स्वघोषित निर्माता, निर्देशक तथा फिल्म-उद्योग से संबंधित टुटपुंजिये फाइनेंसर भी इस धंधे में लग गये हैं. और उनकी सहायता नयी, अधेड़ तथा फ्लॉप तारिकाओं के साथ परंपरागत चले आ रहे उच्च से उच्चतम तबके की वासनाप्रिय, भ्रष्ट महिलाएं और युवतियां भी जब-तब करती रहती हैं. कुछ तो व्यवसाय में पति का दिवाला निकल जाने या सामाजिक रुतबा बनाये रखने के लिए धन की अधिक आवश्यकता आ पड़ने पर हमेशा के लिए इस पेशे से जुड़ जाती हैं, किंतु कुछ ऐसी भी हैं, जो अपना जीवन पति और बाल-बच्चों के साथ आराम से निर्वाह कर सकती हैं, फिर भी, कार-बंगले और ऐशो-आराम के साथ जीने के लिए इसकी शरण में आती हैं.

इस श्रेणी की कुछ वेश्याएं तो फ्लैटों में बंद हो कर धंधा करती हैं, जिनमें विभिन्न राज्यों से खरीदी हुई लड़कियां भी शामिल हैं. कभी-कभी कॉलेज तथा स्कूल की कमउम्र लड़कियां भी देखी और पायी जाती हैं. और कुछ ऐसी होती हैं जिनका सौदा शॉपिंग करते समय या इसी तरह के अन्य किसी काम-धंधे के बहाने हो जाता है. कुछ बड़े होटलों में भी जा कर बैठती हैं, जिनका सौदा वहां के लोगों के जरिये होता है. इसके अलावा इस व्यवसाय को बनाये रखने के लिए अब 'पिकनिक सेंटर', 'मनोरंजन केंद्र' और 'गैदरिंग क्लब' भी खुलने लगे हैं, जहां पश्चिमी शैली के नाइट क्लबों की तरह 'नग्न प्रदर्शन' नहीं, बल्कि वाममार्गियों की तरह सामूहिक 'रति विलास' लीलाएं चलती हैं.

पारिवारिक स्तर पर वेश्यावृत्ति करने वाली प्रथम श्रेणी अथवा स्पेशल क्लास की सभी वेश्याओं के पास अपना आलीशान फ्लैट और गाड़ी होती है तथा पति और बच्चे भी. और किसी-किसी मामले में मां-बेटी दोनों साथ-साथ चलती हैं. इनकी फीस बड़ी ऊंची होती है. यानी प्रति घंटा १०० रुपये से ले कर २०० रुपये तक. और पूरी रात या पूरे दिन का १००० से १५०० तक. खाने-पीने का खर्च अलग. पर इनका हिसाब-किताब बड़ा सीमित होता है. और इनमें फिल्मी स्तर वाली वे लड़कियां तथा अभिनेत्रियां नहीं शामिल हैं, जो तीन हजार से ले कर पांच हजार तक एक रात का लेती हैं.

द्वितीय श्रेणी : ग्लैमरपरस्त वेश्याएं

द्वितीय श्रेणी की सामाजिक वेश्याएं भी फ्लैटों में ही रहती हैं, पर इनके फ्लैट का दाम कम होता है— अधिक-से-अधिक ३०-४० हजार तक. जबकि प्रथम श्रेणी की वेश्याओं के फ्लैट एक से ले कर पांच लाख तक के होते हैं.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इनका मालिक बनाम सेठ एक बार एक मुश्त रकम खर्च कर, फ्लैट खरीद कर इन्हें दे देता है. उसके बाद उसकी छुट्टी.

इस तरह सेठ एक बार रकम खर्च करके जीवन भर के लिए मुक्त हो जाता है. यदि सेठ कोजीवन में कभी अर्थ-संकट का सामना करना पड़ा, तो 'एमरजेंसी' में वह अपनी इस रखैल से दस-बीस हजार रुपये ले भी सकता है. साथ ही सप्ताह में उसका एक दिन सुरक्षित रहता है—खासकर रविवार!

इनका वेश्यालय चलाने का अपना तौर-तरीका भी बिल्कुल अलग है. ये एक औसत उम्र तक खुद तो सप्लाई होती ही हैं और चौबीस घंटे 'रेडी' भी रहती हैं, किंतु अपने फ्लैट में किसी लड़की को रखती नहीं. जिस लड़की को धंधा करना होता है, वह स्वयं अपने घर से बन-ठन कर इनके फ्लैट तक पहुंच जाती है. हां, कभी किसी कारणवश अगर लेट हो गयी, तो बात अलग है, नहीं तो इनका समय भी ऑफिस की तरह निश्चित रहता है, क्योंकि इनके अधिकांश खरीदार ऑफिस-बाबू ही होते हैं.

सुबह दस, साढ़े दस-ग्यारह से शाम पांच-छह-सात क, और विशेष परिस्थितियों में रात के नौ तक, जो भी पुरुष इन्हें आ कर पसंद करता है, वह उसके साथ दूसरे कमरे में चली जाती है. लेकिन इनकी फीस फ्लैट की मालकिन या नौकरानी बनाम आया ही तय करती है—ग्राहक की जेब देख कर!

तय किये गये उस पैसे में इनका आधा हिस्सा होता है, जो इन्हें उसी वक्त मिल जाता है. भीतर जा कर यदि वह कस्टमर से नखरे दिखा कर या और किसी तरह का झांसा, पट्टी अथवा वादा कर, उससे कुछ और प्राप्त कर लेती है, तो वह उसका अपना होता है. किंतु लड़की की जो फीस तय होती है, उसमें से दस प्रतिशत उस औरत को अवश्य देना पड़ता है, जो पुरुष को फ्लैट तक पहुंचाती है और इनके लिए ग्राहक ढूंढने में उसे सिनेमा-घरों, बसस्टैंडों, पार्कों, तथा इसी तरह के जाने कितने स्थानों के सुबह से शाम तक चक्कर काटने पड़ते हैं.

• ऐ. पं. रचना

अपने फ्लैट में ये एक दिन में अधिक-से-अधिक तीन या चार लड़कियां रखती हैं. एक लड़की को सप्ताह में एक या दो दिन आ कर बैठने की ही अनुमति होती है.

इस तरह इनके यहां बिजनेस सिस्टम से ग्राहक को नित्य नयी लड़की मिलती रहती है. अगर एक लड़की को सप्ताह में दो या तीन दिन के हिसाब से एक महीना पूरा हो जाता है, तो उसे अगले महीने दूसरे फ्लैट में भेज दिया जाता है, यानी उसकी सहेली के फ्लैट में.

इन फ्लैटों में बैठने वाली लड़कियां प्रायः बंबई की होती हैं और वे अपने-अपने घरों से काम पर (नौकरी) जाने के बहाने निकलती हैं. किंतु अपने अभिभावकों को ये रोज पैसा नहीं देतीं. महीने की एक तारीख से दस तारीख के बीच अपने मां-बाप को एक मुश्त बंधी रकम देती हैं.

इस पेशे के अपने कोड शब्द भी हैं, जिन्हें सुन कर कोई भी व्यक्ति आश्चर्यचकित हुए बिना नहीं रह सकता. जैसे लड़की को 'महात्मा' या 'महादेव' अथवा 'महाराज' कहते हैं. फ्लैट की मालकिन को 'महंत', 'मठाधीश' या 'जगत-गुरु'! फ्लैट को 'मंदिर' और उस प्रौढ़ा या बुढ़िया को जो ग्राहक को 'मंदिर' तक पहुंचाती है, 'भक्त आत्मा' कहते हैं.

इसी तरह, जो धन लिया जाता है, उसे 'चढ़ावा', 'भेंट-पूजा' या 'पान-फूल' कहा जाता है. और जो धन देता है, अर्थात् ग्राहक, उसे 'गधा' कहते हैं. लेकिन पीठ पीछे सामने यानी कि मुंह पर उसे 'योगी' कहा जाता है. शब्दार्थ यूं है कि जो एक को भोगता है, वह 'भोगी' है और जो किसी को नहीं भोग सकता वह 'रोगी' है और जो हजारों को 'भोगता' है, वह 'योगी' है, अर्थात् निलिप्त!

शुरू-शुरू में किसी भी लड़की को उसकी सहेली या कोई अन्य औरत उस 'मंदिर' तक ले जाती है. आगे चल कर वह स्वतः जाने लगती है. बिना किसी दबाव, बिना किसी हिचक के. प्रारंभ में यूं होता है कि उसे सिनेमा-हॉल से ले कर 'रति-आश्रम' की पवित्र चौकी तक, केवल अंग स्पर्श तक सीमित रखा जाता है और पारिश्रमिक वही मिलता है, जो रात या दिन में फिरने वाली किसी भी 'कॉल गर्ल' या 'सोसायटी गर्ल' का होता है. धीरे-धीरे जब उसे सभी हाव-भाव मालूम हो जाते हैं और पुरुष-स्पर्श का सुख उसके शरीर को भाने लगता है, तो वह स्वयं उस मंजिल को स्वीकार लेती है.

इस काम को जो क्यूटी (कुटनी) अंजाम देती है, वह एक शालीन, संभ्रांत, सादगीपसंद और वाक्पटु महिला होती है, जिसका काम है पिक्चर देखना तथा बसों और लोकल ट्रेनों से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सफर करना. प्रथम मुलाकात में ही ये किसी भी महिला या युवती को अपना मित्र और किशोरी को बेटी बना लेती हैं और फिर रासलीला शुरू!

इस तरह एक सहेली दूसरी को, दूसरी तीसरी को और तीसरी चौथी को उस 'मंदिर' तक पहुंचाती रहती है.

इस पेशे से जुड़ने वाली कुंवारी लड़कियां और शादीशुदा औरतें, दोनों ही होती हैं. किंतु आगे चल कर इनमें से पचास प्रतिशत कुंवारियां विवाह जैसी रस्म के साथ बंध जाती हैं. और कुछ को विवाह से पूर्व ही बच्चा पैदा हो जाता है. पर इस स्थिति को कम पढ़ी-लिखी तथा निम्न स्तर की लड़कियां ही प्राप्त होती हैं. पढ़ी-लिखी तथा प्रगतिशील बनाम एडवांस लड़कियां 'एबॉर्शन' करा कर मुक्त हो जाती हैं.

शादी जैसी रस्म में बंधने के बाद ये लड़कियां गृहस्थ जीवन तो जीने लगती हैं पर चूंकि उन्हें अड्डे का पता होता है, अत: अपने पास-पड़ोस की एक-दो लड़कियों को 'जन-मंदिर' तक पहुंचा कर ही संतोष अनुभव करती हैं. साथ ही, अवसर देख कर खुद भी कभी-कभी दस-बीस-पचास रुपये झटक लाती हैं.

बंबई में इनके अलावा हजारों की संख्या में ऐसे फ्लैट भी हैं, जहां विशेष रूप से एक कमरा इसी काम के लिए रिक्त रखा जाता है. इन कमरों में प्रवास करने के लिए जोड़े साथ-साथ आते हैं, जिनमें से कुछ प्रेमी-प्रेमिका होते हैं और कुछ का सौदा फिल्म देखते समय या पार्क में बैठे-बैठे अथवा बस-स्टैंड पर खड़े-खड़े हो जाता है. और ये प्रेमिकाएं वही होती हैं जो पूर्व-वर्णित फ्लैटों में जा कर बैठती हैं. पर ये अपने प्रेमियों और चाहने वालों को उन फ्लैटों में नहीं ले जातीं; क्योंकि उससे भाव कम हो जाता है.

तृतीय श्रेणी : सड़क छाप वेश्याएं

तृतीय श्रेणी में वे तमाम लड़कियां आती हैं, जो बाहर गांव यानी उपनगर कहे जाने वाले स्थानों से भी और आगे रहती हैं; और जो सुबह नौ बजते ही नहा-धो कर आईने के सामने खड़ी हो जाती हैं और साढ़े नौ से दस तक के बीच उपनगरों के अपने-अपने घरों से निकल कर, लोकल ट्रेनों में सवार हो, बंबई की सीमेंटेड सड़कों पर पहुंचती हैं और छापामार सैनिकों की तरह बंबई भर में फैल जाती हैं. इनमें सब की सब अनपढ़ और गरीब परिवार की लड़कियां होती हैं.

मध्य रेलवे में जहां इनका दल कर्जत और कसारा जैसे स्थानों से साठ-सत्तर मील की दूरी तय कर सीधे दादर, वी. टी. पर उतरता है, वहीं पश्चिम रेलवे में विरार, पालघर और दहिसर से उतनी ही दूरी तय कर, ग्रांट रोड और चर्चगेट उतरता है. किंतु अधिकांश लड़कियां ग्रांट रोड पर ही उतर जाती हैं; क्योंकि यहां से पूरे शहर में फैलने की अच्छी सुविधाएं हैं, साथ ही बंबई के सभी प्रमुख सिनेमागृह इसी स्टेशन के आस-पास पड़ते हैं.

ये वनचारी (इनके यारों का दिया हुआ नाम) लड़कियां अपने ग्राहकों को अधिकतर उन सस्ते होटलों में ले जाती हैं, जिनमें फैमिली रूम के नाम पर एक संकरी व्यवस्था होती है और उसी में घंटे-आधे घंटे या पंद्रह मिनट बिता कर बाहर आ जाती हैं. कोई-कोई, अगर शिकार अच्छा हुआ, तो ऐसे होटलों या प्राइवेट रूमों में ले जाती है, जो इसी काम के लिए होते हैं.

इस तरह के होटलों और रूमों में केवल दो घंटे की व्यवस्था होती है और चार्ज होता है ५ से १५ रुपये तक. ये होटल और प्राइवेट रूम वाले वक्त-जरूरत के लिए एक-दो लड़कियां भी रखते हैं.

बाहर गांव से आने वाली इन लड़कियों की कोई बंधी आमदनी नहीं होती.

इसी तरह कल्याण, उल्हास नगर, नाला सोपारा और बोरीवली जैसे पर्वतीय और दूर दराज नगरों से कुछ कुलीन तथा सभ्य परिवार की युवा, प्रौढ़ और अधेड़ उम्र की साफ-सुथरी महिलाएं भी आती हैं, जिनमें से युवतियां तो नाचघरों में बैठती हैं और प्रौढ़ तथा अधेड़ उम्र वालियां, वी. टी. एवं चर्चगेट स्टेशनों के शौचालयों के पास आ कर खड़ी होती हैं और पहचानने वाले इन्हें पहचान कर ले जाते हैं.

वैसे इनके घरों में कोई कमी नहीं है. पर ग्लैमर की मारी ये बेचारी करें भी क्या? अनेक तरह के व्यक्तिगत शौक पूरे करने के लिए, साधन जुटाने हेतु, ये ऐसा करती हैं.

इस तरह की एक महिला ने मुझे बातचीत के दौरान बताया कि 'जब मुझे पहली बार यह पता चला कि हमारे शरीर में एक भाग ऐसा भी है जिससे हम सैकड़ों-हजारों क्या, चाहे तो लाखों रुपये कमा सकती हैं, तो मैं परमात्मा को धन्यवाद दिये बिना नहीं रह सकी— हे भगवान, तू धन्य है! जिसे खाने को मुंह देता है उसे कमाने का साधन भी प्रदान करता है!'

ये संभ्रांत महिलाएं और युवतियां अपने घर का काम-काज करके, दिन में बारह-एक के बाद घर से निकलती हैं और तीन-चार के बीच अपनी अपनी जगह पहुंच जाती हैं. ये भी घर से किसी रिश्तेदार या मिलने वाले का बहाना बना कर निकलती हैं. लेकिन नित्य नहीं. सप्ताह में दो या तीन दिन और किसी-किसी सप्ताह में तो बस एक दिन.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निकृष्ट माताएं : बेग़ैरत पुरुष

बंबई में ऐसी माताएं भी पायी जाती हैं, जो स्वयं अपनी जवान लड़की को फ्लैट पर छोड़ आती हैं या सूचना मिलने पर पहुंचा जाती हैं. और जब लड़की का सौदा तय हो जाता है (इनका सौदा पूरे दिन या पूरी रात का होता है) तो नोट गिन कर इत्मीनान के साथ ब्लाउज के भीतरी भाग में छिपा लेती हैं और चलते-चलते दो घूंट शराब और एक-दो उबले हुए अंडों का सेवन कर, टैक्सी फेयर के रूप में दस का एक पत्ता और हथियाने के बाद, मुसकराते होठों, अपनी लड़की के बारे में फ्लैट मालकिन को यूं हिदायत दे देती हैं— छोकरी को संभालना! अभी नयी है. घर का माफक, हां. और सुबह जल्दी टैक्सी से पहुंचा देना.

इस तरह का व्यवसाय प्रायः दो परिवारों की मालकिनें बनाम सहेलियां आपस में मिल कर चलाती हैं और दोनों ही एक-दूसरे की सामाजिक सुरक्षा का पूरा-पूरा ध्यान रखती हैं.

मसलन, किसी ने पूछा— मालती कहां गयी है? तो वह तुरंत उत्तर दे देती है— मौसी के घर गयी है. अब किसे पड़ी है जो मौसी के घर जा कर पता लगाये? और एक मौसी हो तो कोई पता भी लगाये— यहां तो हर कुटनी मौसी कहलाती है!

इसी तरह कतिपय ऐसे पति भी पाये जाते हैं, जो अपनी सुंदर पत्नियों को इस काम के लिए उपयोग में लाते हैं और उससे खुले शब्दों में कहते है कि तुम कुछ भी करो और किसी के भी पास जाओ, पर मुझे तो शाम तक सौ का एक नोट चाहिए.' किंतु रात ये किसी को नहीं देते— केवल दिन! रात ये अपने लिए ही सुरक्षित रखते हैं.

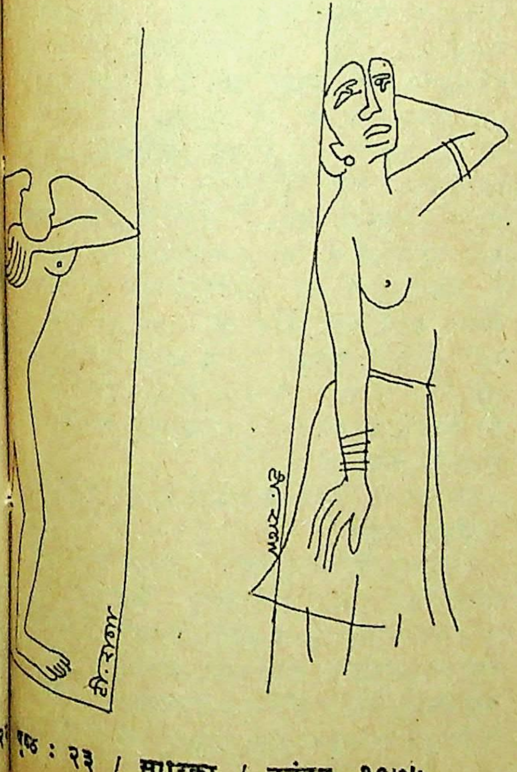

• डी. ए. राणा

इस तरह की औरतों को विवश हो कर यह सोचना पड़ता है कि पूर्ण वेश्या बन कर जीने से तो अर्ध-वेश्या बन कर जीना कहीं अच्छा है—और वे अपने नारी होने तथा अशिक्षित होने के अभिशाप को ओढ़े अर्ध-वेश्या का जीवन जीने लगती हैं!

इस तरह की वेश्या बनी एक औरत से जब मेरी मुलाकात हुई तो वह सुबक पड़ी और आंसुओं के बीच उसने बताया— पहले उसने मुझसे प्यार किया, फिर शादी की और फिर धंधा करने के लिए बाध्य कर दिया. इतना निकम्मा कि वह खुद मुझे सप्लाई करता था और तब एक दिन मैंने ईश्वर और इस समाज को लानत दी, अपने आप से विद्रोह करके पुरुष से संग्राम करने के लिए कोठे पर चली आयी. जब धंधा ही करना है, तो धंधे की तरह करूंगी!

इसी तरह कुछ ऐसी औरतें भी पायी जाती हैं, जो सामाजिक आवरण के रूप में पति का ढोंग रच कर, कोई एक पुरुष रख लेती हैं और उसकी ओट में धंधा करती रहती हैं. जबकि वास्तविकता यह होती है कि वह उसका पति नहीं, बल्कि रखैल होता है. अब यह है न पुरुष की बेग़ैरत?

अब यहां यह कहना क्या गलत होगा कि यह बढ़ती आमदनी, बढ़ती गरीबी, बढ़ती महंगाई, फिल्मी कल्चर और 'यौन परिभ्रमण' कराने वाली पुस्तकों के प्रभाव से पीड़ित तथा असमन्वित समाज में समान स्तर पर लगी ग्लैमर की होड़ का ही परिणाम है? लेकिन इस तर्क से कितने लोग सहमत होंगे, कहा नहीं जा सकता!

पेशा

इस लेख में उल्लिखित और व्याख्यायित एक भी महिला — केवल खरीदी हुई को छोड़ कर— अपने आप को वेश्या मानने के लिए तैयार नहीं है. इनका तर्क है कि हम तो घर में रहती हैं. अपने मां, बाप और भाई-बहन और पति के साथ. फिर वेश्या कैसे हो गयीं?

इनकी परिभाषा के अनुसार— वेश्या वह होती है, जो कोठे पर बैठ कर धंधा करती है और वहीं रहती है. और हम-लोग रोज थोड़े ही धंधा करती हैं? कभी-कभी निकलती हैं?

अब है इनकी सामाजिकता और नैतिकता का किसी के पास कोई उत्तर? □□□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अंधेरे-उजाले • नूरशाह

दैनिक आवाज

कल शाम लेक–व्यू पार्क में पुलिस ने एक नौजवान औरत को गिरफ्तार किया. गिरफ्तारी के कारण अभी तक मालूम नहीं हो सके हैं. पर हमारे रिपोर्टर ने सूचना दी है कि पुलिस पिछले कुछ दिनों से इस औरत की तलाश में थी. **(एक अखबारी खबर)**

डी. एस. पी. सिटी

वीणा नामक स्त्री को गिरफ्तार करने का केस मैं आपके सुपुर्द करता हूं. आप अपनी निजी निगरानी में इस केस की बाकायदा जांच कीजिए और अगर आवारागर्दी के आरोप ठीक साबित हों तो दफा १०९ जाबता फौजदारी के अधीन कानूनी कार्रवाई कीजिए.

(अंग्रेजी से अनुवाद)

(हस्ताक्षर) पुलिस-कमिश्नर

आरंभिक रिपोर्ट

नाम-वीणा कुमारी

सुकूनत—कोलाबा, बंबई.

हुलिया—गंदुमी रंग. किताबी चेहरा. स्याह घने बाल. पतले-पतले मुलायम होंठ. बड़ी-बड़ी गहरी आंखें. लंबी-लंबी उंगलियां. सरो कद.

पंडित दीनानाथ ने पुलिस को रिपोर्ट दी है कि वीणा नामक एक नौजवान औरत को उसने बेसहारा समझ कर अपने घर में शरण दी. कुछ दिन वहां रहने के बाद एक शाम वह अचानक गायब हो गयी. वह अपने साथ कोई चीज न ले गयी, लेकिन पंडितजी को यकीन हो गया है कि वह यहां आवारागर्दी के बहाने एक सैलानी महिला बन कर आयी है. इस संबंध में पुलिस कई दिन तक वीणा कुमारी की तलाश करती रही और अंत में कल शाम उसे लेक-व्यू पार्क में गिरफ्तार कर लिया गया. आरंभिक पूछा-ताछ से मालूम हुआ है कि वीणा कुमारी का असली नाम साधना है. यह अपनी किस्म का बहुत अनोखा और दिलचस्प केस है और हो सकता है कि यह औरत किसी गिरोह से संबंध रखती हो और यहां कोई खास मकसद ले कर आयी हो. इसलिए मुनासिब कार्रवाई के बाद रिपोर्ट पेश की जायेगी.

बास्कर रैना

एस. एच. ओ. थाना नई बस्ती

मैं लगभग हर रात गये अपनी डायरी के पन्ने काले करता हूं. डायरी लिखने का मेरा शौक अब मेरा जुनून बन चुका है. मैं जब कालेज में पढ़ता था तो अपने सहपाठी लड़के-लड़कियों के बारे में लिखता था. सत्य तो यह है कि लड़कों के बारे में कम और लड़कियों के बारे में बहुत ज्यादा, बल्कि सभी कुछ लिखता था. क्या जमाना था वह और कैसी-कैसी लड़कियां मेरे साथ पढ़ती थीं. अब भी वह दिन नजरों के सामने घूम जाते हैं तो अंग-अंग में अजीब-सी मस्ती जागती है. खुश्क होंठों पर बेसाख्ता जीभ फेरने की भावना उभरती है और महसूस होता है जैसे तंग लिबास पहने हुए हुस्न फटा जा रहा हो और चांद में पिघले हुए शरीर इंद्र-धनुष के मद्धिम-मद्धिम-से ठंडे रंग लिये संगमर्मर के फर्श पर बिखरते जा रहे हों, लेकिन अब वे दिन बीत गये हैं. मैं कालेज का अलबेला नौजवान नहीं रहा. अब मैं डी. एस. पी. बन गया हूं और दो बच्चों का बाप. इस दौरान में बहुत कुछ बदल गया है, लेकिन डायरी लिखने का मेरा वही पुराना जुनून है. सोने से पहले जब तक दिन में पेश आयी हुई महत्वपूर्ण घटनाओं को लेखनीबद्ध न कर लूं रात को नींद नहीं आती. अब तो यह सारी घटनाएं कालेज की रंगीन और सपनों से भरपूर सुगंधित वातावरण से निकल पुलिस की खुरदरी जिंदगी से वाबस्ता हो गयी हैं. कभी-कभी मैं सोचता हूं, मुझे पुलिस-अफसर न होना चाहिए था. एक कहानीकार होना चाहिए था. एक चित्रकार होना चाहिए था. मुझसे किसीकी आंखों में आंसू नहीं देखे जाते. कभी-कभार मुझे उस चोर से भी हमदर्दी हो जाती है जो दिन-दहाड़े डाके डालता है. कोई मजबूरी ही तो उससे यह कराती है. उसे अगर अच्छा माहौल मिला होता, अच्छी शिक्षा मिली होती तो वह भी इंजीनियर बन सकता था, वकील बन सकता था. किसी दफ्तर का बाबू बन सकता था. जब किसी मासूम और निर्दोष का खून बहता है, तो मेरी आंखों से आंसू टपकते हैं. उस समय मैं उन आंसुओं की कहानी लिखना चाहता हूं. उन पात्रों को अपने कैनवास पर फैलाना चाहता हूं. आज ही की बात है. वीणा कुमारी का केस अब भी मेरे पास है. यह औरत जितनी खूबसूरत है, उसकी जिंदगी की कहानी उससे ज्यादा बदसूरत है. उसकी हंसी देख कर मोनालिजा की हंसी तो याद आती है, लेकिन यह हंसी कितनी कटु है! उसके काले-स्याह घने बालों को देख कर अंधेरे में डूबी हुई रात याद आती है जो प्रत्येक वस्तु को समेटना चाहती है. उसकी आंखों में वही गहराइयां हैं जो उमर-खय्याम की रुबाइयों में हैं. देखिए न, मैं किसी कहानी के पात्र की शक्ल-सूरत बयान करने लगा. वीणा की कहानी दरअसल. . .अब मुझे नींद आ रही है. रात के बारह बज चुके हैं और मुझे नित्य की तरह पौ फटने से पहले जागना है. पुलिस की जिंदगी का यह पक्ष मुझे पसंद नहीं. आप सोने के मूड में हों तो फोन की. . .

(डी. एस. पी. इनाम की डायरी का एक अधूरा पन्ना)

हलफिया बयान

जी हां, मेरा नाम पंडित दीनानाथ है. बाप का नाम पंडित माधो राम है. मैं बांजी पुरा में रहता हूं. मेरी उम्र लगभग साठ वर्ष की है. मैं कश्मीरी कालीनों का व्यापार करता हूं और प्रायः सरदियों में कुछ अपने स्वास्थ्य के कारण और कुछ अपने व्यापार के कारण देश के विभिन्न स्थानों का दौरा करता हूं. अब की बार मैं गो...

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

● टी. ए. राणा

गया था. तीन महीने वहां रहने के बाद जब बंबई से दिल्ली पहुंचा और पठानकोट आने के लिए ट्रेन में बैठा तो मैंने एक नौजवान औरत को पहले ही से बैठे हुए देखा. वह सहमी हुई थी. उसकी नजरें बार-बार लोगों को तक रही थीं. जब ट्रेन चल पड़ी तो मैंने उसके चेहरे पर एक प्रसन्नतापूर्ण संतोष देखा. डिब्बे में तीन अन्य सवारियां थीं. दो मर्द और एक औरत. ट्रेन का सफर चुपचाप गुजरा. वैसे भी मैं सफर में ज्यादा बातें करने का आदी नहीं हूं. मैं उस समय ज्यादा बातें करता हूं जब मेरे सामने कालीन का कोई ग्राहक हो और वह कालीन खरीदने में अरुचि दिखा रहा हो. रात बीत गयी और दूसरी सुबह जब मैं कश्मीर जाने के लिए बस में बैठा तो मैंने उसे अपना हमसफर पाया. उसकी सीट मेरी सीट के साथ ही थी और इस तरह हमें एक दूसरे के साथ बातचीत करने का अवसर मिला. बातों-ही-बातों में पता चला कि उसका नाम वीणा कुमारी है. कश्मीर देखने की बचपन ही से हसरत थी और अब एक सैलानी बन कर आ रही है. मेरी इस बात पर कि वह अकेली क्यों आ गयी है, उसने बताया कि उसकी मां बूढ़ी है और उसकी नजर भी बहुत कमजोर है. इसलिए वह न आ सकी. बंबई में उनका एक बड़ा फ्लैट है जिसका किराया दो हजार मासिक मिलता है. बाप भी मरते समय पचास हजार रुपये छोड़ गया था. जब हम दूसरे दिन श्रीनगर पहुंचे तो मेरे दिल में उसके लिए पितृत्व-स्नेह उमड़ आया था. मैंने उसे अपने घर रहने की पेशकश की तो वह तुरंत राजी हो गयी. लेकिन यह मेरी गलती थी. उसके चेहरे की मासूमियत मुझे धोखा दे गयी. मैं शरीफ घराने से संबंध रखता हूं. हमारे अड़ोस-पड़ोस में भी सभी शरीफ लोग रहते हैं, लेकिन मैंने महसूस किया कि वीणा अपना अधिक समय खुली खिड़की में बिताती है और बन-ठन कर रहने का प्रयत्न करती है. मैं अपने अड़ोस-पड़ोस में नौजवान लड़कियों का आना-जाना देखता रहा. वीणा सदा अकेले बाहर जाने की कोशिश करती थी और इससे पहले कि मैं अपनी जबान खोलता, वह भाग गयी. मैंने ही पुलिस में रिपोर्ट दी. उसका हुलिया बताया.

(हस्ताक्षर) पंडित दीनानाथ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जीवन में कई खुशियों के पल होते हैं

सरदर्द को आपकी खुशियां बिगाड़ने न दीजिये

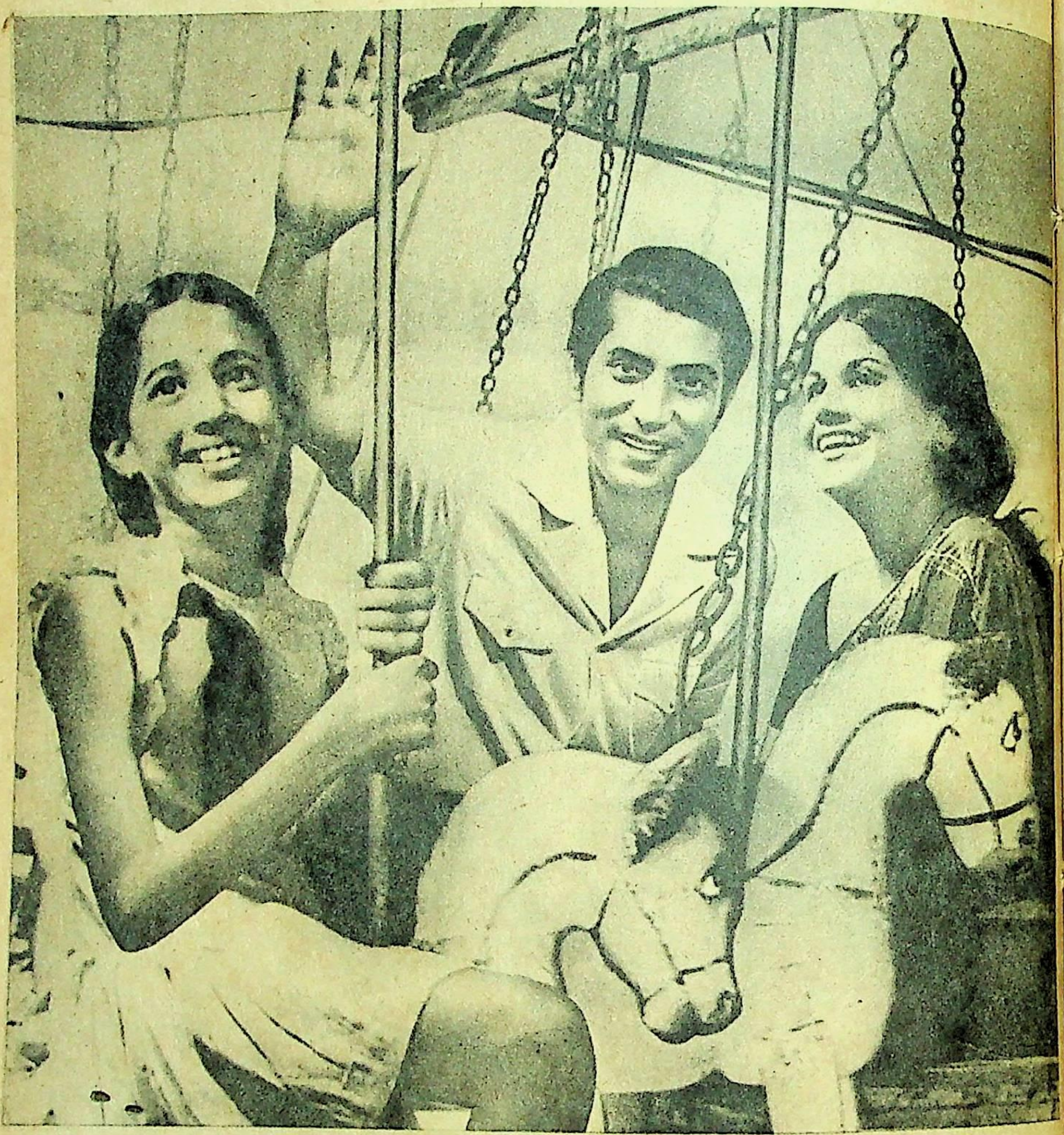

२ ऐस्प्रो लीजिये

ASPRO

Nicholas

माइक्रोफ़ाइन्ड ऐस्प्रो दर्द को जल्दी खींच निकालता है

A.G.63.HN

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिखित बयान

मेरा असली नाम वीणा नहीं. वीणा तो मेरा बाजारी नाम है. मेरा असली नाम साधना है, लेकिन मैं अपने बाजारी नाम से ही जानी-पहचानी जाती हूं. लोग कहते हैं, मैं बहुत खूबसूरत हूं. लेकिन मैं जब भी आईने में अपनी सूरत देखती हूं तो मुझे अपने आपसे, अपने वजूद से नफरत हो जाती है. काश! मैं बदसूरत होती. मेरा रंग धुएं की तरह काला-स्याह होता तो शायद मैं बाजार में बिकने वाली कोई बेजान वस्तु न होती. जी हां, मैंने उसी वातावरण में अपनी जवान रातें बितायी हैं जहां का प्रत्येक क्षण घिनौना है. जहां पायल की झनकार से चांदी के सिक्कों की आवाज उभरती है, जहां तरन्नुम से भरपूर गीतों की लय में जवान धड़कनें बिकती हैं. वह साधना तो कब की मर चुकी है जो एक अपंग मां का आखिरी सहारा थी. वह साधना अब कहीं नहीं है जो लखनऊ के कानवेंट में पढ़ती थी. उसके वह कहकहे बेजान हो गये हैं जो होस्टल-लाइफ में एक तूफान मचाया करते थे. कहते हैं, जब मैं चार वर्ष की थी तो एक रेलगाड़ी की दुर्घटना में मेरा बाप मर गया. मेरी मां अपंग हो गयी. मेरे बाप ने बीमा करा रखा था, जिसकी रकम मेरी मां को मिल गयी. मुझे मां ने होस्टल में दाखिल करा दिया. मैं मां से मिलने एक बार गांव गयी थी, जब एफ. ए. करने के बाद मैंने बी. ए. में प्रवेश लिया तो मैं मां को यह खुशखबरी सुनाने के लिए गयी. लेकिन मेरे दुर्भाग्य के दिन समीप आ गये थे. मेरी मां केवल एक रात पहले मर गयी थीं. उस घर की दीवारें मेरे लिए अजनबी बन चुकी थीं. मेरा सहारा अब केवल आंटी थी. आंटी और मेरा वैसे कोई रिश्ता न था. लेकिन वह प्रायः मेरी मां की देखभाल किया करती थी और मैं उसे बचपन ही से आंटी कहती आयी थी. वह प्रायः मां से मिलने के लिए या मां का कोई संदेशा देने के लिए लखनऊ भी आती थी. अब इसके सिवा मेरा कोई सहारा न था. मैंने जब उसके चरणों में सिर झुकाया तो उसने मुझे अपने सीने से लगाया और मुझे बंबई ले गयी जहां उसके कथनानुसार उसका भाई रहता था. गगनभेदी भवनों के नीचे से गुजरते हुए जब मैंने एक गंदी बस्ती में कदम रखे तो मेरा दिल कांप-कांप उठा. आंटी मेरा सौदा कर के रफूचक्कर हो गयी थी. मेरा ग्राहक कोई और था और उस समय मुझे पहली बार मालूम हुआ कि इस दुनिया में इंसानों का भी व्यापार होता है. मुझे शीघ्र ही पता चला कि मैं अकेली नहीं हूं, मेरी और भी बहुत साथी हैं. हर रंग की, हर नस्ल की, हर धर्म की. इस व्यापार में शायद सारे रंग, सारी नस्ल, और सारे धर्म एक हो जाते हैं और फिर मैं भी उनमें शामिल हो गयी. उसी माहौल में रंग गयी. शनैः शनैः वह भरोसा करने लगे और मैं भागने का रास्ता ढूंढ़ती रही और एक दिन न जाने कितनी मुद्दत के बाद मैं वहां से भागने में सफल हो गयी और जब मैंने टिकट खरीदने के लिए कांउटर की ओर हाथ बढ़ाया तो सबसे पहले जो नाम मेरे होठों पर आया—वह कश्मीर था—ऋषि-मुनियों की धरती! मैंने सोचा, मैं नया और सम्मानित जीवन इस महान धरती में शुरू कर सकती हूं और यह सत्य है कि मैंने कश्मीर में एक नये सुखदायक जीवन की मशाल जलती हुई देखी और यह बिलकुल गलत है कि मैं अपना सारा समय सजाने-संवारने में व्यय करती थी. मैं अकेली बाहर नहीं जाती थी. मैंने जब भी पंडित जी के घर के आंगन से बाहर कदम रखा तो मेरे साथ उनका पोता आनंद हुआ करता था. उस दिन भी आनंद मेरे साथ था.

साधना उर्फ वीणा कुमारी

बंबई पुलिस

आपके पत्र के उत्तर में आपको सूचित किया जाता है कि वीणा कुमारी नामक किसी स्त्री के फरार होने की रिपोर्ट हमारे यहां दर्ज नहीं है, पर जांच के बाद पता चला है कि कोलाबा से वीणा नामक एक स्त्री भाग गयी है. आपकी प्रेषित तसवीर उसी स्त्री की है, पर वह किसी जुर्म की अभियुक्त नहीं है.

असिस्टेंट कमिशनर पुलिस (सेंट्रल)

मैं जानता हूं कि साधना किसी जुर्म की अभियुक्त नहीं है, पर इस सोसाइटी, इस समाज ने उसकी निर्दोषता और मासूमियत के लिए जो सजा दी, वह उसे उस दिन से काट रही है, जब उसकी अपंग मां मर गयी थी...

(डायरी का एक पन्ना)

मिसेज आचार्य,

मैं साधना के बारे में आपको फोन पर पूरी दास्तान सुना चुका हूं. जांच-पड़ताल से यह बात साबित हो चुकी है कि साधना फिर उस वातावरण में नहीं जाना चाहती जिसे छोड़ने के सपने न जाने कब से वह देख रही थी. पुलिस ने उसे मुक्त कर दिया है, लेकिन मैं निजीतौर पर समझता हूं कि अगर उसे कोई स्थायी सहारा न मिला तो उसका भविष्य और भयानक हो जायेगा. जब तक वह अपने भविष्य को संवारने के लिए कोई रास्ता तलाश नहीं करती, वह आपके आश्रम में रह सकती है. वह आपसे मिलने आ रही है. आशा है आपकी निगरानी में वह सम्मानित जीवन व्यतीत करने के योग्य होगी.

सम्मान के साथ आपका,

इनाम (डी. एस. पी.)

एक अखबारी खबर

'आवाज' के इन ही कालमों में आप साधना उर्फ वीणा कुमारी की जीवन-कथा पढ़ चुके हैं. कल इस कहानी के एक नये और खूबसूरत परिच्छेद का आरंभ उस समय हुआ जब आनंद नामक एक पढ़ा-लिखा नवयुवक वीणा कुमारी का जीवन-साथी बना. यह विवाह आश्रम में हुआ और मिसेज आचार्य ने कन्या दान के कर्त्तव्य सम्पन्न किये. आनंद के इस साहसपूर्ण कदम की प्रत्येक वर्ग में सराहना की जा रही है. इस अवसर पर शहर के राजनीतिक और अन्य सम्मानित नागरिक उपस्थित थे. **(दैनिक आवाज)** □□□

(अनुवाद : सुरजीत)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देवदासी • माताहारी

प्रख्यात नर्तकी माताहारी अपने आपको भारतीय माता-पिता की संतान कहने में गर्व का अनुभव करती थी, जब कि तथ्य यह है कि भारतीय होना तो दूर, उसने भारत की यात्रा तक कभी नहीं की थी. अपनी डायरियों में उसने अपने काल्पनिक रूप का वर्णन किया है. फ्रांसीसी सरकार ने माताहारी को हिटलर का जासूस मान कर गोली से उड़ा दिया था. यहां प्रस्तुत है उसकी डायरी का एक रोचक अंश.

यह वट मेरे लिए सर्वाधिक धार्मिक जगह है क्योंकि यही वह मंच है जिस पर मेरी मां नृत्य किया करती थी. उसकी नन्हीं, नाजुक, गेहुंए रंग की देह चिरंतन गोधूलि में भंगिमाओं और मुद्राओं के सहारे एक माया-जाल का निर्माण कर देती थी—ये पवित्र मुद्राएं ही विष्णु के प्रेम की भाषा को वायु में अंकित कर देती हैं. उसे उन पुजारियों की प्रशंसापूर्ण दृष्टि की प्राप्ति भी हुई, जिन्हें प्रसन्न कर पाना सरल नहीं होता . . . लेकिन सामान्य जन उसके पूजक थे. वह 'सर्वशक्तिमान' की कीर्ति के लिए नृत्य करती थी, लोगों को आनंदित करने के लिए नाचती थी,

ओह! कितना-कितना प्यार था मुझे उन खामोश पथरीली मूर्तियों से जो मुझसे अपनी ही भाषा में बात करती थीं! विशेष तौर पर जानवरों की मूर्तियां : चालाक सर्प, हमेशा क्रुद्ध रहने वाले शेर—मुड़ी हुई मूंछों वाले और जिनके पुट्ठे उतनी ही खूबसूरती से गढ़े गये थे, जितनी खूबसूरती से नंदी की फौलादी जांघें. कितना अच्छा लगता था कृष्ण के सात स्वर्गों की प्रतीक सात छतों में से किसी एक में छिप जाना! और सपने देखना कि मैं इनकी सर्वाधिक प्रिय नर्तकी हूं, उनके स्वर्ण सप्त-सिंहासन के समक्ष उनका ही नृत्य दिखाती हुई . . .

मैं छोटी ही थी जब मुझे शिव मंदिर की भूमिगत गुफा में लाया गया था. मेरे साथ दस लड़कियां और भी थीं. हमें नृत्य का प्रशिक्षण दिया जाना था. यह नृत्य यूरोपीय नृत्यों जैसा नहीं था. गंवार यूरोपीय लोग यह कभी समझ भी नहीं सकते कि भारतीय 'नृत्य' और कुछ नहीं, विधिगत मुद्राओं की अंतहीन श्रृंखला होता है जो कि एक निश्चित स्वर-ताल के अनुसार चलता है. धीरे-धीरे हम विभिन्न प्रतीकों की गहन, पुष्पवत गतियों से परिचित होते गये.

और फिर वह समय भी आया जब मुझे यह आदर मिला कि मैं महान शिव की 'चुनी हुई नर्तकी' बनी. मैं तो सोच भी नहीं सकती थी! . . . अब मेरा पाठ्य-क्रम एकदम भिन्न प्रकार का था. अब मुझे काव्य और पवित्र साहित्य का अध्ययन करना था और '**प्रेम सागर**' के अनगिनत श्लोकों को याद करना था जिनके नाम मात्र से ही मेरी संज्ञाएं उद्वेलित होने लगती थीं, जब कि वे मानवीय संबंधों की व्याख्या भी करते थे. मुझे सेक्सों के बीच के संबंधों का पता चला और यह जान कर मैं हैरान रह गयी कि मनुष्य कितनी तरह की वासनाओं के वशीभूत हो कर जीता है! लेकिन भावनाएं जितनी भी हों, उन्होंने उन पर स्वामित्व पाने के अनगिनत तरीके भी ईजाद कर डाले हैं. मुझे अंधेरे-लाल रहस्यों का पता चला जो कि देह की रहस्यमयता की व्याख्या करते हैं. मुझे गुह्यांगों के सही अर्थों का भी पता चला. प्राय: मैंने अपने आपका स्पर्श भी किया था, लेकिन मेरा एहसास हमेशा कुछ इस तरह का बना रहा जैसे मैं किसी को नींद में छू रही होऊं, और जिसके जाग जाने से मुझे हानि पहुंचेगी. अपने गुरुओं के संग मिल कर मैंने कालिदास के कई दृश्यों का अध्ययन किया और जब उन्होंने इन कविताओं में चंद्रकिरणों की भांति छिपी संवेदनाओं की मेरे लिए व्याख्या की तो मैं हैरान रह गयी. '**सिंहासन-बत्तीसी**' और भक्तमल से मुझे प्रेम ही हो गया था . . .अंत में हम उन रीतियों की ओर मुड़े जो प्रणय-जीवन का नियमन करती हैं. मैंने '**गीत गोविंद**' की पंक्तियों को बार-बार पढ़ा और उन्हें कंठस्थ करने की कोशिश की. मैंने उनके बारे में सोचा और स्वयं को उनके अर्थों के अनुसार प्रशिक्षण देने की कोशिश करने लगी . . .काम मुझ पर पूरी तरह छा गया. अब मुझे समझ में आया कि मुझे '**कामसूत्र**' की उन अद्भुत पंक्तियों को कंठस्थ करने के लिए क्यों कहा गया था . . . वात्स्यायन ने किस कदर साफ निर्देश दिये हैं देवदासी के लिए, कि उसे बिस्तर में किस तरह का बर्ताव करना है, कि अपने प्रेमी को कैसे रिझाना है, कि कैसे उसे संतुष्टि देनी है! . . . □□□

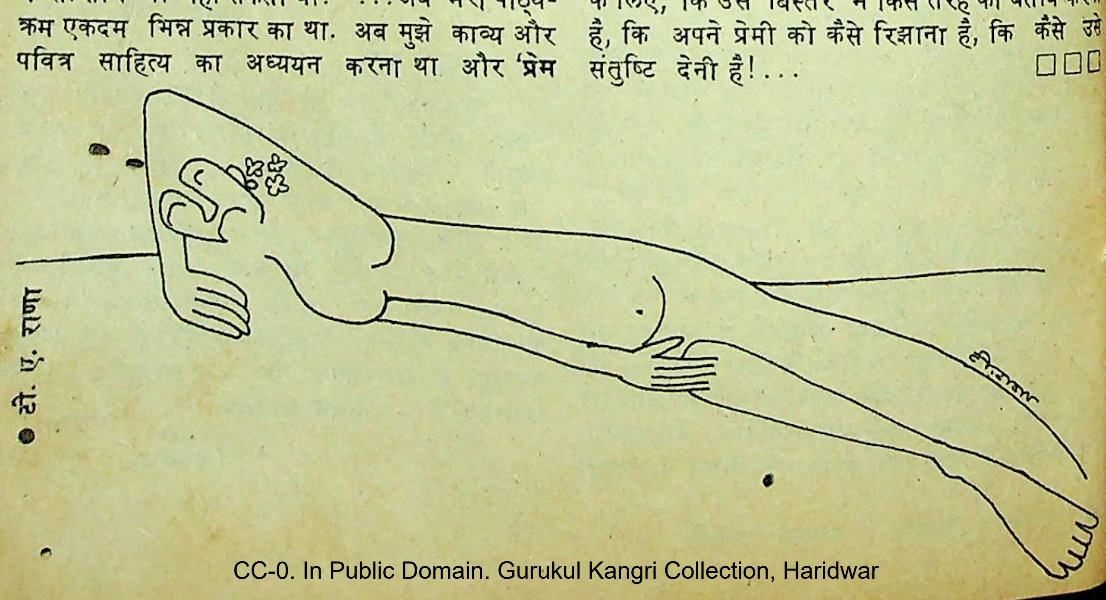

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ठोकर गली

• नसीम दुर्रानी

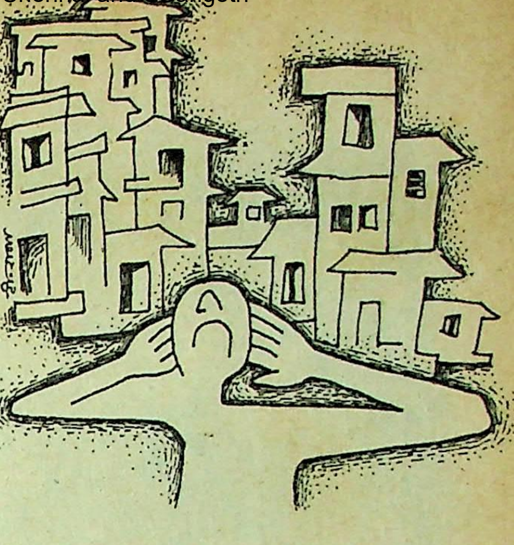

• टी. ए. राणा

गली वीरान हुए आज तीसरा दिन था.

और इन तीन दिनों में उसने सिर्फ ढाई रुपये कमाये थे. ढाई रुपये, जिसमें एक रुपये की उसने पासपोर्ट साइज की तीन तसवीरें बनायी थीं और डेढ़ रुपये में एक फिल्म की डवेलपिंग करके उसके प्रिंट निकाले थे.

आज से तीन दिन पहले जब यह गली यों वीरान न थी, वह बहुत आसानी से दस-बारह रुपये रोजाना कमा लेता था.

ठोकर गली जो सुबह से रात गये तक हर तरह के लोगों से भरी रहती थी, अब उजाड़ और सुनसान नजर आ रही थी. इस्मतफरोशी अवैध घोषित कर दी गयी थी और जबरदस्ती ठोकर गली और उसके आस-पास का इलाका खाली करा लिया गया था.

खुदाबख्श भी तो तीन दिन से गायब था. अपनी छोटी बहन लाली को, जिसका गली की गाने वालियों में खासा नाम था, साथ ले कर वह रोजाना शहर में इधर-उधर निकल जाता था.

खुदाबख्श उसका स्थायी ग्राहक भी था. खुदाबख्श को फिल्म में हीरो और लाली को हीरोइन बनने का बहुत शौक था. इसीलिए वह दिन में एक बार उसके स्टूडियो में आ कर एक पोज जरूर देता था. इधर कुछ दिनों से खुदाबख्श की यह इच्छा थी कि वह शकीला के साथ फोटो खिंचवाये.

शकीला खूबसूरती की दृष्टि से ठोकर गली में नंबर वन थी. इसलिए पूरी गली में सिर्फ शकीला की तूती बोलती थी. इधर खुदाबख्श का शकीला से इश्क जनून की हद तक पहुंच चुका था. लेकिन उसकी आरजू किसी तरह पूरी न हो सकी. गली ही उजड़ गयी.

कारोबार की यही हालत रही, तो फिर क्या होगा? वह सोचने लगा. क्या इस तरह वह अपनी बीवी, बूढ़े मां-बाप और इस स्टूडियो का खर्च चला सकेगा?

दोपहर ढल चुकी थी. वह स्टूडियो से बाहर आ गया. गली में दूर-दूर तक सन्नाटा था. कितनी ही देर वह बड़े दुख से गली के मकानों को घूरता रहा. क्या उसे भी यह गली छोड़ देनी पड़ेगी?

वह स्टूडियो से बाहर लगे हुए फ्रेम और शो-केस धीरे-धीरे उठा कर अंदर रखने लगा. फिर स्टूडियो का दरवाजा बंद करके यों ताला लगाने लगा, जैसे वह सदा के लिए इस दुकान में ताला लगा रहा हो.

उसके कदम अपने आप घर की ओर उठ गये. इतनी जल्दी घर आने पर उसकी युवा और सुंदर बीवी हैरान रह गयी.

—खैरियत! तबियत तो ठीक है? बीवी ने पूछा.

वह चुप रहा. तब उसकी बीवी उसके करीब आयी और आंखों ही आंखों में अपना सवाल दुहराया. नयी बीवी थी. वह अभी से कारोबार के बारे में उसे कुछ बता कर परेशान नहीं करना चाहता था.

—कुछ नहीं. . .आओ कहीं घूमने चलते हैं. . . मेरी तबीयत सुबह से कुछ ठीक नहीं है. और थोड़ी देर बाद वह अपनी जवान और खूबसूरत बीवी के साथ शहर के सर्वोत्तम पिक्चर-हाउस में बैठा था. उसकी बीवी उसके पहलू में बैठी थी. उसके बुरके का नकाब उलटा हुआ था. लोग थे कि खामखाह अपनी सीटों से उठ-उठ कर उन दोनों को देख रहे थे.

उस सुंदर और उन्मादपूर्ण वातावरण में उसने थोड़ी देर के लिए स्वयं को भुला दिया. बीवी के हाथ में हाथ डाले बैठा रहा.

दूसरे दिन स्टूडियो पहुंच कर वह ताला खोल ही रहा था कि एक खूबसूरत और नये मॉडल की गाड़ी आ कर स्टूडियो के सामने रुक गयी. यह गाड़ी उसकी जानी-पहचानी थी. गाड़ी से एक स्वस्थ शरीर का इनसान उतरा.

यह गली जब इस तरह वीरान न थी, यह गाड़ी रोजाना इस गली में आती थी.

—असलाम अलैकुम! उसने कहा.

—असलाम अलैकुम! उसने भी घबराहट में सलाम दुहरा दिया. —आइए सेठ साहब, तशरीफ लाइए! बड़े अरसे बाद आये आप. . .उसने अपने तौर से मक्खन लगाना चाहा.

—हां, कुछ व्यस्त था, सेठ साहब मुसकराते हुए बोले, और आज जरा फुरसत मिली तो सोचा, लाओ तुम्हारे पास ही चला जाये.

—फरमाइए! क्या सेवा कर सकता हूं.

—सेवा! सेठ साहब शब्द पर जोर देते हुए उसके बहुत समीप हो आये और जेब से एक विजिटिंग कार्ड और एक सौ रुपये का नोट निकाल उसकी ओर बढ़ा दिया. —वह कल शाम पिक्चर-हाउस में जो तुम्हारे साथ माशूक था न, उसे आज रात इस पते पर पहुंचा देना. बस यही एक सेवा है. □□□

(संक्षिप्त रूपांतर : सुरजीत)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Sobhagya NS-11 Hin

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विक्रमोर्वशीयम्

यह कहानी वैदिक काल की है. इसे ऋग्वेद से लिया गया है. कालिदास ने भी, 'विक्रमोर्वशीयम्' नाटक के लिए ऋग्वेद के एक सूक्त से लिया था.

त्रिवेणी के संगम पर चंद्रवंशी राजाओं के विक्रम का केंद्र प्रतिष्ठानपुर बसा था. राजप्रासाद के पीछे गंगा नदी बहती थी. एक दिन प्रतिष्ठानपुर का युवा राजा पुरुरवा महल की छत पर खड़ा नगर की शोभा देख रहा था तभी उसे मोहक संगीत सुनायी दिया. दिव्य संगीत की स्वर लहरियां आकाश की ओर से आ रही थीं. राजा पुरुरवा ने आकाश में प्रकाशित यान को देखा. यान गंगा के तट की ओर आ रहा था.

जब यान गंगा के तट पर उतरा तो उसमें से एक दिव्यांगना बाहर आयी. उसके साथ कई सुंदरियां थीं, जो आपस में हंसी-मजाक कर रही थीं. वह दिव्यांगना देवराज इंद्र की प्रमुख देवनर्तकी अप्सरा उर्वशी थी. उसके साथ उसकी परिचारिकाएं और इंद्र की ओर से विशेष रूप से नियुक्त उनका अंगरक्षक चित्ररथ था.

गंगा तट देव तरु के सुंदर फूलों की मादक सुगंध से भर उठा था. उर्वशी के दिव्य अंगों को छू कर आया हुआ सुरभित समीर पुरुरवा के युवा शरीर से टकरा कर उसे रोमांचित और विचलित कर रहा था.

राजा पुरुरवा एकटक उर्वशी की रूपराशि निहारता रहा. उर्वशी ने गंगा-स्नान के लिए अपने वस्त्र उतारे. उसकी नग्न-प्राय रूप शिखा से विस्तृत गंगा तट जगमगा उठा. राजा पुरुरवा ने देखा कि गंधर्व चित्ररथ उर्वशी के शरीर पर आलेप कर रहा है.

उर्वशी कह रही थी—इंद्र की प्रणयप्राप्ति के प्रयत्न कुछ स्वाभाविक नहीं चित्ररथ. वृद्ध वृत्र की मार से जर्जर इस इंद्र में न तो मादकता का सौरभ है, न नवीन प्रयास का चातुर्य. . .तुम पाषाण हो चित्ररथ.

—मैं इंद्र का सेवक हूं उर्वशी , उनके विलास-कोश का रक्षक. चित्ररथ बोला.

—तुम अभागे हो चित्ररथ, क्लीव, अलिंद पर खड़े पुरुरवा के मुंह से अनायास ही निकल गया. उसे लगा कि चित्ररथ सचमुच ही अभागा और क्लीव है, जो ऐसे दिव्य सौंदर्य का स्पर्श और निमंत्रण पा कर भी इंद्र-भय से जड़ बना हुआ है.

उर्वशी और चित्ररथ दोनों ही चौंक कर ऊपर देखने लगे. उर्वशी और पुरुरवा के नेत्र मिले और दोनों ही एक दूसरे पर आसक्त हो गये. चित्ररथ उर्वशी को बलात् देवलोक ले गया. उर्वशी ने इंद्र से आग्रह किया कि वह वृत्र के विरुद्ध राजा पुरुरवा की सहायता प्राप्त करे. इस प्रकार पुरुरवा की सहायता पा कर इंद्र वृत्र को पराजित कर सका और पुरस्कारस्वरूप पुरुरवा को उर्वशी मिल गयी लेकिन इस शर्त के साथ कि जिस दिन उर्वशी पुरुरवा को नग्न देख लेगी, उसे देवलाक लौट जाना पड़ेगा. उर्वशी अपने साथ अपने प्रिय मेमनों को भी ले गयी. रात्रि के घने अंधकार में पुरुरवा उर्वशी के साथ संभोग-सुख भोगने लगा.

उर्वशी के अभाव में समस्त देवलोक नीरस हो उठा था. इंद्रसभा बीरान और उदास-सी थी. देवता इंद्र पर दबाव डाल रहे थे कि किसी भी तरह उर्वशी को वापस बुलाया जाये. इंद्र भी स्वयं को रसहीन अनुभव कर रहे थे. उन्होंने देवताओं के साथ कई योजनाओं पर मंत्रणा की. अंत में एक योजना स्वीकृत की गयी और उसी के अनुसार चित्ररथ को प्रतिष्ठानपुर भेजा गया.

एक दिन चित्ररथ उर्वशी के मेमने चुरा कर ले चला. उर्वशी ने पुरुरवा से सहायता की पुकार की. पुरुरवा नग्न ही मेमने छुड़ाने दौड़ पड़ा और उर्वशी को उसके नग्न रूप के दर्शन हो गये. इस प्रकार शर्त के अनुसार उर्वशी को देवलोक वापस जाना पड़ा और राजा पुरुरवा उर्वशी के वियोग में तड़पने लगा.

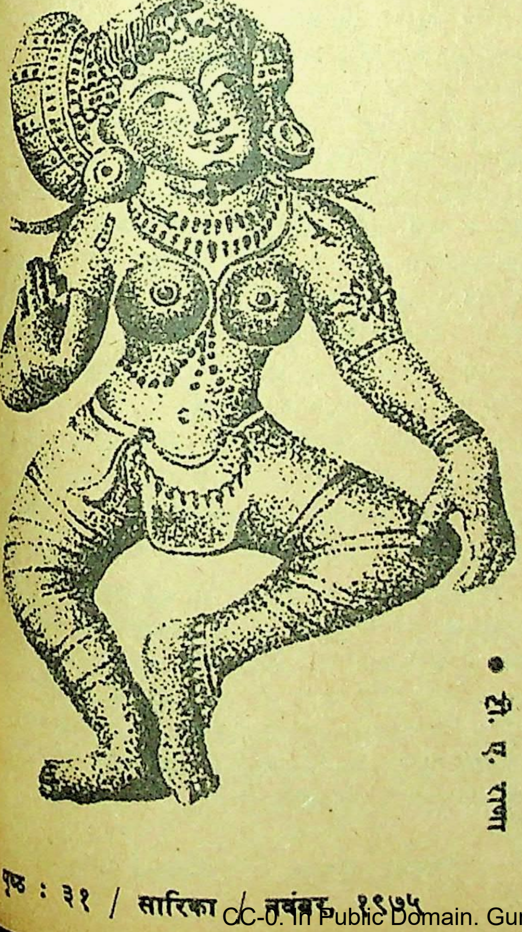

• डी. ए. रत्ना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

महाभारत का दूसरा युद्ध • जोगेंद्र पाल

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पहला अध्याय

द्रौपदी ने महाभारत के पाठ से निपट कर अपने दोनों हाथ माथे पर बांध लिये और बड़ा सहृदयता से प्रार्थना करने लगी—ऐ भगवान! ऐसे लाज रखना जैसे माता द्रौपदी की रखी थी.

—तुम्हारा तो धंधा ही जिस्म बेचना है. फिर लाज कैसी?

उसने मुझे उत्तर दिया अगर आबरू बनी रहे तो जिस्म बेचने से क्या होता है? मेरी तो यही प्रार्थना है कि परदे में मेरा धंधा चलता रहे और आबरू से रोटी मिलती रहे.

दूसरा अध्याय

पाप-रात्रि के पश्चात दूसरे दिन जब द्रौपदी की सजल आंखें खुलतीं तो यों लगता जैसे रात्रि के पिछले पहर में यह स्त्री हंस-हंस कर सो गयी थी. और सपने में निरंतर रोती रही थी और रो-रो कर उसकी सारी थकन दूर हो गयी थी.

—द्रौपदी?

—हां!

—क्या तुम्हें रो कर आराम मिलता है?

—जब मैं रोती हूं तो मेरा बाबुल मेरे सिरहाने आ खड़ा होता है. मेरा खलंडरा भाई भी दीवारों से निकल कर मेरे सिर पर हाथ रख देता है और यह सुखदायक यादें रुई के गालों की तरह मेरे गर्म-गर्म आंसुओं से भर जाती हैं और मेरे दिल के जख्म धोने लगती हैं.

—फिर तुम अपने आप से छुप कर क्यों रोती हो?

—इसलिए कि कहीं मुझे अपने ग्राहकों पर बाप-भाई का गुमान न होने लगे.

तीसरा अध्याय

—द्रौपदी

—कहो.

—मेरी एक बात मानोगी?

—कहो.

—यह धंधा छोड़ दो .

—क्यों?

—जब किसी की मैली नजर तुम्हारे गोरे-गोरे रूप पर पड़ती है तो मैं आपे से बाहर हो जाता हूं.

—रूप गोरा उसी समय लगता है जब नजर मैली हो. भगवान कृष्ण ने कहा है कि . . .और उसे याद आया कि वह तो महाभारत पढ़ने के लिए बैठी थी. फिर अपनी बात अधूरी छोड़ कर उसने मेरी ओर से मुंह मोड़ लिया.

चौथा अध्याय

महाभारत द्रौपदी की प्रिय धार्मिक पुस्तक थी. —जीवन एक युद्ध है, वह मुझे समझा रही थी अगले वक्तों में लोग तलवारों से लड़ा करते थे. पर आजकल दुश्मन के खून से तलवार नहीं रंगी जाती हैं. इन दिनों दुश्मन की तबाही के लिए सब से अच्छा हथियार मुसकराहट है.

मुसकरा-मुसकरा कर उसने मुझे पछाड़ दिया.

—और उसका कारण यह है कि आजकल सब एक दूसरे के दुश्मन हैं. सभी लोग दुश्मन हों तो आदमी या तो बम गिरा कर सारी दुनिया को एकदम खत्म कर देता है या फिर हंसी-हंसी में एक-एक कर के सब को समाप्त करता है. उसके स्वर में एकदम दार्शनिक संकल्प का तनाव आ गया, और जब तक सारे संसार का निशान नहीं मिट जायेगा, हम इसी प्रकार अपने भाइयों और दोस्तों को फुसला-फुसला कर तबाह करते रहेंगे. नहीं? वह अपने को ठीक करने के लिए जरा रुकी, हमारा कोई भाई और दोस्त नहीं. भगवान कृष्ण ने अर्जुन को उपदेश दिया था कि तेरा कोई भाई नहीं. कोई चचा नहीं, कोई मित्र नहीं. तेरा कोई नहीं. कोई किसी का नहीं. कोई किसी का नहीं. . .? लेकिन उसके विचार का भाव सहसा एक ढलान की ओर मुड़ गया और उसकी आवाज तेज हो गयी, भगवान कृष्ण महान हैं. वह मेरे स्वामी हैं. एक बार वे सोये पड़े थे कि अर्जुन और दुर्योधन युद्ध में उनकी सहायता प्राप्त करने के लिए आये. अर्जुन उनकी पलंग की पायंती पर बैठ गये और दुर्योधन सिरहाने . जब भगवान की आंख खुली तो अर्जुन से कहने लगे—पहले मैंने तुम्हें देखा है. बताओ मेरा सारी सेना लेना चाहते हो या केवल मुझ? दुर्योधन घबरा गया कि कहीं अर्जुन सेना न मांग बैठे. किंतु अर्जुन ने निस्संकोच कहा—भगवान केवल आपको!

श्रद्धा से द्रौपदी की आवाज मानों गंगा में गोते खा-खा कर अपने पाप धो रही थी.

—महाभारत के उस अध्याय पर पहुंच कर मेरा मन भी सदा अर्जुन के साथ-साथ बोल उठता है—भगवान, केवल आपको . मुझे आपकी सारी सेना नहीं चाहिए. आप मुझे केवल अपना आप दे दीजिए.

मैं सोचने लगा कि द्रौपदी भी दुर्योधन की तरह भगवान कृष्ण के सिरहाने बैठी होगी इसीलिए उसके भाग्य में मर्दों की सारी सेना लिखी गयी. अगर उसे एक भगवान मिल जाता तो वह भी किसी सुहागिनी की तरह जीवन का रण जीत लेती. आज शाम को अपने धंधे पर बाहर निकलने के बजाय वह भगवान कृष्ण की आरती उतारती रहती.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पांचवां अध्याय

दूसरे दिन भी सुबह को द्रौपदी भगवान कृष्ण की आरती उतार रही थी. उसका धुला हुआ गोल, सफेद चेहरा चांदी के बेदाग थाल की तरह चमक रहा था और आंखें घी से भरे हुए दो चिरागों की तरह जल रही थीं.

कई दिन से मैं द्रौपदी के बारे में बहुत कुछ सोचने लगा था.

शायद. . .शायद . . मैं अपना सिर झटक देता— नहीं. . .यह भला कैसे हो सकता है? मुझे उससे मुहब्बत नहीं. मुहब्बत तो कुछ और ही होती है.

आज सुबह काम पर जाने के बजाय मैंने अपना मुंह उसके घर की ओर मोड़ दिया और रास्ते में अपने आपको समझाता रहा, यह मुहब्बत नहीं, मेरे दिल-दिमाग की एक बेचैन आदत है और बस. .

वह आरती उतारती रही और भगवान को गा-गा कर बुलाती रही—तुम स्वामी मैं अबला.

यह आवाज? मानों पाप पुण्य से मुंह छुपा कर अपना गला घोंट लेना चाहता हो.

—द्रौपदी?

वह मेरी ओर केंद्रित न हुई.

—तुम स्वामी , मैं अबला .

आरती खत्म कर के वह मेरी ओर देखने लगी—आज तुम काम पर नहीं गये?

—एक बात कहूं, द्रौपदी? मेरा खयाल है कि मैं तुमसे मुहब्बत करता हूं.

—क्या इसीलिए काम पर नहीं गये?

—द्रौप. . .!

—नहीं! तुम मुझसे मुहब्बत नहीं करते . अपनी कामना से मुहब्बत करते हो.

—द्रौपदी! आओ हम शादी कर लें.

—बड़े भोले हो. शादी भी हम किसी इनसान से नहीं, अपनी इच्छाओं से करते हैं.

—द्रौपदी?

—मुहब्बत और शादी की बातें केवल क्वारियों का जी बहलाने के लिए की जाती हैं. एक रंडी पर ऐसी बातों का क्या असर होगा? तुम भले ही आदमी हो. मेरे पास चले आते हो. यही काफी है. . .

मैं उसकी ओर टुकुर-टुकुर देखता रहा.

—जाओ. मामला इतना गंभीर नहीं. मजे से काम पर जाओ वहां से सीधे यहां चले आना. आज मैं तुम्हारी दुलहिन के सारे फर्ज पूरे कर दूंगी. . .

छठा अध्याय

आज की रात !

सारी रात मेरे मस्तिष्क में अनगिणत बत्तियों की रोशनी जगमगाती रही और वातावरण बाजों की आवाजों को अपने सीने पर उछाल कर बेहाल हो गया. फिर मैंने अपनी दुलहिन का घूंघट उठाया. मेरा भाग्य जाग उठा, बाछें खिल गयीं. यह द्रौपदी थी. मेरी एक रात की दुलहिन.

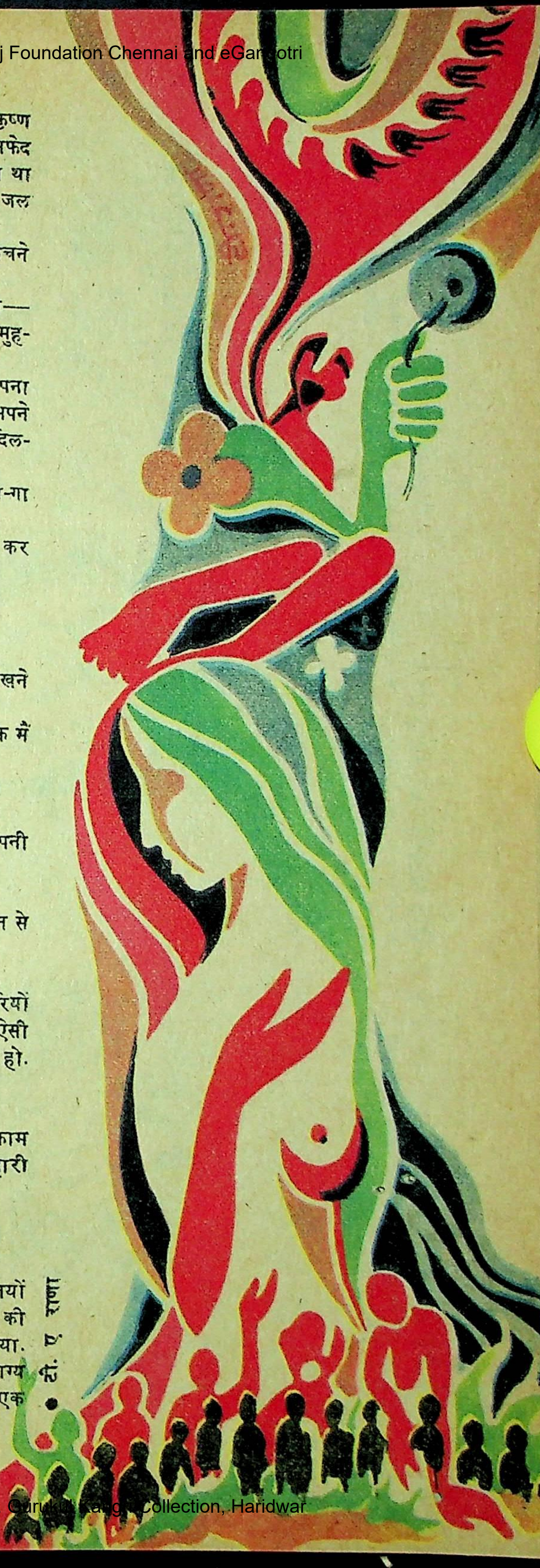

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

—द्रौपदी, तुम मुझसे शादी क्यों नहीं कर लेतीं? द्रौपदी मुसकराने लगी—मैं तुम्हारी दुलहिन ही तो हूं.

—नहीं! मैं सच्चे मन से कह रहा हूं.

—तुम झूठ बोलते हुए मुझे बहुत भले लगते हो, उसने अपनी रंग-बिरंगी चूड़ियों वाला हाथ मेरे कंधे पर रख दिया.

—यकीन करो द्रौपदी, मैं तुम्हें जीवन भर के लिए अपनी दुलहिन बनाना चाहता हूं.

—लेकिन दुलहिन तो एक ही रात की होती है, मेरे दुलहे. तुम्हें बच्चों की मां से दिलचस्पी है या दुलहिन से?

सातवां अध्याय

—ऐसे लाज रखना ऐ भगवान जैसे माता द्रौपदी की रखी थी.

—द्रौपदी! माता द्रौपदी के पांच पति थे.

—हां! पांचवों पांडव माता द्रौपदी के पति थे!

—अजीब किस्सा है!

—जब राजमाता कुंती को युधिष्ठिर ने बताया कि वह एक बड़ी अनोखी चीज अपने साथ लाये हैं तो राजमाता ने कहा, बेटा! इस चीज को पांचवों भाई आपस में बांट लो. आज्ञाकारी बेटे अपनी मां का हुक्म कैसे टाल देते? उन्होंने द्रौपदी को आपस में बांट लिया और द्रौपदी भी चुपचाप उनमें बंट गयी.

—और यह उसकी लाज का क्या किस्सा है?

—एक बार पांडवों से भूल हो गयी और कृष्णजी ने द्रौपदी की रक्षा की.

—किस तरह?

—उसे निरावरण होने से बचा लिया.

आठवां अध्याय

एक बार कई दिन बाद जब मैं द्रौपदी के घर में प्रविष्ट हुआ तो वह बड़ी जर्द, निराश और परेशान नजर आ रही थी.

—क्या बात है?

—कल यहां सारा मुहल्ला टूट पड़ा. पुलिस भी आयी.

—हुआ क्या?

—वही जो होना था. उसके होंठ कांप रहे थे.

—आखिर हुआ क्या?

—मुहल्लेवालों को पता चल गया है कि मैं पेशा करती हूं. वे यह नहीं समझते कि एक गरीब असहाय स्त्री बेकार कैसे रह सकती है. बेचारी पेशा न करे तो अपने बच्चे को बड़ा कैसे करेगी.

—अपने बच्चे को?

—हां, मैं एक बच्चे की मां हूं. वह मसूरी में पढ़ता है. वहीं रहता है. मैं अपना पेट तो काट सकती हूं. मगर उसका क्या करूं?

—तुम्हारा बच्चा भी है?

—हां. और तुम्हारा भी!

—मेरा? मैं घबरा गया. मेरा संबंध तो तुमसे केवल दो साल से है.

—तुम्हारा नहीं तो और किसी का होगा! न जाने किसका होगा. मेरा तो है ही. मुझे अपनी रुसवाई की परवाह नहीं लेकिन मेरे जुगनू का क्या बनेगा?

(ऐसी लाज रखना जैसे माता द्रौपदी की रखी थी.)

सारी दुनिया कौरवों की तरह द्रौपदी का चीर उतारती रही और वह सिर झुकाये कुरुक्षेत्र की सुर्ख-सुर्ख धरती पर अपने जुगनू का खून सूंघने लगी.

—मैं नहीं चाहती कि मेरा बेटा भी मुझे देख ले. मेरा बेटा. . .उसका करुणाजनक मौन सारी नस्ल से संबोधन थी, मैं नंगी नहीं हूं. मैं नंगी हूं.

द्रौपदी आशापूर्ण खड़ी थी ताकि उसके असंख्य पतियों में से कोई आगे बढ़ कर उसे संभाल ले.

प्राचीन भारत की द्रौपदी के केवल पांच पति थे, लेकिन वे पांचवों पांडव नेक बहादुर, सीधे-सादे इनसान थे. फिर द्रौपदी का भगवान भी उसके साथ था. ऐसी दशा में स्त्री के लिए अपनी आबरू संभालना मुश्किल नहीं होता.

दौपदी ने करुणापूर्ण आंखों से मेरी ओर देखा और पराजित स्वर में बोली- मैं अकेली अपनी आबरू से इस महाभारत को कैसे जीत सकती हूं? □ □ □

(अनुवाद : सुरजीत)

दूसरी शती के एक रोमन लेखक की लघुकथा

कीमत

● ऑलुस गेलियस

सोटियन पैरिपेटैटिक स्कूल का एक बहुत विख्यात दार्शनिक था. उसने एक किताब लिखी 'द हॉर्न ऑफ प्लेंटी', जो तरह -तरह की सूचनाओं से भरपूर है.

इस किताब में उसने व्याख्यानकर्त्ता डिमोस्थनीज तथा वेश्या लाइस की कहानी कुछ इस तरह दी है : कोरिंथ की लाइस अपनी देह के बल पर बहुत पैसा कमा रही थी और पूरे यूनान से अमीर लोग उसके पास आते रहते थे. लेकिन वह तब तक किसी को अपने दरवाजे के भीतर नहीं आने देती थी, जब तक उसकी मुंहमांगी कीमत उसे मिल नहीं जाती थी. और उसकी कीमत बेहद ऊंची थी इसीलिए यूनानी भाषा में एक मुहावरा बन गया है—'हर आदमी कोरिंथ की कीमत नहीं दे सकता.'

महान डिमोस्थनीज ने परदे के पीछे से लाइस को खुश करने की कोशिश की और उससे केवल एक आलिंगन की मांग की. लेकिन उसने उसके लिए भी दस हजार दीनारें मांगी. उस औरत के अहं और ऊंची कीमत से झटका खा कर वह वापस लौट आया, और जाते-जाते उसने इतना ही कहा— पश्चाताप खरीदने के लिए मैं इतनी ऊंची कीमत अदा नहीं कर सकता. □ □ □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुलाब और हिना

• चंदूलाल पटेल

इस चौड़ी, काली और चिकनी सड़क पर आप आगे बढ़ेंगे उस समय आसपास की रंगत बदलती हुई दिखेगी. शहर के सिर जैसा बंदरगाह गया यह आपने देखा. उसका टीके जैसा रास्ता, राजधानी, मुंह जैसे सचिवालय के पास से आपको आगे ले आया. फिर आया गर्दन जैसा संकरा पर महत्व का झवेरी बाजार. कड़कड़ाते नोटों की तथा सुपारी की तरह काटे जाते सोने-चांदी के टुकड़ों की आवाज से खनखनाता वह बाजार पार कर आप इस शहर की छाती के नजदीक पहुंच जायेंगे. पहले तो दवा वालों की दुकानें आयेंगी, फिर 'बर्धन चौक' आयेगा, फिर बड़े-बड़े स्टोर्स के 'शो केस' में रखे हुए 'माडल' दिखायी देंगे. यह खत्म होगा तब यह जगह दो भागों में बंट जायेगी—जैसे दो फेफड़े. एक तरफ भारत भर में पहले नंबर का शेयर बाजार होगा. दूसरी तरफ कपड़ा मार्केट. इसी जगह के पास आ कर आप खड़े हो जायेंगे.

मार्केट जितना बड़ा है उतने ही बड़े दिवाले भी निकलते हैं. यहां हंसुलियां पहने हुए मारवाड़िनें मजदूरनियां बड़ी-बड़ी कपड़े की गांठें उलटती हैं. यहां चाय की केतलियां घूमती हैं, अस्सी-अस्सी हजार की मोटरें घूमती हैं, घिसी-पिटी चप्पलें घूमती हैं, भिखारियों के झुंड घूमते हैं और लाखों के चैक कटते हैं! यहां खाने-पीने की मजलिसें जमती हैं और सिगरेट के टिन खाली होते हैं.

नजर नजर का काम करती होती, उस स्थिति में एक दुकान देख कर आपकी आदत जोर कर उठेगी. पास के पान वाले की दुकान पर पहुंच कर आप पूछेंगे—मघई है?

—यह सीयाराम की दुकान है, जनाब! कहता हुआ भैया दो पान हाथ में लेते हुए मधुर मुसकरायेगा. उसके बालों में तेल की चमक और कान में अत्तर का फाहा होगा. वह कहेगा—मघई भी है और देशी, महोबा, मीठा, बनारसी भी है. फिर पान पर कत्था-चूना लगा कर पूछेगा—क्या छोड़ू?

—जाफरानी और किमाम.

—लीजिए जनाब! कह कर वह छोटे-छोटे मघई पान के दो छोटे-से बीड़े आपको ऐसी नजाकत से देगा कि पान खाना यह एक आदत के अलावा एक प्रकार के आनंद का सुख लेना भी है ऐसी प्रतीति आपको हुए बिना नहीं रहेगी.

पान खा कर आप मार्केट का विशाल द्वार देखने में मशगूल होंगे तभी आपको वापस भैयाजी का खरज-स्वर सुनायी देगा—चेनीराम एंड संज की गद्दी ढूंढ़ रहे हैं क्या? वो तो तीन साल पहले बंद हो गयी!

उस समय आपके मानस-पट पर एक टकोरा पड़ेगा. आपको खयाल आयेगा कि प्रवेश द्वार के पास में ही वह मशहूर पेढ़ी होनी चाहिए. आपने उस पेढ़ी की जाहोजलाली और उसके मालिक के दरबारी ठाठ का मिजाज नहीं देखा, फिर भी जाहोजलाली और मिजाज की बातों से आप अनजान नहीं, क्योंकि उस मिजाज की हवा ठेठ आपके कन्नौज तक फैली थी. अरे! आपके घर में भी आपने उनकी बातें सुनी होंगी, क्योंकि उस पेढ़ी के मालिक का और आपके वालिद जलालुद्दीन का संबंध खुशबू से भरा हुआ था. पर आज वह पेढ़ी और आपके वालिद नहीं. पिता के धंधे की पगडंडी-पगडंडी चलते आप शहर में आये हैं और इस पान वाले की बात आपको किसीकी याद दिला रही है.

आपके वालिद की बातें आप याद करेंगे तो सेठ चेनीराम की धुंधली, काल्पनिक आकृति भी आपके समक्ष उभर आयेगी. . .नारंगी रंग की वह मारवाड़ी पगड़ी, लंबा कोट, छोटी धोती, कपाल पर केसर-चंदन का टीका और कानों में मोतियों की बुट्टियां, गेंद-सा बदन.

तभी एक गहरा निश्वास सुन कर चौंक जायेंगे. वह पान वाला भैया गमगीन स्वर में कह रहा है—हर महीने दो सौ रुपये का तो मेरा पान-सिगरेट का बिल होता था, जनाब! मुनीमजी, क्लर्क, चपरासी, ड्राइवर. सबका पान-सिगरेट का खर्चा सेठजी के ही नाम लिखा जाता था.

फिर भैया जरा तनकर बैठेगा. छाती फुला कर कहने लगेगा—महीने में चार-पांच मरतबा तो खुद सेठजी पान खाने के लिए मेरी दुकान पर आते थे और कहते थे—एक बढ़िया पान खिला दो, सीयाराम. आज वह सब कुछ याद आता है. जिस दिन सेठजी खुद आते थे मेरा वह सारा दिन खुशी में गुजरता था, क्योंकि पान खा कर सेठ मुझे अत्तर का फाहा देते थे. और अत्तर भी कोई मामूली नहीं, जनाब! सौ रुपये तोले का मुश्के हिना! ईरान की क्या मजाल कि कन्नौज वाले जलालुद्दीन अत्तर वाले के हिने का मुकाबला करे? तबियत खुश हो जाती थी, जनाब! और चेनीराम सेठ की खैरात भी कम नहीं थी. कई सदाव्रत और दवाखाने उनके नाम पर चलते थे.

आप बारीकी से देखेंगे तो सीयाराम की आंखों में आर्द्रता दिखाई देगी. करुण परंतु मधुर स्मृतियों में खो चुका भैया अधिक गंभीर होता हुआ फिर कहेगा—सब किस्मत का खेल है, भाई! आज वह गद्दी नहीं है, बंगला नहीं है, मोटर नहीं है, लेकिन चेनीराम सेठ तो 'सेठ' ही हैं. सारी देनदारियां आना-पाई तक भरपाई कर दीं.

—अब क्या करते हैं?

—एक छोटी-सी खोली में बैठ कर गोविंद का नाम लेते हैं. अब उम्र भी तो हो चुकी है. एक दिन मुझे कह रहे थे. . .

—अब भी तुम्हारी उनसे मुलाकात होती है?

—होती नहीं है, मैं मुलाकात करने जाता हूं. सेठजी तो बाहर ही नहीं निकलते, पर मैं महीने में दो-तीन बार उनके पास चला जाता हूं. पान का बीड़ा दे आता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

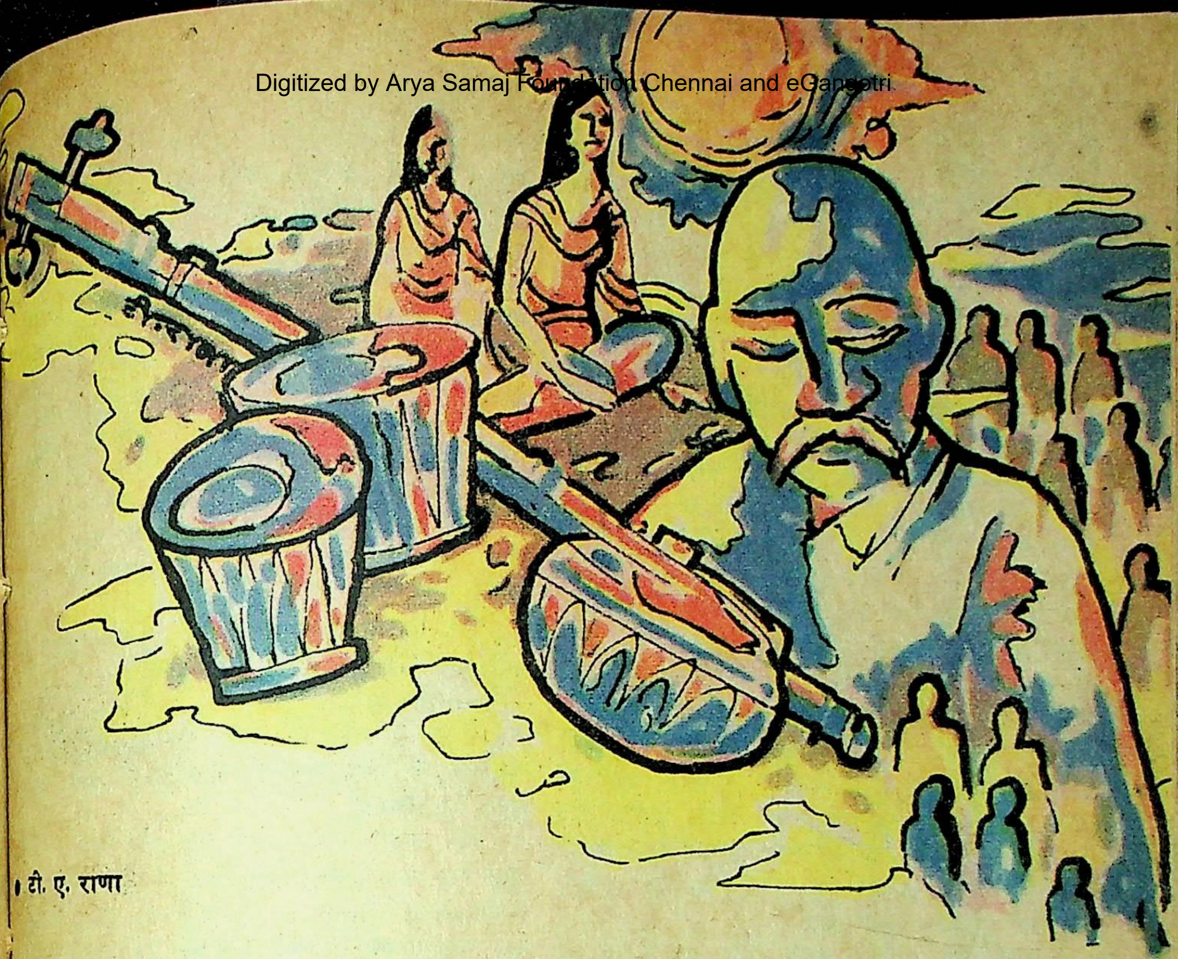

टी. ए. राणा

हूं. और सेठजी अब भी अत्तर का फाहा देते हैं.

—कहां रहते हैं?

--सड़क पर सीधे चलते जाना. खेतान पार्क के पास ही उनका पुराना बंगला दिखाई देगा. वहां से बायीं तरफ जाता हुआ रास्ता आपको मजदूरों की बस्ती में ले जायेगा. वहां जा कर किसीको भी पूछने से पता मिल जायेगा. अगर सेठजी से आपकी मुलाकात हो तो उन्हें मेरा राम-राम कहना और. . .

और फिर बहुत ही त्वरा से वह पान बनाने लगेगा. छह पान का एक बीड़ा बांध, ऊपर धागा लपेट कर आपको देते हुए वह कहेगा--सेठजी को इस नाचीज का यह तोहफा पहुंचा देना.

आपको यह बीड़ा लेना पड़ेगा. भैया की ये संवेदनाभरी स्मृतियां आपके मन में उभरी हुई धुंधली आकृति की रेखाओं को और अधिक स्पष्ट करेंगी. चेनीराम सेठ! —उनका दिल बड़ा, उनकी दिलावरी बड़ी, अत्तर के आशिक, मघई पान के चाहक.

आप भैया से विदा लेते हुए कहेंगे--अच्छा, [illegible]याराम भैया, नमस्ते!

--नमस्ते.

और फिर आप आगे बढ़ेंगे तो यह सड़क आपको 'चेनीराम खेतान लाइब्रेरी' के निकट ले जायेगी. मन में उभरे हुए चित्र का विचार करते-करते आप रानी मस्जिद, सब्जी मार्केट और फिर खेतान पार्क पार कर जायेंगे तब डामर की इस सड़क की चढ़ाई शुरू होगी. एकाध फलांग जाने के बाद एक बंगले की कंपाउंड का दरवाजा आयेगा. उस दरवाजे के स्तंभ पर नया बोर्ड लगा हुआ होगा. आपकी दृष्टि वहां स्थिर हुई ही होगी तभी बगीचे का बुड्ढा माली आपसे पूछेगा—किससे काम है, लाला!

अनायास ही आपके मुंह से निकल जायेगा—चेनीराम सेठ से!

आपका यह एक ही वाक्य उसकी आंखों के कारुण्य को छलका देगा. आपके हाथ में चमड़े की होल्डआल-बैग' देख कर वह पूछेगा— हिना लायें हैं न?' और फिर पलकें दो-चार बार पटपटाकर कहेगा--पर अब चेनीराम सेठ यहां नहीं रहते, लाला. इस बंगले को बिके तो तीन वर्ष हो गये.

इतना कह कर वह आपके सामने टगर-टगर ताकता रहेगा. आप भी कुछ नहीं बोल सकेंगे. फिर माली की आवाज आपके कानों में पड़ेगी—कद्रदान सेठ गये और करम में यह बगीचा रह गया. अब तो मेहनत करके मर जाऊंगा तो भी मेरी पीठ कोई नहीं थपथपायेगा. और फिर उसकी दृष्टि सारे ही बगीचे का अवलोकन कर लेगी, बहुत ही यत्नपूर्वक लगाये हुए गुलाब के पौधों पर ममता से घूम आयेगी. फिर आप सुनेंगे—आदमी बर्बाद हो सकता है, लाला! पर खुशबू बर्बाद नहीं होती. गुलाब के ये पौधे तो उन्हें बहुत प्यारे थे. मोगरा और चमेली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के साथ आठ-दस फूल उनकी देव-पूजा में जाते और बाकी के गुलाबों का गजरा मुझे तैयार रखना पड़ता. एक दिन वह गजरा लेते हुए सेठजी ने कहा—कैसे खूबसूरत फूल हैं, माली दादा?. . .गजरा यहां है और लाहौर बहुत दूर. उस समय तो मुझे मालूम न था कि लाहौर में भी एक गुलाब था, जो सेठजी को खुश करता था.

—लाहौर का गुलाब?

—हां, लाला! वर्ष में दो-तीन बार सेठजी लाहौर जाते थे. लोग कहते कि वहां उनकी रखैल थी. पर यह बात सच्ची नहीं. सेठजी का संगीत का शौक उन्हें लाहौर खींच ले जाता था. वहां जाते तब आठ-दस दिन रुकते. पंद्रह-पंद्रह वर्ष तक इसी तरह सेठजी ने लाहौर की सफरें कीं और बदनाम हो गये. जब वहां जाते तब कुछ-न-कुछ भेंट ले कर जाते—कभी हीरों का हार, कभी ब्रेसलेट, तो कभी अंगूठी. आप इस ओर छांह में आ येंतो एक बहुत मजे की बात सुनाऊं.

और फिर आपको वह एक बरामदे की ओर खींच ले जायेगा. वहां जा कर आप एक बेंच पर बैठेंगे तभी आपकी नजर उस बंगले के नाम पर पड़ेगी. बंगले का नाम 'शबनम'! पढ़ कर आप चौंकेंगे. चेनीराम सेठ जैसे व्यापारी, धार्मिक वृत्तिवाले आदमी के बंगले का ऐसा म्लेच्छ नाम देख कर आपको आश्चर्य लगेगा. शबनम? शबनम यानी ओस!

तभी माली फिर कहने लगेगा—उस बात को बहुत वर्ष हो चुके, लाला! एक सुबह यहां अतर का कोई व्यापारी आया था. उस समय तो इस बरामदे में तीन घोड़े बंधते थे—उत्तम, अच्छी नस्ल के घोड़े. कभी-कभी ही बग्घी में जोते जाते और दशहरे में पूजन होता तब. वह अतर वाला आया तब साईस घोड़ों की मालिश कर रहा था और आप इस समय बैठे हैं इस बेंच पर बैठे-बैठे सेठजी देख रहे थे. आते ही अतर वाले ने पूछा—चेनीराम सेठ बंगले में हैं? सेठजी ने उसे बुला कर अपने पास में ही बेंच पर बैठाते हुए कहा—क्या काम है सेठ से?

व्यापारी सेठ को पहचानता न था. उसे लगा कि कोई 'चमचा' बैठा है. इसलिए कहा—बढ़िया किस्म के अतर लाया हूं वे उन्हें दिखाने हैं. सेठजी भी मजाक पर उतर आये. कहा—तो म्हाको भी दिखाओ, मियां! हम भी कुछ खरीदेंगे.

अरुचि से अतरवाले ने बैग खोली. चमेली और केवड़े के साधारण अतर दिखाने लगा तब सेठ ने कहा—चेनीराम सेठ ऐसे हलके अतर खरीदेंगे नहीं मियां! ये अतर तो इन घोड़ों पर छिड़कने के काबिल हैं.

अतर वाला सकपका गया. फिर उसने बैग में से एक के बाद एक शीशियां निकालनी शुरू कीं. कहता गया—यह है मिट्टी का अतर, यह केसर, यह रातरानी, यह नागचंपा, यह चंदन. चालीस रुपये तोला—क्या समझे? और दिखाऊं?

—दिखास्यो तो देख लेशां. सेठ धीरे से टहुके.

फिर तो वातावरण महक-महक उठा. अतर वाला अतर लगाता जाता और कहता जाता—यह जूही है, यह मोगरा है. आपको कहीं भी इसकी जोड़ नहीं मिलेगी. पचपन रुपये तोला. यह पारिजात है—साठ रुपये तोला.

फाहे बनते जाते, सेठ एक फाहा साईस की ओर उछालते, दूसरा मेरी ओर फेंकते, तीसरा मुनीमजी के हाथ में देते तो चौथा घोड़े की पीठ पर घिसते!

आखिर मियां उकता गया. शीशियां व्यवस्थित कर ज्यों ही बैग बंद करने लगा तभी सेठ बोले—सब अतर तो दिखाये मगर दो शीशियां तुमने नहीं दिखायीं—गुलाब की और हिने की. क्यों सच है न?

कुछ लापरवाही से अतरवाले ने कहा—वो दो चीजें सौ रुपये तोले की हैं. आपके काम की नहीं हैं, भाई! आपकी इतनी औकात कहां?

सेठ खिलखिला कर हंस पड़े. पूछा—तुम्हारे इस सारे माल की कुल कीमत कितनी होगी?

—दो हजार.

—बस? तो ऐसा करो. गुलाब और हिने की शीशियों के सिवा बाकी सारा अतर इन तीन घोड़ों के बदन पर लगा दो.

जैसे जाड़ा मार गया हो इस तरह मियां क्षण भर गुप्त रूप से कांप उठा और फिर वहां से भाग छूटने का प्रयत्न करने लगा. उसे लगा कि किसी पागल से पाला पड़ गया है. इसलिए बैग उठा कर वह खड़ा हुआ.

तभी सेठजी ने सवाल किया—तुमने कभी सेठ को देखा है?

—नहीं.

—फिर यहां कैसे आ पहुंचे?

—एक महीने पहले लाहौर गया था. वहां शकीला बेगम ने मुझे कहा था कि . . .

—पूरा नाम उसका?

—शकीला बेगम जालंधरी.

—क्या नाम है तुम्हारा?

—जलालुद्दीन.

—तब तो गुलाब और हिना के सिवा यह सारा अतर इन तीनों घोड़ों के लगा दो. शकीलाबानू ने सिफारिश की है तो मैं तुम्हें निराश नहीं करूंगा.

थोड़ा सहमते-सहमते अतर वाले ने पूछा—आपका नाम?

—लोग मुझे चेनीराम कहते हैं. कह कर सेठ खिल खिला पड़े.

—बस, सौदा दो हजार में तय हो गया. गुलाब और हिना के अलावा सारा ही अतर उन तीनों घोड़ों पर छिटक दिया गया. ऐसे तरंगी, ऐसे शौकीन और ऐसे गुणानुरागी थे चेनीराम सेठ.

एक निश्वास के साथ माली अपनी बात पूरी करेगा और आप अब चेनीराम से भेंट के लिए तड़प उठेंगे, क्योंकि आपके बुजुर्ग जलालुद्दीन के जन्नतनशीं होने के बाद का आपका यह पहला सफर है.

आप बैग खोलेंगे. हिना का एक फाहा बना कर आप

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

माली को देंगे तब वह कहेगा— बहुत मेहरबानी आपकी. आप सेठजी के पास जा रहे हैं?

—हां, जा ही रहा हूं.

—तो मेरा एक काम करेंगे? हर गुरुवार को सेठजी से सलाम करने जाता हूं. पर बनवारी की मां बीमार होने से आज जा नहीं सकता. इसलिए गुलाब का यह एक गजरा सेठजी को पहुंचा कर उन्हें मेरा सलाम कहेंगे?

—जरूर.

माली आपके हाथ में लाल गुलाबों का गजरा थमा देगा. मघई मान का बीड़ा तो आपकी बैग में है ही. बीड़े में सीयाराम के 'राम.राम' थे, गजरे में माली का 'सलाम' है. जुहार के ऐसे विशेष प्रतीक ले कर आप खड़े होंगे और माली को कहेंगे—नमस्ते, दादा.

—नमस्ते, लाला.

* *

फिर आप दायीं ओर के रास्ते मुड़ेंगे. तब एक मकान दिखायी देगा. उसके आंगन में बिछायी हुई खटिया पर बैठा हुआ आदमी आपको देख कर आवाज देगा—ओ भाई अतरवाले.

आपके पैर उस ओर मुड़ेंगे. वहां पहुंच कर आप उसके पास ही खटिया पर बैठ जायेंगे.

—गुलाब का एक फाहा दो.

आप बैग खोलेंगे. फाहा बनायेंगे. पैसे लेंगे. तब आपके पास का गजरा देख कर वह पूछेगा— उस 'शबनम' बंगले के बगीचे के गुलाब हैं न?

—आप उस बगीचे के गुलाबों से परिचित हैं?

—फकत गुलाब ही नहीं, हिना से भी परिचित हूं. और 'शबनम' बंगले से भी .

—तब तो चैनीराम सेठ को भी पहचानते होंगे.

—अरे प्यारे भाई, बीस-बीस वर्ष तक मैंने उनका नमक खाया है. मैं उनका ड्राइवर था. मेरा नाम शंभूराम पांडे... और फिर एक गरम निश्वास छोड़ कर वह कहेगा सब कुछ खो बैठे, पर सेठ के मन की अमीरी तो अभी तक वैसी-की-वैसी ही है. उनके वहां नौकरी करने के बाद अब दूसरी नौकरी करने की इच्छा ही नहीं होती.

मन-ही-मन आप एक तुलना कर लेंगे. सीयाराम पान वाले के स्वर में आर्द्रभावुकता का आवेग था, बुड्ढे माली की बात में अंतर का अभिषेक था, उस आवेग और अभिषेक में शंभू पांडे की बुलंद आवाज का दर्द भरा मुजरा सम्मिलित होता आप देख सकेंगे.

ड्राइवर आगे कहेगा— सेठ संगीत के गजब के शौकीन! अभी तक भी हर गुरुवार को मैं उनके पास जाता हूं और कुछेक भजन सुनाता हूं. पिछले गुरुवार को ही सेठजी ने मुझे कहा था—पांडेजी! तबियत अब लड़खड़ाती जा रही है. प्रभु अब कब बुला ले यह कहा नहीं जा सकता. मेरे दिल में एक ही इच्छा शेष रह गयी है. लगता है कि मौका मिले तो लाहौर हो आऊं और एक रात रह आऊं. अतरवाले भाई! सेठ बहुत सच बोलने वाले! मन में तनिक भी मैल नहीं. पर उन्हें उदारता ने खाया, विश्वास ने डूबो दिया और संगीत के शौक ने बदनाम कर दिया.

आप पूछेंगे—क्या यह बात सच्ची है कि विख्यात सेठ को लाहौर जाने की आदत ने ही बर्बाद कर दिया?

यह सुन कर शंभू पांडे खटिया पर से अधखड़ा हो जायेगा. उसकी आंखों में आप गुस्सा देखेंगे. उसकी आवाज उछलेगी—कौन कहता है?

—सुना है.

—कहने वाले बेवकूफ हैं. सेठ कभी-कभी लाहौर जाते थे और जाते थे तब साथ में कीमती भेंट ले जाने की उनकी आदत थी, यह बात सही है.

—शकीला बेगम जालंधरी के लिए? आप उकसायेंगे.

—अरे भाई! आप उसे तवायफ समझ कर कटाक्ष में चाहे बोलें, पर मैं तो उसे चैनीराम सेठ के जीवन के 'पवित्र' बाग का एक गुलाब समझता हूं. वह 'पवित्र' शब्द पर विशेष जोर देगा और आगे कहेगा—लाहौर में क्या होता था उसका साक्षी एक मैं और दूसरा जलालुद्दीन अतरवाला.

आप आहिस्ता-से कहेंगे—वह मेरे वालिद होते हैं.

—अच्छा-आ! कहते हुए पांडेजी का चेहरा विनम्र हो जायेगा. आपके वालिद तो मुझे बहुत बार अतर देते थे. बैठिए, आराम से बैठिए. ताकीद तो नहीं न? बात चल निकली है तब कह ही दूं. उस गुलाब में कांटा जरूर था, क्योंकि शकीला बेगम एक तवायफ थी. उसके यहां महफिल जमती, गजलें-कव्वालियां और ठुमरियां हवा में गूंजतीं. पर साथ-ही-साथ उस गुलाब में खुशबू भी थी—दिमाग को तर कर दे ऐसी खुशबू. एक शब्द प्रवाह आपके कानों से टकरायेगा—बदनामी की सारी बातों से सेठ को दुखः होता फिर भी लाहौर गये बिना वह रहते नहीं. वह कभी-कभी गुनगुनाते भी थे—

गुलशनपरस्त हूं, मुझे गुल ही नहीं अजीज
कांटों से भी निबाह किये जा रहा हूं मैं.

जब भी लाहौर जाने का निश्चय होता तब पहले दिन सेठ मुझे सूचना दे देते थे. मैं मोटर की टंकी में भरपूर पैट्रोल डला लेता. सेठ कोट और पगड़ी का लिबास उतार कर मलमली कुर्ता और कश्मीरी टोपी पहन लेते. रवाना होने से पहले हजारीमल जौहरी के यहां से शकीला बेगम के लिए सेठ हीरों या मोतियों का कोई कीमती नजराना खरीदते. फिर हमारी गाड़ी लाहौर जाने के लिए रवाना होती. ठीक महफिल के सामय ही हम वहां पहुंचते—शकीला जालंधरी के 'शबनम' की कंपाउंड में.

—शबनम? तो क्या यहां के बंगले की तरह वहां के बंगले का नाम भी 'शबनम' था?

—हां, भाई! और इन दोनों 'शबनम' का मूल एक तीसरे 'शबनम' में था. शकीला बेगम की लड़की का नाम शबनम है. बहुत प्यारी लड़की है वह. हम पहले पहल लाहौर गये तब तो वह छोटी मासूम बच्ची थी, पर आज तो वह जवां हो गयी है और शकीला बेगम की जवानी रवां हो गयी है.

हवा का एक झोंका आयेगा और गुलाब का अतर महक उठेगा. बात आगे बढ़ेगी—सेठ हिने के बहुत शौकीन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर लाहौर जाना होता तब हिना एक ओर रह जाता और रूहे गुलाब की सुगंध को सत्ता सौंप दी जाती. हमारी मोटर 'शबनम' की कंपाउंड में पहुंचती कि चौकीदार सिकंदरखां सेठ को सलाम बजा लाता. जरा भी आवाज न हो इस तरह मैं मोटर को ठेठ बंगले के पास ले जाता. 'शबनम' की उस मंजिल पर जमी हुई महफिल में गायी जाती चीज के शब्द हमारे कानों में पड़ते.मैं सेठ के सामने देखता और उनका इशारा होते ही 'बैटरी हार्न' दबाता. तुरंत ही ऊपर गायी जाती चीज की आवाज थम जाती, सारंगी मूक हो जाती और तबले शांत हो जाते. एक तरह की बेचैनी भरी खामोशी का साम्राज्य छा जाता. हम ऊपर पहुंचते कि खामोश बनी हुई महफिल के बीचों-बीच बैठी हुई शकीला बेगम सेठ को सलाम बजा लाती. फिर तबलची कुरबानहुसेन और सारंगीवादक छन्नू उस्ताद तस्लीम बजा लेते और आखिर में एक साथ आवाजें उठतीं—आइए बाबूजी! बहुत दिनों के बाद दर्शन हुए. कहिए, मिजाज कैसा है? और फिर अधूरी रही हुई वह चीज आगे बढ़ती. उस महफिल में थराडी के नवाब गुलाम अली खां होते, लाहौर के रईस दरबारासिंह होते, लाला खुदीराम होते, फौजदार कन्हैयालाल और जमींदार हीरेनबाबू होते. महफिल के ऐसे खास-खास व्यक्तियों के बीच चैनीराम सेठ अपनी बैठक जमाते.कुछ देर बैठ कर फिर उठ खड़े होते और गुलाब का गजरा शकीला बेगम की ओर फेंकते हुए कहते—बानू! ठुमरी तो तुमने खूब गायी. पर मेरे दिल पर इसका रंग नहीं चढ़ता. माफ करना! और यों कह कर फिर वहां उपस्थित सभी से विदा ले कर सेठ 'शबनम' के एक अलहदा कमरे में आराम करने चले जाते. और लाहौर के शौकीनों में बात फैल जाती कि अब कुछ दिनों के लिए शकीला बेगम की मस्त महफिल बंद रहेगी.

यहां शंभू पांडे तनिक दम लेने रुकेगा. आप चकरा रहे होंगे तब वह वापस कुलबुलायेगा और आपकी ओर मुखातिब हो कर कहने लगेगा—सेठ चैनीराम वहां सप्ताह भर रुकते, कभी पंद्रह दिन भी रुक जाते. सेठ पहुंचते उसके दूसरे दिन से ही 'शबनम' की उस मंजिल पर जमती रोजमर्रा की वह महफिल खामोश हो जाती. उस कमरे की गद्दियां समेट दी जातीं, तसवीरें आलमारी में छिपा दी जातीं और गलीचों को तह-ब-तह कोने में डाल दिया जाता.फिर उस दूसरे दिन से तीसरी मंजिल पर एक खास गुप्त महफिल जमती. आसपास बाल्कनी होती और बाल्कनी में फूलों-बेलों के गमले होते थे. रात को वहां दूधिया प्रकाश फैलता और उस प्रकाश में फूलदानों में लाल-सुर्ख गुलाब डोलते होते और अगरबत्ती की धूम्र लहरियां नाचती होतीं. उस कमरे के बीच में जो आसमानी शतरंजी बिछी होती थी उस पर शकीला बेगम बैठती. उसके बदन पर कोई गहना नहीं दिखता--केवल एक सफेद साड़ी उसकी ढलती जवानी को ढांके होती. जवानी के कगार पर खड़ी हुई और दूसरी किसी भी महफिल में गैरहाजिर रहने वाली शबनम रूहे गुलाब की फुहारें उड़ा कर उस खास महफिल का अंग बन जाती. फिर उस हजारीमल जौहरी के यहां से जो चीज खरीदी गयी थी उसका नजराना होता पहले यह समा बंधता और फिर 'शबनम' का वह कमरा रात के अंधेरे में किसी तेजस्वी रत्न जैसा जगमगा उठता. अंत में शकीला बेगम के हाथों में तंबूरा दे कर शबनम एक ओर बैठ जाती.

—तंबूरा?

—हां, क्योंकि वह महफिल भजनों की होती थी.

—फिर?

—सेठ साहब मलमली पोशाक पहन कर बैठते थे. कश्मीरी टोपी उस समय सिर पर नहीं होती थी. फिर कबीर और सूरदास के भजनों की झड़ी लग जाती. तीसरी मंजिल की वह खास महफिल भक्ति के भगवा पहन लेती. गुलाब की पवित्र खुशबू के साथ-साथ निर्मल मन का हिना भी महक-महक उठता.

यह सुन कर आपको लगेगा कि चैनीराम सेठ के जीवन में बदनामी के जो कांटे थे वे फूल बन गये हैं.

उस समय शंभूप्रसाद खड़ा होगा. लालटेन की बत्ती जरा तेज करते हुए कहेगा—एक बार ऐसा हुआ कि मैं बगीचे में बैठा था. रात के दसेक बजे होंगे. उस 'कमरे' में 'खास महफिल' की शुरुआत हो चुकी थी. मंद-मंद प्रकाश के बीच और मंद-मंद बहते समीर के बीच शकीला बेगम के सुर सुनाई देते थे.

रैन पड़े तब ही उठ जाऊं,
भोर भये घर आऊं,
रैन दिनां वाके संग खेलूं,
मैं तो जियुं रीझे तियुं रिझाऊं.

—सुरों की उस उष्मा में लगभग पागल-सा मैं बैठा हुआ था तब आपके वालिद जलालुद्दीन हंसते-हंसते बंगले में से बाहर निकले. उनके हाथ में अतर की बैग थी. मैंने कहा—जनाब! जरा धीरे हंसिए, मेरा नशा उतर जायेगा. जवाब में उन्होंने कहा— जहां दिल का हिना हो, मन का गुलाब हो वहां इस सब अतर का क्या काम? फिर कुछ देर चुप रह कर बाद में बोले—कैसी किस्मत पायी है इस नाचीज ने आज कि गुलाब को गाते सुना हिना के ताल पर. यह सुन कर मेरा नशा दुगुना हो गया—हां भाई! आप शायद नहीं मानेंगे, पर दुगुना हो गया. 'गुलाब को गाते सुना हिना के ताल पर' यानी कि शकीला बेगम गाती थी और चैनीराम सेठ तबले बजा रहे थे. जिसने वह दृश्य देखा हो उसे ही पता चलता कि गुलाब में कैसी ठंडक और हिने में कैसी उष्मा थी!

शंभूप्रसाद की यह बात पूरी होने के बाद भी उसका प्रतिघोष शांत नहीं होता. चैनीराम सेठ की रखैल के रूप में जानी जाती शकीला बेगम नितांत ही निर्लेप और निष्कलंक रह कर सेठ का अंतर रिझाती थी यह बात आपको विचार करने के लिए मजबूर कर देगी और शकीला बेगम के आशिक के रूप में बदनाम हो चुके चैनीराम सेठ अपनी मान-मर्यादा और अपना बड़प्पन बिलकुल भूल कर शकीला बेगम के कंठ का साथ देने के लिए स्वयं तबले बजाने बैठ गये थे यह वास्तविकता आपको जीवन का कोई नया ही मूल्य सिखायेगी?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तभी टावर में आठ के टकोरे सुन कर आप चौंकेंगे. हाथ में बैग और गुलाब का गजरा उठा कर आप शंभूप्रसाद को कहेंगे— अच्छा पांडेजी, अब हम चलें. वक्त बहुत हो गया.

और पांडे आपके कंधे पर प्रेम से हाथ रखता हुआ कहेगा— हां, भाई! मैं भी खा-पी कर तैयार हो जाऊं.

और फिर अंतर्मन के भाव से मह-मह महकता मघई पान का एक बीड़ा, पूज्यभाव तथा आदर के रंग में रंगा हुआ गामठी गुलाबों का एक गजरा, सेठ की बदनामी की बात से बेचैन होते आदमी की 'नमस्ते', तरह-तरह के रूहे गुलाब और मुश्के हिना की शीशियों से भरी हुई आपकी बैग— इन चार वस्तुओं के साथ पांचवें आप बंगाली महाशय के उस 'सारंग कैफे' के आगे आ कर रुक जायेंगे. पूछेंगे— सेठ चेनीराम कहां रहते हैं?

कैफे के रेडियो से भी तेज आवाज में आपको जवाब मिलेगा—वह देखिए. सामने की खोली के दरवाजे के पास ही तो खड़े हैं.

उतावले आप आगे बढ़ेंगे तभी कैफे के रेडियो से आवाज आयगी : 'अब आप शकीला बेगम जालंधरी से एक गजल सुनिए. फरमाश करने वाले हैं. . .

क्षण भर आप जमीन के साथ जैसे चिपक जायेंगे. फिर दूसरे ही क्षण दत्तचित्त हो कर सुनेंगे :

उन्हें खो कर दुःखे दिल की दुआ से और क्या मांगूं?
मैं हैरां हूं कि आज अपनी वफा से और क्या मांगूं?

इस समय आपके अंतर में उर्मियों का एक प्रचंड उछाल आयेगा. 'गुलाब' गजल गा रहा होगा तब 'हिना' से मिलने के इंतजार में आप बेचैन होंगे. आपके थके हुए पैर उस धूल भरे रास्ते को तेजी से पार कर अपको उस कोठरी के पास में पहुंचा देंगे. वहां टूटे-फूटे हुए चबूतरे पर श्याम रंग और स्थूल शरीर वाला एक व्यक्ति आंखें मूंद कर बैठा होगा और अपनी मैली छोटी-धोती में से झांकती भरावदार जांघों पर ताल देता होगा. वह नंगे बदन होगा, उसके होंठ पर भरावदार मूंछें होंगी, पर उसके कानों में हीरों की बुट्टियां नहीं होंगी, केवल दो छेद होंगे.

उत्साह भरे स्वर में आप उन्हें पुकारेंगे— सेठजी.

पर जवाब नहीं मिलेगा.

–चेनीराम सेठ.

जांघों पर दिया जाता ताल चालू ही रहेगा— उनकी आंखें नहीं खुलेंगी.

–सेठ साहब.

ठीक उसी समय वह गजल पूरी होगी और सेठ तंद्रा में से जागेंगे. आपको देख कर पूछेंगे— कौन हो भाई?

—सेठजी, मैं जलालुद्दीन अतर वाले का लड़का हूं. आपसे मिलने आया हूं.

सेठ उठ खड़े होंगे.अपनी कोठरी में आपको ले जाते हुए वह कहेंगे— जलालुद्दीन से मिले तो वर्षों हो गये. आजकल क्या करते हैं? मजे में तो हैं न?

आप कहेंगे — सेठजी ! मेरे वालिद तो तीनेक साल पहले जन्नतनशीं हो गये.

—राम राम ! कह कर सेठ ममत्व से आपके कंधे पर हाथ रखेंगे— भगवान की मर्जी, भाई! बहुत रंगीली तबियत के आदमी थे.

और फिर सेठजी आपको टूटी-फूटी उस कोठरी में बिछी शतरंजी पर बैठने के लिए कहेंगे— बैठो, बैठो.

आप बैठ जायेंगे. सामने सेठ बैठेंगे. आप उनको वह गुलाब का गजरा देते हुए कहेंगे—माली दादा ने आपको सलाम कहा है.

गुलाब की आर्द्रता सेठ की आंखों में आ कर बैठ चुकी लगेगी. सेठ कहेंगे— भूल जायें तो माली दादा काहे के ? गुरुवार आया कि गजरे के दर्शन हुए ही.

इतने में आपने बैग खोल ली होगी और उसमें से वह पान का बीड़ा निकाल कर सेठ के सामने रखते हुए आप कहेंगे— और सीयाराम भैया ने आपको राम-राम कहलवायी है.

सेठ की आंखों की वह आर्द्रता और बढ़ जायेगी और उनकी आंखों में से दो छोटी-छोटी बूंदें चू पड़ेंगी. आप फिर कहेंगे— और शंभूप्रसाद ड्राइवर ने आपको नमस्ते कहलवाया है.

—अरे! वे खुद ही थोड़ी देर म में भजन गाने आ पहुंचेंगे. और क्षणेक शांत रह कर फिर कहेंगे— छोटे-छोटे आदमी कभी किसी को भूलते नहीं. भूल जाने वाले तो बड़े आदमी ही होते हैं, भाई!

और इस तरह मधुर और सुखद स्मृतियों में कुछ समय गुजरेगा. फिर वह आयेगा ड्राइवर शंभू पांडे, तंबूरा लिये हुए. फिर आयेगा पड़ौस में रहने वाला टाइपिस्ट बीनू चक्रवर्ती— तबले लिये हुए.

—आइए, पांडेजी, आओ भाई बीनू. यों स्वागत करते हुए सेठ झुक-झुक जायेंगे. टावर में नौ के टकोरे बजें उससे पहले तो शंभू पांडे तार मिला कर तैयार हो जायेगा. और बीनू चक्रवर्ती तबलों को ठोक-ठोक कर ठीक-ठाक कर लेगा.

* *

पर शंभू पांडे की बुलंद आवाज गर्जे उससे पहले बाहर के रास्ते पर मोटर के ब्रेक की चीख सुनाई देगी, मोटर के दरवाजे के खुलने और बंद होने का 'धड़ाम' स्वर सुनायी देगा. कोठरी में से सब बाहर निकलेंगे तभी दो स्त्रियां आपकी ओर आती दिखेंगी. उनके पीछे दसेक नंगधड़ंग बच्चे नाचते-कूदते नजर आयेंगे.

आश्चर्य से चेनीराम सेठ की आंखें तनिक चौड़ी हो जायेंगी. वह कह पड़ेंगे— शकीला बानू! तुम! और शबनम भी?

शकीला बेगम और शबनम कोठरी में दाखिल होंगी. दोनों एक टक सेठ के सामने ताकतीं खड़ी रह जायेंगी.

लाहौर की तवायफ का यह प्रथम दर्शन आपकी नजर को झुका देगा. एक साथ आफताब अस्त होता हो और महताब का उदय होता हो ऐसा दृश्य देख कर आपका मन गुनगुनायेगा :

कली कोई जहां पर खिल रही है—
वहीं इक फूल भी मुरझा रहा है.

और फिर तो अभिव्यक्त होते आनंद की लहरें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उड़ेंगी. सलाम भर कर शकीला बेगम सेठजी से कहेगी—आदाब अर्ज है, बाबूजी. और फिर पांडेजी की ओर घूम कर पूछेगी— कहिए, पांडेजी, खैरियत तो है?

और फिर सेठजी कहेंगे— बैठो, बानू. बैठ शबनम.

और कुछ भी बोले बिना, अपनी सफेद साड़ी खराब होने का किंचित भी खयाल किये बिना, शकीला बेगम उस फटी हुई और मैली शतरंजी पर बैठ गयी शबनम ने उसका अनुकरण किया.

सेठ ने शकीला बेगम से पूछा— इतने वर्षों से कैसे भूल पड़ी बानू?

शकीला बेगम ने कहा— बरसों से आपके दर्शन नहीं हुए, सोचा कि मैं खुद ही सेठजी के पास हो आऊं.

—कहां ठहरी हो?

—पैराडाइज में. मगर आज रात हम यहीं पर ही ठहरेंगे.

—यहां?

—कोई हर्ज है क्या?

—नहीं, नहीं, मगर. . .

सेठ बेचैन हो रहे थे. तभी शकीला बेगम ने पुत्री से कहा—सेठजी को तोहफा पेश करो, बेटी.

शबनम ने अपनी बैग खोली. अंदर से एक पेटी निकाली और सेठजी के पैरों के पास रख कर सलाम बजा लायी. शकीला की आवाज सुनायी दी— आप गुलाब का इत्र ले कर लाहौर आते थे. मैं आपके पास हिना ले कर आयी हूं. उम्मीद है, आप कुबूल फरमायेंगे.

हिना का नाम सुन कर सेठजी ने त्वरा से पेटी खोली और फिर जल गये हों इस तरह पीछे की ओर खिसक गये. तेज, कठोर आवाज में बोले— शकीला!

जालंधरी की आंखों में उस समय आजिजी छलक आयी. भावना के अतिरेक से कांपती हुई आवाज में उसने कहा— आपकी ही दी हुई चीजें आप ही को देने आयी हूं, सेठजी. गुस्ताखी के लिए माफी चाहती हूं.

पांडे, बीनू और आप— तीनों ही उत्कंठा से देख रहे होंगे. वह पेटी खुली पड़ी थी और उसमें रखी हुई वस्तुओं को कोठरी की लालटेन की रोशनी जैसे चूमने लगी थी! इस पेटी में हीरों के हार, सोने के कंगन, खरे मोतियों की दामिनियां, बड़े नगीनों वाली अंगूठियां, कनबाले, झांझरें आदि थीं. इन सबके साथ में मुश्के हिना की एक पहलदार शीशी थी.

वैसे ही कठोर स्वर में सेठ ने कहा— इन हाथों ने हमेशा देना सीखा है, कभी लेना सीखा नहीं. फिर गौरव से सीना तान कर शबनम की ओर देख कर कहा— इस सारी माया को बैग में वापस रख दे, लड़की. मुझे इनकी तनिक भी जरूरत नहीं.

शकीला बेगम की आंखों में आंसू तिर आये. उसने कहा— अगर आपको जरूरत नहीं तो मुझे भी क्या जरूरत है?

सेठ ने शकीला के तनिक पास आ कर कहा— तो थारों कहणों है म्हें ले लूं? अच्छा तेरी बात भी म्है थोड़ी-सी रख लेशां. फिर पेटी में से हिने की शीशी बाहर निकालते हुए कहा— हिना की या शीशी म्है रख लेशां— बस, अबे तो राजी? कह कर गहनों-जवाहरातों की पेटी बंद कर दी और फिर हाथों में उठा कर शबनम को वह पेटी देते हुए कहा— बाकी को यों सब म्हैं शबनम को देऊं हूं. शायद इंकी शादी में नई आ सकूं. और फिर अतर की शीशी पर हाथ फेरते हुए कहा— बानू! थारे सुं एक बचन मांगूं हूं.

—कहिए.

—बदनाम तो हुवो ही हूं—अब डर कांयको? थने म्हारी अरज है कि साल में एक बार अठै आ कर मीरां, सूरदास, अर कबीर का भजन सुणा जाणां. लाहौर तो अबे म्हैं आ सकूं कोनी.

प्रसंग के इस नाजुक क्षण से आप विवेकी बनने के लिए तत्पर होंगे और बैग उठायेंगे. बीनू चक्रवर्ती यह देख कर अपने तबले उठायेगा और शंभू पांडे तंबूरा हाथ में लेगा. तभी शकीला को कहती सुनेंगे— पांडेजी!

—जी.

—आपको अगर जाना हो तो जाइए लेकिन यह साज यहां रहने दीजिए. आज हम गायेंगे.

शंभू पांडे तंबूरा वापस नीचे रखेगा. सेठ के चेहरे पर हर्ष की लहर दौड़ आयेगी. बीनू चक्रवर्ती को सेठ कहेंगे— चक्रवर्ती बाबू! आपको भी जाना हो तो जाइए, मगर अपने तबले यहां छोड़ जाइए. आज हम बजायेंगे.

गले में गजरा खिलेगा. गलाफ में मघई पान का बीड़ा महकेगा. शबनम के हाथों छिड़के गये गुलाब के अतर की मह-मह महक फैल जायेगी और फिर जब शकीला जालंधरी के हाथों में तंबूरा दे कर शबनम एक ओर अदब से बैठ जायेगी तब चेनीराम सेठ भी दोनों घुटनों के बीच तबले जमा लेंगे.

'खास महफिल' लगभग तैयार हो गयी देख कर पांडेजी आपसे कहेंगे— चलिए, जनाब.

बैग उठाते हुए आप भी कहेंगे— हां, चलिए पांडेजी!

आप सेठ से विदा लेंगे, जालंधरी से विदा लेंगे, जिंदगी के उत्सव जैसी उस महफिल से विदा लेंगे.

. . . और आप दोनों के साथ चक्रवर्ती बाबू भी बाहर निकल आयेगा.

आपके सामने वही कंकरों-पत्थरों वाला रास्ता होगा, वही झोंपड़ों की पंक्तियां होंगी. शहर की वही 'गरीबी' होगी. आपके पीछे वह महफिल—वह 'खास महफिल' छूट जायेगी. वहां तंबूरा झनझनाता होगा, सूरदास के अंतर की आरजू को शकीला बेगम का कंठ आलापता होगा और तबलों पर उस बदनाम सेठ के हाथों की थापें पड़ती होंगी.

आपकी चाल में एक नशीली गमगीनी होगी और आपके मन की कंदराओं में आपके वालिद का कहा हुआ और शंभू प्रसाद पांडे का आपको सुनाया हुआ वह वाक्य गूंज उठेगा— कैसी किस्मत पाई है नाचीज ने आज कि गुलाब को गाते सुना हिना के ताल पर! □□□

(अनुवाद : जेठमल 'कमलेश')

१६५ झाटकण पोल,
रायपुर, अहमदाबाद —१ (गुजरात)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समाजवादी देशों की कहानियों का विशिष्ट खंड तथा अन्य कहानियां

इस अंक में सोवियत संघ, हंगरी और यूगोस्लाविया में बोली जाने वाली अलग-अलग भाषाओं की सात कहानियां रहेंगी. इनका अनुवाद मूल भाषाओं से विशेषतः सारिका के लिए ही कराया गया है.

अन्य लेखक—
प्रभाकर माचवे, उर्मि कृष्ण, सविता बैनर्जी, स्वदेश दीपक आदि.

साथ ही -
'गर्दिश के दिन' के अंतर्गत राजेंद्र यादव की आत्म-रचना तथा सभी स्थायी स्तंभ.

दिसंबर
१९७५

सारिका

कहानियों और
कथा-जगत की
संपूर्ण पत्रिका

TIMES ART

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

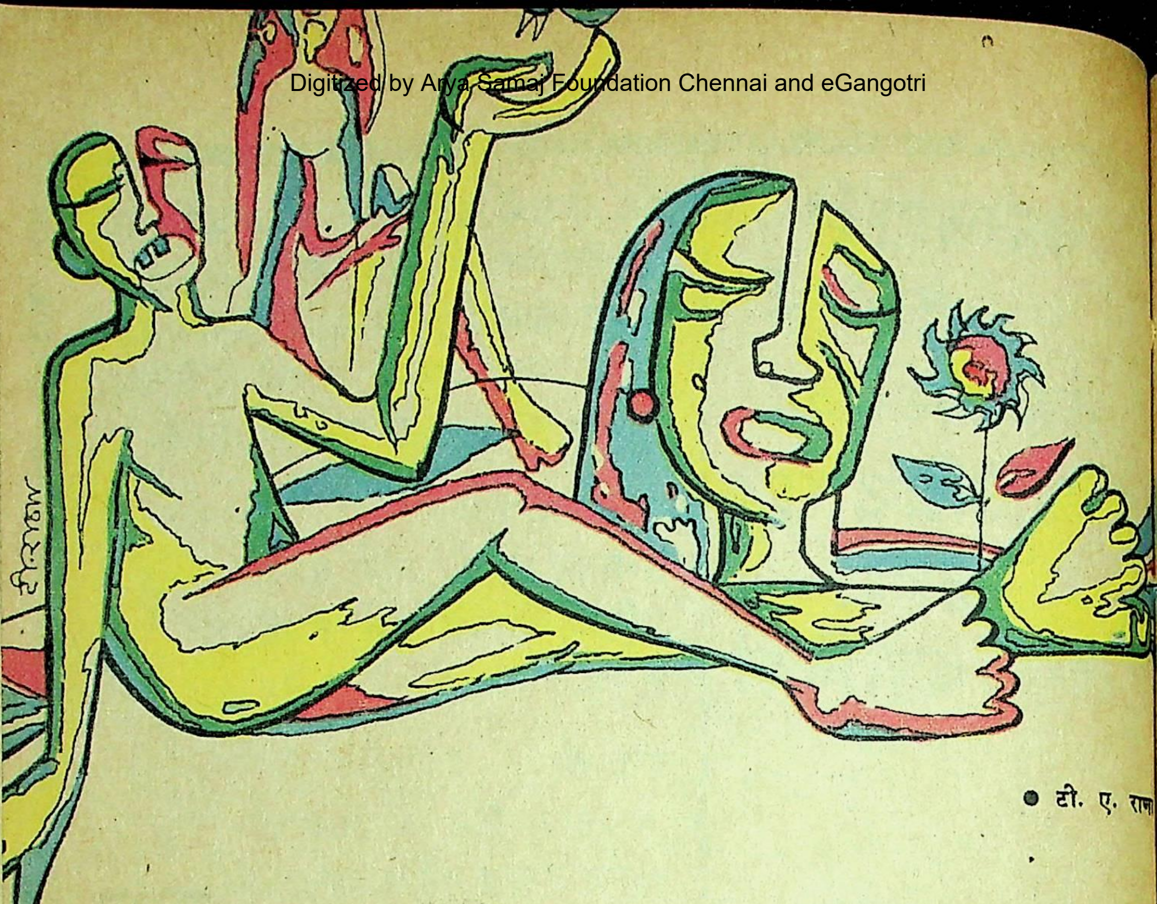

● टी. ए. रा

लुच्ची ● सैयद ज़मीर हसन

दिसंबर की ठंडी शीत रात के सन्नाटे में दूर से आने वाले तांगे की चरखू-चूं और साजों की हलकी-हलकी छनकार ने दूध वाले मिरजा को थोड़ी देर के लिए हैरान कर दिया और वह दूध नापता हुआ आबखोरे को हाथ में पकड़े, मिट्टी के माधो की तरह बुत ही बन गया. फिर जब गाहक ने उसकी ऊंघ पर व्यंग्य किया तो वह चौंक कर दुबारा कड़ाही में से दूध निकालने लगा—भाई जान! आज बड़ी सर्दी है, उसने अपनी टांगों पर पड़ा मिलिटरी का कंबल कमर तक सरकाते हुए कहा और ढाक के पत्ते से आबखोरा ढांक कर गाहक के हाथ में थमा दिया... अब भी नींद आयी तो वह दुकान बढ़ाने ही वाला था, पर कड़ाही में दूध कुछ ज्यादा था. शायद उसके गाहक सर्दी से ठिठुरे आज घरों में ही पड़े रह गये थे. बासी दूध बिक तो जाता था. तड़के नाश्ता करने वाले ले जाते थे, पर असल बात यह थी कि मिरजा इतनी रात तक जागते रहने के कारण सुबह उठने से कतराता था. यों भी आज जुमेरात थी. असीना बाई जुमेरात को घर अगरबत्तियां जला कर खोए के जरदे का सैदानी बी की न्याज दिलवाती थी और मिरजा का आधी रात के बाद इंतजार करती थी. इस न्याज का सारा खर्च मिरजा बर्दाश्त करता था. यही कारण था कि मिरजा दुकान पर बैठा उकता रहा था.

सर्दी के कारण उसे बार-बार ऊंघ आ रही थी लेकिन जब उसके कानों में तांगे की चरख-चूं की आवाज पड़ी तो वह आंखें बंद कर के आने वाली सवारियों की कल्पना करने लगा. फिर कुछ मिनटों बाद उसने तांगा अपनी दुकान के सामने खड़ा हुआ देखा तो वह टुकुर-टुकुर देखने के बजाय चोर-आंखों से सवारियों का अंदाजा लगाने लगा. धुएं से काले हुए टिमटिमाते बल्ब की रोशनी इस सख्त सर्दी में कुछ अधिक ही ठिठुर गयी थी और कोहरे के कारण नजर दूर तक नहीं जाती थी. फिर भी मिरजा ने अपनी जुगनू जैसी आंखों को बार-बार खोला और बंद किया तो दो बुरके दिखाई दिय. एक काला अंगरेजी ढंग का और दूसरा सफेद लट्ठे का सीधा-सादा. मिरजा की आंखें पास किसी मर्द की तलाश करने लगीं, पर उन्हें अकेला देख कर उसे बड़ा हैरानी हुई. साथ ही दो-चार गठरियां और एक पुराना लकड़ी का संदूक भी था. मिरजा ने सोचा, बूढ़ी स्त्रियां होंगी और शायद किसी दूसरे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शहर से आयी हों पर जब वे करीब से गुजरीं तो काले बुरके में से निकल रही सुनहरी किरण ने मिरजा की आंखों को ऐसा चकाचौंध किया कि वह ऊंची आवाज से 'सुबहान अल्लाह' भी न कह सके. मुहल्ले की खूबसूरत औरतों की तारीफ वह इस प्रकार ही किया करता था और यह अंदाज भी उसने दो साल से ही अपनाया था. जब मुहल्ले की बहू-बेटियां से उसका विश्वास जाता रहा था, नहीं तो वह बड़ा असूलपरस्त आदमी था. जवानी से बुढ़ापे तक रंडीबाजी की, पर अड़ोस-पड़ोस को कभी बुरी नजर से नहीं देखा था. वह कहता था कि डायन भी सात घर छोड़ कर डसती है और सांप भी अपनी बिल में सीधा घुसता है.

फिर देखते-देखते ही जमाना बदल गया. मिरजा के सामने नाक पोंछते वाली बच्चियां सोलह-सिंगार कर के छम-छम करती हुई उसके सामने यों गुजर जातीं जैसे मिरजा के बुढ़ापे को व्यंग्य कर रही हों. दुकान के सामने कोठे पर मौलवी करीम इलाही की छोकरी रहती थी. उस पर खूब जवानी चढ़ी और ऐसी जवानी निकली कि दर्जनों गाहक मिरजा की दुकान के सामने खड़े उसका नजारा करते रहते. वह खूब बन-संवर कर बरामदे में लटकते पिंजरे में से तोते की पूंछ इतने जोर से खींचती कि वह टें-टें का तूफान खड़ा कर देता. नीचे खड़े लोगों की भीड़ आसमान की ओर देखने लगती. फिर एक दिन जब सामने ड्योढ़ी में चोर-चोर का शोर मचा तो मिरजा उठ कर सीधा अंदर घुस गया, पर अगले ही क्षण उसे आंखें बंद कर के बाहर आना पड़ा. बस उसी दिन से उसने मुहल्ले का सत्कार करना छोड़ दिया—छिनालें पैसों की यार हैं तो क्या हम बुरे हैं! क्यों न मौज करें! घर का माल घर में रहे तो अच्छा है.

फिर एक करम इलाही की छोकरी की क्या बात, इश्तियाक पतंगबाज की छत पर दिन-दिहाड़े सारी दुनिया ने वह कुछ देखा कि जो सुनता, कानों को हाथ लगाता. कमबख्तों को जगह भी मिली तो कोठे पर, आदमी न हुए कुत्ते-बिल्लियां हो गये. उस दिन से मिरजा ने अपने सारे असूलों की पुड़िया बांध कर भट्ठी में फेंक दी और ऐसे नंगेपन पर उतर आया कि हर आती-जाती पर आवाजें कसना अपना धर्म बना लिया. कुछ तो बड़बड़ाती हुई गुजर जातीं और कुछेक ने मिरजा को मुंह लगा लिया. कुआं जब प्यासे के पास आ जाये तो कुएं पर जाने की क्या जरूरत है! सो मिरजा-सड़क पर फेरे लगाने छोड़ कर घर बैठे हुए ही रंगरेलियां मनाने लगा.

उस काले बुरके वाली ने मिरजा के दिल में गुदगुदी-सी पैदा कर दी. रात को तो भला किससे वह कोई पता चलाता, पर सुबह होते ही उसे पता चल गया कि अनवरी बाई लखनऊ का बाजार छोड़ कर यहां काली हवेली में आ रही है और सुना है कि उसने कारोबार सदा के लिए त्याग दिया है. पर इस बात का यकीन किसी को नहीं आता था, क्योंकि चोर चोरी से तो जा सकता है पर हेरा-फेरी से नहीं. मुहल्ले के आशिक-मिजाज तो इस तरह खुश नजर आते थे जैसे आसमान से कोई परी उतरी हो. मिरजा भी अनवरी का नाम सुन कर चुप हो गया. लाख पेशा छोड़ दिया हो, पर ऐसा भी नहीं कि मिरजा की पहुंच भी वहां तक मुश्किल हो जाये. मिरजा ने सुबह-शाम लड़के को भेज कर दूध-दही के बारे में पूछना शुरू कर दिया.

★ ★

अनवरी खास डेरेदार थी. मां ने बहुत बड़ी जायदाद छोड़ी थी. इस जायदाद के बलबूते पर उसने रंडी के पेशे को सदा के लिए अलविदा करने की ठान ली थी. यों तो वह पैसे में भी बड़ी असूलपरस्त थी, बुरे आदमी को मुंह नहीं लगाती थी. बड़े-बड़े रईस दरवाजे पर आए और ठोकर खा कर चले गये. असल में वह गृहस्थ स्वभाव की थी और उसे बाजारूपन से नफरत थी. कहते हैं कि आदमी की भूल खुदा तो माफ कर सकता है पर आदमी नहीं करता. सो कई बार उसने आने-जाने वाले शरीफों का हाथ पकड़ना चाहा पर न पकड़ सकी. रखैल बनाने को सभी तैयार थे, पर जब बीवी बनाने का सवाल आता तो खिसक जाते. एक भी हामी न भरता. किसी गरीब के यहां चली जाती तो मां को सदमा पहुंचता, जनाना औलाद रंडी का सरमाया होती है. वह सब कुछ बर्दाश्त कर सकती थी पर वह हाथों से निकल जाती तो उसकी कमर टूट जानी थी. फिर अनवरी की मां तो मुद्दत से कब्र में पैर लटकाए बैठी थी इसलिए उसने सोचा कि मां को दुख देने से क्या फायदा. उसके पैरों तले तो स्वर्ग है. उसकी मौत के बाद देखा जायेगा.

आखिर एक दिन मां मर ही गयी. अनवरी ने कुछ जायदाद जैसे-तैसे बेच कर काली हवेली का यह मकान खरीद लिया और एक दिन आधी रात को सामान बांध कर बाजार छोड़ कर यहां आ बसी. एक पुरानी नौकरानी बेचारी तरस खा कर या खुदा जाने किसी लालच से साथ आ गयी. वह एक से दो हो गयी और सौदा-सुलफ लाने की भी आसानी हो गयी. नहीं तो स्वयं बाहर निकलती तो देखने वाले खुदा को भूल कर नजर ही नजर में ऐसी इज्जत लूटते कि पारसाई का भूत एक मिनट में उतर जाता. खालिस इश्कबाजी मुहल्ला था. अपनी पत्नी सभंले, या न संभले दूसरी औरत के करीब से गुजरे तो आंखों ही आंखों में गर्भवती कर दें.

घर की चहारदीवारी में भी अनवरी कौन-सी सुरक्षित थी. खूब चौराहों पर चरचे हुए. किसी ने कहा—बूढ़ा शेर महात्मा बन कर आया है. किसी न कहा—भई खूब. नौ सौ चूहे खा कर बिल्ली हज को चली. हां, जिनको उस तक पहुंच की कुछ उम्मीद थी, उसका जरूर पक्ष लेते थे. बाहर ही बाहर से खुदातरसी और इनसानियत का दिखावा था, पर अंदर से खूब साजिशें बनायी जा रही थीं. दो-चार दिन भी नहीं बीते थे कि दरवाजे पर पैगाम आने लगे. बड़ी बूढ़ी जो साथ रहती थी, सुनती-सुनती उकता गयी. बाहर निकलने से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी कतराने लगी. फिर दो-चार नाइनें भी आने लगीं. मुहल्ले के बेशुमार बुजुर्गों और सफेदपोशों की वह तारीफें की और उसके धन-दौलत के वह-वह किस्से सुनाए कि अनवरी जरा भी नासमझ होती तो चिड़िया की तरह दाना देख कर फिर जाल में फंस जाती. पर वह भी बाजार में बैठने वाली तजुर्बाकार थी. सबको चुटकियों से उड़ा दिया और किसी ऐसे का इंतजार करने लगी जो उसके साथ-जीने-मरने वाला हो. दौलत-सुख तो वह सब कुछ देख चुकी थी, अब तो बस घर के लिए घर-वाले की जरूरत थी ताकि उंगलियां उठनी बंद हो जायें. यों किसी के घर बैठना होता तो उसे किस की कमी थी? मां की जिंदगी में ही अच्छे-अच्छे रईस ड्योढ़ी पर नाक रगड़ते थे और रगड़ते भी क्यों न, सूरत ही ऐसी थी. खुदा झूठ न बुलवाए, हजार-दो हजार में बैठी हुए भी फौरन पहचानी जाती थी. सफेद-सुर्खी माइल रंग था जैसे दूध में सिंदूर घुला हो. और चेहरा ऐसा कि जो देखे, देखता ही रह जाये. कटार जैसी नाक, कागजी-बादाम जैसी आंखें. पुतलियां ऐसी जैसे तातारी हरिण की कस्तूरी. और पलकें चिलमन की—शरम से झुकी हुई. इनसान क्या हूर या परी प्रतीत होती थी. उसे चाहने वालों की क्या कमी थी, मर्द क्या है, शक्ल देखी तो रीझ गया, पर वह अच्छी तरह जानती थी कि रंडी का घर-बार बनना बड़ा मुश्किल है. जो भी आएगा, भंवरे की तरह रस चूस कर उड़ जाएगा.

मुहल्ले वालों ने कुछ दिन तो सब्र किया और सोचा कि आज नहीं तो कल, कल नहीं तो परसों, आखिर कब तक इनकार करेगी. सीधी उंगलियों से घी निकले तो टेढ़ी का क्या लाभ. पर जब उनकी उम्मीदें टूटने लगीं तो वे अपनी आयी पर उतर आए और साजिशें करने लगे. किसी ने दो-चार हस्ताक्षर करवा कर एक दरख्वास्त चौकी वालों को दे दी कि शरीफों के मुहल्ले में बाजारी औरत का रहना गुनाह है इसलिए यहां से निकाला जाए. मुहल्ला-सुधार कमेटियां हरकत में आ गयीं. लोग दरवाजे पर आ-आ कर जोर-जोर से गालियां देने लगे. दो-चार औरतें पीछे लगा दीं कि उसे डरा-धमका देखें कि वह पसीजती है कि नहीं. पर वह खुदा की बंदी किसी तरह भी कब्जे में न आयी. फिर जब मुहल्ले के शरीफ बिलकुल ही मायूस हो गये तो बाका-यदा मुहिम शुरू कर दी. गुंडों की मुट्ठी गर्म की और वह अपने आदमी भेज-भेज कर बार-बार सताने लगे.

मिरजा खामोश जरूर था पर सारे हालात से अवगत था. जब देखा कि पानी सिर से ऊंचा होता जा रहा है, मुहल्ले के शरीफ शराफत पर उतर आये हैं तो मिरजा भी ललकार कर मैदान में उतर आया. उसने भी थैली का मुंह खोल दिया और साफ-साफ कह दिया कि जिसकी मां ने ज्यादा दूध पिलाया है, वह मुकाबले पर आ जाये. दुश्मनी से मिरजा को जहां पैसे का धक्का लगा, वहां उसने अनवरी का दिल भी जीत लिया—और अगले ही दिन नौकरानी द्वारा बुला कर रातों-रात अनवरी ने मिरजा दूधवाले के साथ निकाह पढ़वा लिया.

निकाह होते ही सारा मुहल्ला कपड़ों से बाहर हो गया. अनवरी ने भी तो गजब ढाया था. अच्छे-भले रिश्ते छोड़ कर विवाह भी किया तो बूढ़े-बुड़ैल और टूटी खपरैल के साथ. सो महल्ले वाले भी अपनी आयी पर उतर आये. शैतान भी उन्हें बार-बार उकसा रहा था. शैतान को दंगा-फसाद ही पसंद है. आखिर उसने वह फितना उठाया कि मिरजा जैसा घाघ भी चारों खाने चित्त गिर पड़ा. पुलिस ने पहले तो दो-चार छापे मारे. फिर लगातार छापे मारे तो मजबूर हो कर मिरजा को अफीम का धंधा बंद करना पड़ा. यह काम बंद करते ही दुकान पर मक्खियां उड़ने लगीं. सच बात तो यह है कि दुकान की सारी रौनक अफीम से ही थी. जब यही न रही तो दूध भी क्या खाक बिकता! अंत में दुकान को ताला लगाना पड़ा. जो चार पैसे पास थे, बैठ कर खाये, पर यह कितनी देर तक संभव था. मिरजा शाह-खर्च आदमी था. कभी कुछ बचा कर तो रखा नहीं था. बस जो कहीं कुदरत से बचा-पाया था, उससे महीना-दो महीना गुजरे और फिर नौबत यहां तक पहुंची कि अनवरी की जायदाद भी बिकने लगी.

खाने-पीने के लिए तो किराया ही पर्याप्त था, पर मुकदमेबाजी करना तो हाथी बांधने के समान था. पैसों के कुएं-के कुएं खाली हो जाते हैं. दुश्मनी लेना कोई आसान थोड़ा है! मुहल्ले वालों ने एक दूसरे को गवाह बना कर इतने मुकदमे किये कि मिरजा की सारी उम्र खायी अफीम का नशा हिरन हो गया. अनवरी थी तो औरत, पर जिगर मर्दों वाला था. मिरजा को अपना बनाया तो क्या मजाल कि इस मुसीबत से जरा भी दूर हुई हो. डट कर मुकाबला करती रही और जायदाद यों नीलाम करती रही जैसे मिरजा लड़ाई-भिड़ाई से निपट कर फौरन दुबारा ले देगा. आदमी कितना ही दिल-गुरदे वाला हो पर एक से दो सदा बोझल होते हैं. मिरजा को महल्ले वालों ने मिल कर इतना सताया कि वह महल्ला छोड़ने पर मजबूर हो गया.

* *

मुहल्ला छोड़ने से उन्हें लड़ाई-झगड़े से सुख की सांस मिली, पर अब तक हालत इतनी हो चुकी थी कि रोटियों की फिक्र पड़ गयी. अनवरी की जायदाद दुश्मनों की भेंट हो गयी थी. मिरजा के पास तो था ही क्या? ढाक के तीन पत्ते. कोई हुनर होता तो भी कमा लेता. पर यह किसे पता था कि एक दिन दूध की दुकान छोड़ कर मिरजा मेहनत-मजदूरी भी करेगा? उसके हाथों में तो बस एक ही हुनर था कि अफीम की गोलियां बनाना और गोलियों को न्याज की शीरनी की तरह सौ-दो सौ आदमियों में बांट देना. इसी काम पर उसकी जिंदगी गुजर रही थी. अच्छी-खासी ऐश करता था. इस हुनर से गया तो दीन-दुनिया से भी गया.

फिर रोटियां भी पड़ीं भाड़ में, उसे तो दस-पंद्रह रुपये की अफीम रोज चाहिए थी. घर की मुर्गी दाल-बराबर थी. खूब अफीम खाता था. अब इतनी न खाता तो मक्खियां सारा दिन मुंह के गिर्द मंडरातीं और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रात को अनवरी की चारपाई छोड़ कर किसी अलग चारपाई पर सोना पड़ता. मिरजा ने बहुत दिन यह नरक भोगना सहन किया, फिर जल्दी ही उकता गया और अफीम की तोट ने भी अपना रंग दिखाया और उसका बुढ़ापा भी दिखाई देने लगा. अच्छा-खासा शरीर सूख कर कांटा बन गया और मटके जैसा पेट सूख कर कचरी बन गया. फिर धीरे-धीरे तबीयत की रही-सही गैरत भी अफीम न मिलने के कारण जवाब देने लगी जो जरा पेट भरने से पैदा होती थी. वह कोई खानदानी आदमी तो था नहीं. मिरजा भी किसी दिलजले ने खिताब दिया था जो उसे इतना अच्छा लगा कि अपना असली नाम भी भूल बैठा. अनवरी की आग में छलांग लगाई थी तो सारी उम्र की ऐय्याशी के गुमान के कारण ही था.

यह मार्का सर हुआ तो जरा सोचने का अवसर मिला तो अपने आप को सौ-सौ गालियां देने लगा. जरा-सी बात के पीछे भरे-पूरे घर को आग लगा दी. डूबते को सहारा दिया तो स्वयं भी डूब गया. उम्र भर की साथिन अफीम छूटी, सड़क की कई रंडियां जो हर पल उसकी प्रतीक्षा में आंखें बिछाये दीखतीं थीं, छूट गयीं.

फिर अमीना बाई की याद आयी. हाय! किस तरह की औरत थी? अगर अनवरी से ज्यादा सुंदर नहीं तो बुरी भी नहीं थी. बेचारी अब सैदानी बी को ब्याज देती होगी तो खुदा जाने कौन खर्च झेलता होगा? बात की बात में मिरजा इस तरह पछताया, जिस तरह सांप छूंछदर खा कर पछताता है. पर सब कुछ स्वयं ही किया था इसलिए पछताने से क्या हासिल था. बैठे-बिठाए अपना रुपया-पैसा ही नहीं खोया, बल्कि मिरजा को रोग भी लग गया था.

धीरे-धीरे अनवरी के साथ भी संबंध बिगड़ने लगा. अफीम थोड़ी मिलने के कारण तबीयत तो चिड़चिड़ी रहती ही थी, बात-बात पर झगड़े भी करने लगा. गाली-गलौज बिना बात ही नहीं करता था. कई बार तो अनवरी के फूल जैसे जिस्म पर डंडे भी बरसाए जाते, पर वह बड़ी नेक औरत थी. सब कुछ सहन करती रही और उफ न की. स्वयं दो-दो दिन भूखी पड़ी रहती पर मिरजा को अच्छा-खासा खिलाती.

मिरजा अनवरी से बददिल हुआ तो फिर अमीना के कोठे की याद आ गयी. एक दिन धीरे-धीरे सड़क की ओर चल पड़ा. रास्ते में खयाल भी आया कि जाने क्या फायदा है, न पैसा है, न धेला, मुफ्त में बेइज्जती होगी. पर पुरानी दोस्ती पर भरोसा कर के और अल्लाह का नाम ले कर कोठे पर चढ़ गया. अमीना ने मिरजा को अच्छा-भला देखा था, अब जो उस पर नजर पड़ी तो पहचान भी न सकी.

फिर जब मिरजा ने अपनी रामकहानी सुनाई तो आंखें मटका कर कुछ-कुछ वाकफी का हुंकारा भरा. और जब अनवरी का नाम आया तो पता नहीं क्या सोच कर मिरजा को घर बुलाने लगी.

उस दिन से मिरजा हफ्ते में एक-दो बार, घड़ी-दो घड़ी अमीना के पास जाने लगा. अमीना आवभगत भी करती और चलते समय पांच-दस रुपये भी अफीम के लिए हाथ पर रख देती. अनवरी को यों तो कोई एतराज नहीं था, मर्द जात घर की स्त्री के बिना भी बाहर दो-चार पीछे लगाए ही रखते हैं, पर इतना जरूर सोचती थी कि कहीं बना-बनाया घर बिगड़ ही न जाये. मिरजा पहले ही गरीबी से परेशान था. मिजाज भी बिगड़ा रहता था, उसके खिलाफ भड़का दिया तो गजब हो जायगा. उसका तो इसके बिना दूसरा कोई घर भी नहीं था.

और फिर अनवरी का यह डर भी सच्चा ही निकला. अमीना ने पहले तो मिरजा को मिला कर हाथों में कर लिया. फिर एक दिन उसके कान में ऐसी फूंक मारी कि मिरजा भड़क उठा. देर तक कानों में सायं-सायं होती रही. पर जब ठंडे दिल से सोचा तो अमीना की बात उसकी समझ में आ गयी.

सारी झूठी आन-बान जो थी सो वह भी मिनटों के तरारे के बाद खत्म हो गयी. आखिर उसने सोच ही लिया कि अमीना के साथ अनवरी को दुबारा कोठे पर बिठा देगा. वह घर लौटता तो देर तक अनवरी के साथ उलझा रहता. खूब तकरार होती और मिरजा छोड़ देने की धमकियां देने लगता या बातों ही बातों में अमीना की सलाह उसके कानों में से निकालता रहता.

अनवरी न मार-पिटाई से घबराई थी, न गाली-गलौज से, पर जो जिंदगी उसने छोड़ दी थी, उसकी ओर भूल कर भी नहीं जाना चाहती थी. जान जाये तो जाये, पर अनवरी अब फिर अनवरी बाई नहीं कहलाना चाहती थी और न ही चाहती थी कि बाजार में बैठ कर अपना थूका हुआ चाटना पड़े.

उधर मिरजा को अमीना बाई रोज बहकाती और सब्जबाग दिखाती थी. मिरजा स्वयं भी लालच का मारा हुआ था. इस पर उसने अनवरी के साथ अब खूब ज्यादतियां शुरू कर दीं. एक दिन पहले खूब मारा-पीटा और फिर चोटी पकड़ कर घर से निकालने पर तुल गया.

—लुच्ची, इसी जगह सती-सावित्री बनती है! अनवरी अब तक सब कुछ सह गयी थी, पर यह गाली उसके दिल में चुभ गयी. अगले दिन उसने मिरजा की जेब में से अफीम का बड़ा-सा गोला निकाला और कड़वे तेल के साथ खा गयी.

अनवरी तो उसी दिन कब्र में जा सोयी, पर भलामानस मिरजा मुद्दत तक सड़क पर अमीना के साथ सोने वालों का प्रबंध करता रहा.

(अनुवाद : सुरजीत) □□□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भाई

• हबीब कैफ़ी

कहीं जाने का प्रोग्राम है? मैंने भाभी को मुखातिब किया. वह शृंगार किये हुए थीं.

—नहीं तो. . . क्यों?

—तो फिर यह आज. . .? मैंने उनके नये-से कपड़ों की ओर इशारा किया.

—भई! तुम क्यों छेड़ते हो हमें? शर्माती हुई वह रसोई की तरफ निकल गयीं.

मैंने अंदाजा किया: मेरा अनुमान सही निकला. अनीस आये थे. रसोई से त्यौहार आदि पर बनाये जाने वाले पकवानों की महक आ रही थी. अम्मा भी वहीं थीं.

भाई से मिलने की इच्छा हुई. मैं दरअसल उन्हें बड़प्पन से कुछ कहने का इरादा रखता था— यह एक महीने में दो-दो चक्कर तुम्हें शोभा नहीं देते. अब तुम कोई नये-नये तो हो नहीं! नौकरी अलबत्ता नयी जरूर है. उसीका ध्यान करो. फिर भी अगर जी न भरे तो भाभी को साथ ले जाना. खाने वगैरह की तकलीफ भी रफा हो जायेगी!. . .

भाई से मैं यह सब कह देने की स्थिति में था. इस की वजह थी. हम में रिश्ता कम और दोस्ती ज्यादा थी. वैसे भी हमारी उम्र में कोई लंबा-चौड़ा फर्क भी नहीं था. वह मुझसे महज ढाई बरस बड़े थे.

उमरें दखल अंदाजी नहीं करतीं, हालात कर जाते हैं. इसीलिए तो यही बड़े भाई पिछले दिनों हीन भावना से ग्रस्त स्वयं को मुझसे छोटा समझने लगे थे. लगातार बेरोजगारी ने उन्हें हर कहीं छोटा कर के रख दिया था. और इसके साथ भाभी का महत्व भी कम होता चला गया था. बल्कि हकीकत यह थी कि शुरू से ही भाभी का महत्व हमारे घर में कुछ विशेष नहीं रहा था. वह जो अब्बा और अम्मी ने शादी से पहले भाभी के घर वालों से एक खास उम्मीद लगा रखी थी, पूरी न हो सकी. भाभी अपने साथ विशेष कुछ नहीं लायी थीं.

मायूसी के आलम में अब्बा ने भाई को उनकी हैसियत का अहसास दिलाना शुरू कर दिया था.

—बेहतर तो यही था कि तुम यह डिपलोमा की तखती न लगाते! अब्बा सबकी मौजूदगी में बिना कुछ सोचे-समझे भाई को संबोधित कर जाते—अमां! गलती हमारी ही थी. अब तुम हमारा धंधा भी तो नहीं कर सकते!

—मैंने कब मना किया है? भाई सफाई देते.

—मना करने का क्या मतलब? जूतियां गांठोगे? मोची बनोगे?. . . इस नफीस को देखो! अब्बा मेरी ओर इशारा करते, कब से बेचारा नौकरी कर रहा है! हमारे काम में भी हाथ बंटाता है. एक तुम हो! इसके बाद वह जैसे स्वयं से कहने लगते— पर इसमें तुम्हारा भी कोई क़सूर नहीं. डाक्टर और इंजीनियर तक भी तो बेरोजगार फिर रहे हैं!. . .

और अनीस सबकी मौजूदगी के अहसास के मारे

• सिद्धार्थ पटेल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

• सूरज एन. शर्मा

शर्मिंदा-से अपनी जगह खड़े शायद इसकी प्रतीक्षा करते कि जमीन फट जाये और अपनी बीबी के साथ वह उसमें गड़ जायें.

मुझे यकीन था कि भाई जूतियां गांठने में भी नहीं हिचकते, पर अब्बा का कोई ठीक नहीं था. वह अगर हमारा पुश्तैनी धंधा करने लग भी जाते तो अब्बा को इससे हर्गिज तसल्ली नहीं होती. तब भी वह उनके काम में बिलावजह कोई-न-कोई खामी निकाल कर डांटने-फटकारने लग जाते शायद.

ऐसे में अनीस को मैं ही हौसला बंधाने की कोशिश करता. उन्हें मैं अपने साथ ले कर बाहर निकल पड़ता.

—अनीस! फिल्म देखने चलते हैं. बड़ी जोरदार फिल्म लगी है.

—क्यों बोर करता है, यार? ला, सिगरेट पिला. सुबह से एक भी नहीं पी है.

हम धुआं उड़ाने लगते. मौका पा कर मैं उन्हें फिर किसी तफरीह वाली जगह चलने के लिए कहता तो वह बिगड़ जाते— अमां! जानता हूं, तू मेरा बड़ा हमदर्द है. पर मुझ पर तरस खाने की जरूरत नहीं.

— फिल्म देखने में तरस खाने जैसी बात कहां है? अलबत्ता तुम्हें अगर रुपए वगैरह दूं तो फिर भी...

—तो सुन, फिल्म में कम-से-कम पांच रुपये तो सर्फ होंगे ही; तू एक काम कर, यह पांच रुपए मुझे दे दे. मैं तुझे फिर किसी दिन फिल्म दिखला दूंगा.

—क्या करोगे इन रुपयों का?...कोई फर्माइशी चीज खरीदनी है? रुपए उनके हवाले करने के बाद मैं पूछता.

—तू अभी बच्चा है! वह हंसते.

अनीस का हाथ उन दिनों बहुत तंग था. बेहद छोटी-छोटी जरूरतें भी पूरी न कर पाते थे. अब्बा से जेबखर्च का सवाल ही नहीं था. अम्मा मजबूर थीं. मिलने वाले उनसे बहुत पहले ही कन्नी काट चुके थे. ऐसे में जब-तब वह मेरी तरफ ही देखते थे.

—तुम गलती कर रहे हो.

मैं भाई की तरफ सवालिया निगाहों से देखता तो वह स्पष्ट करते—मैं सिगरेट पीता जरूर हूं, पर इस कदर नहीं. यह पैकिट मेरे पास ही क्यों रहने दिया? तुम नहीं पिओगे?

—रखो. मुझे तो अब सोना ही है.

और अर्थपूर्ण मुसकान के साथ हम विदा हो लेते.

★ ★

और वह दिन. भाई को नियुक्ति पत्र मिल गया. ओवरसियर का पद. डिपलोमा काम आयी.

—परदेस का मामला है. जरा अपना ध्यान रखियो...ये कुछ रुपए हैं.

फासले से मैं अब्बा को देखने लगा था. यह वही अब्बा थे, जिन्होंने अनीस का जेबखर्च बंद कर रखा था. यही नहीं बल्कि अकसर उनके आगे तंगदस्ती का रोना रोते रहते थे. और भाई की बेरोजगारी से तंग आ कर जब-तब उन्हें कोसते-झिड़कते रहते थे. उस वक्त मेरी सख्त इच्छा हुई थी कि नजदीक जा कर उन्हें गौर से देखूं यह हमारे वही अब्बा हैं अथवा कोई दूसरा शख्स है?

घर में जैसे खुशी की लहर दौड़ गयी थी. अब्बा ने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खुदा का शुक्र अदा किया. अम्मी ने शुकराने की नमाज पढ़ कर शीरीनी बांटी. भाभी ने अलग से मिठाई का इंतजाम किया. और भाई को जैसे फिर से इज्जत के साथ जीने का हौसला मिल गया था.

अनीस को उसी दिन अपने ड्यूटी वाले मुकाम पर जाना था. सबने उन्हें खुशी-खुशी विदा किया.

* *

अम्मा कुबरा को डांट रही थीं. मेरे कान खड़े हुए. पता चला कि बहन से वह कपड़े धो डालने के लिए कह रही थीं और वह इसमें आना-कानी कर रही थी.

—इसकी पढ़ाई में दखल पड़ेगा. मैंने मां से कहा—भाभी धो देंगी.

—आज यह धो देगी तो कौन इसके हाथ घिस जायेंगे? पढ़-लिख कर हाकिम बनना है इसे? पराये घर जायेगी, वहां ऐसा कहेगी तो कैसे चलेगा?

—छोड़ो भी... मैं भाभी से कहे देता हूं.

—उसके सिर में दर्द है. और तेरे अब्बा का मिजाज तो तू जानता ही है... कल जुमा है.

अब्बा के मैले कपड़ों का उस दिन क्या बना, इसका मुझे इल्म नहीं; पर भाभी के सिरदर्द का पता मुझे अपने तई जरूर लग गया था. यह वही भाभी थीं, जो हरारत की हालत में भी घर के छोटे-बड़े किसी भी फर्द के काम से मुंह नहीं मोड़ती थीं. बल्कि सबकी हाजरी बजा लाने के बावजूद भी वह सहमी-सहमी रहतीं कि उनके काम में कोई मीन-मेख न निकाल दे!

* *

नवें दिन ही अनीस लौट आये. उन्होंने वहां अपना काम संभाल लिया था. वह अपने कपड़े और रोजमर्रा के इस्तेमाल का दूसरा जरूरी सामान लेने की गरज से आये थे. वह हालांकि एक दिन, बल्कि रातभर ही टिके थे. अगली सुबह वह वापस चले गये थे. और इस दौरान मैंने महसूस किया था कि अब्बा-अम्मा अब अनीस को मुझसे कमतर या गया गुजरा कतई नहीं समझ रहे हैं. उन्होंने वास्तव में भाई को अपना लायक बड़ा बेटा मानना शुरू कर दिया था. भाई के आराम वगैरह का खास खयाल रखा गया था. उस शाम खासतौर से भाई के पसंद के खाने बने थे.

अनीस अपने ड्यूटी वाले मुकाम से घर के हर सदस्य के लिए कोई-न-कोई चीज जरूर लाये थे. मुझे उन्होंने एक बढ़िया सिगरेट केस दिया.

अनीस के मिजाज में मैंने एक खास किस्म की तब्दीली महसूस की थी. उनमें एक आत्मविश्वास और जिंदगी को जीने का हौसला आ चला था. उनके वजूद पर अब मायूसी और नाकामी का साया कतई नहीं था.

मिलने पर भाई मुझसे उसी अपनत्व और बेतकल्लुफी से मिले थे. पर फिर भी मुझे लगा था कि वह कहीं मुझे अपने से छोटा और कमतर समझने लगे हैं. इस तब्दीली का मैंने नोटिस नहीं लिया. हर्ज ही क्या है? अपने तौर पर मैंने सोचा था, अनीस बड़े हैं; वह ऐसा समझते हैं तो स्वाभाविक ही है. मैं वास्तव में एक जूनियर क्लर्क ही तो हूं. वह ठहरे ओवरसियर...

अनीस से उस दिन मिलना नहीं हो सका. रात वह बड़ी देर से लौटे थे. अगली सुबह भी मुझीको उन्हें ढूंढ़ना पड़ा. वह अपने कमरे में थे. भाभी रसोई में थीं.

—यह क्या बेमुरव्वती है? भाई के कमरे में दाखिल होते हुए मैंने कहा— हम मुलाकात से भी गये!

उनके हाथ में कोई किताब थी. मुझे देख कर वह मुसकराये.

—तुम्हें शिकायत का हक है! किताब एक ओर रख कर हंसते हुए वह बोले—भई, सॉरी! मैं दरअसल... अच्छा छोड़ो. आज दिन में क्या-क्या प्रोग्राम हैं तुम्हारे?

—क्या मतलब? दफ्तर जायेंगे. और तुम?

—हम लौट कर आज नहीं जायेंगे. आज हम फ्री हैं और चाहते हैं कि तुम भी फ्री हो जाओ. दफ्तर से छुट्टी ले लो और हमारे साथ रहो.

देर तक हम शहर की परिचित सड़कों को अपने पैरों तले रौंदते रहे. थकने पर रेस्तरां में बैठ कर कॉफी की चुस्कियों के बीच खुशगप्पियां करने लगे. वह जो भाई के मिजाज में अपने प्रति मैंने एक तब्दीली महसूस की थी, इस दौरान खत्म होती लगी. बाद में हमने मद्रास में बनी एक हिंदी फिल्म का मैटिनी शो देख डाला. अनीस आनन-फानन पैसा खर्च कर रहे थे.

पिक्चर के बाद घर का रुख करना था, पर भाई ने उस शाम पीने का प्रस्ताव कर दिया. पीने के हम आदी नहीं थे. साल-छह महीने में अलबत्ता कभी किसी पार्टी आदि में एकआध पेग लेने में बुराई नहीं मानते थे.

पीने में शाम बीत गयी. इसके बाद हमने घर का रुख किया. हम पूरी तरह होश में थे. भाई के साथ चलते हुए मुझे लगा कि वह खुशमिजाज हो चले हैं. वह चहके-चहके और प्रसन्न लग रहे थे. इससे मुझे खुशी हुई.

—नफीस, भाई ने मेरे कंधे पर हाथ रखा. घर नजदीक आ गया था. मैंने उनकी तरफ देखा.

—तुम्हें कैसा लग रहा है? उन्होंने पूछा.

—तुम्हारे साथ?... बहुत अच्छा लग रहा है! बोरियत का अहसास तक नहीं होता. जी करता है कि वहां तुम्हारे ड्यूटी वाले मुकाम चला चलूं. आबोहवा भी तब्दील हो जायेगी.

—सच? तो फिर एक काम कर, उन्होंने मेरी तरफ देखे बगैर कहा— फिलहाल कल तू अकेला ही वहां चला जा. मैं जहां रहता हूं, वहां का पता तुझे दे देता हूं; जा कर सब सामान ले आ.

मैंने सवालिया निगाहों से अनीस की तरफ देखा. वही चिरपरिचित चेहरा था. वही वजूद. जानने के लिए विशेष कुछ भी नहीं रह गया था. फिर भी भाई ने दो शब्दों में मुझे बता डाला कि उनकी छंटनी कर दी गयी है. वहां वह कुछ लोगों के देनदार भी थे.

घर आ गया. घर में दाखिल होते वक्त मैंने अनीस की तरफ नहीं देखा. दरअसल मुझमें इतना साहस ही नहीं था. हम दोनों बेहद चुप थे. □□□

आयशा मंजिल क्वार्टर नं. ३.
हनुमान भाखरी के पीछे, जोधपुर—१९

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतीय भाषाओं की प्रथम मौलिक कथाएं और आद्यकथाकार

(६)

किसी भी भाषा की पहली कहानी की खोज अपने आप में एक महत्वपूर्ण और रोचक कार्य है. इस महत्वपूर्ण खोज के लिए 'सारिका' ही पहल कर रही है. पूर्व के अंकों में मलयालम, गुजराती, बंगला, तेलुगु, डोगरी, कश्मीरी, सिंधी और उड़िया की प्रथम मौलिक कहानियां आप पढ़ चुके हैं. इस अंक में दी जा रही है पंजाबी की प्रथम उपलब्ध मौलिक कहानी 'भत्ता'. यद्यपि 'भत्ता' से पहले 'कमला-अकाली' शीर्षक कहानी के लिखे जाने की बात भी कही गयी है किंतु न तो वह किसी संकलन में छपी और न ही कहीं उसकी कहानी के रूप में चर्चा ही हुई. जब यह क्रम समाप्त होगा तब आप स्वयं ही निर्णय ले सकेंगे—एक; कि भारतीय भाषाओं में से पहली आधुनिक कहानी किस भाषा के पास है और दो; कि क्या कहानियां सचमुच पश्चिम से आयी थीं?

प्रथम मौलिक पंजाबी कहानी

भत्ता: एक विवेचन

• जसवंत सिंह विरदी

आज की पंजाबी कहानी किसी भी भारतीय भाषा की कहानी की तुलना में रखी जा सकती है. बल्कि पंजाबी कहानी देश-काल की सीमाओं को पार कर के विश्व साहित्य में भी अपना स्थान बना रही है. विश्व कहानियों के पश्चिम जर्मनी से छपनेवाले एक संकलन में श्री सुजान सिंह की कहानी सम्मिलित है. इसी प्रकार एक और संकलन में श्री कर्तार सिंह दुग्गल और अमृता प्रीतम की कहानियां भी शामिल हैं. रूसी भाषा में तो अनेक लेखकों की कहानियां छप चुकी हैं.

पंजाबी कहानी ने यह प्रगति शताब्दियों के वक्फे में नहीं की, बल्कि आधी शताब्दी में ही पंजाबी कहानी को यह गौरव प्राप्त हो गया है.

इस समस्या को लेकर पंजाबी साहित्य क्षेत्र में बहुत चर्चा होती रही है कि पंजाबी की प्रथम कहानी कौन-सी है? और क्या यह पश्चिम के प्रभाव द्वारा शुरू हुई है अथवा इसके तत्व पहले ही बीजरूप में उपस्थित थे?

पंजाबी गल्प साहित्य में 'आदि जन्मसाखी' को पर्याप्त मान्यता प्राप्त है, परंतु यह जन्म साखी कई शताब्दियों पूर्व लिखी गयी थी और इस में आधुनिक कथा अथवा कहानी वाली कोई बात नहीं है. स्वर्गीय ज्ञानी हीरासिंह दर्द ने पंजाबी सघरा (१९४०) कहानी संग्रह में लिखा है—'पंजाबी में प्रथम मौलिक छोटी कहानी जो मैंने पढ़ी है, जहां तक मुझे स्मरण हो आता है, वह 'कमला अकाली' नाम की कहानी थी जो स. लाल सिंहजी कमला, अकालीजी ने लिखी थी और शायद १९२१ में 'अकाली' समाचार पत्र में छपी थी. यह कहानी धार्मिक थी.

'कमला अकाली' नाम की कहानी अब तक किसी संकलन में नहीं छपी और न ही पंजाबी की प्रथम कहानी के रूप में उसकी चर्चा ही हुई है. ज्ञानी हीरासिंह दर्दजी ने सन् १९२४ से लेकर १९४० तक अपने मासिक पत्र 'फुलवाड़ी' में सम्भवत: तीस कहानियां प्रकाशित की थीं और जो कहानी संकलन उन्होंने संपादित किया, उसमें भी उन्होंने इस कहानी को सम्मिलित नहीं किया.

डा. सर्विदर सिंह उप्पल अपनी पुस्तक 'पंजाबी कहानीकार' में स. चरणसिंह शहीद के बारे में लिखते हैं—'पंजाबी का वह प्रथम कहानीकार है जिसने सुचारु रूप से पंजाबी छोटी कहानी को पश्चिम और विशेषत: अंग्रेजी कहानी के मार्ग पर चलाया और अपनी कहानियों के लिए आदर्श अंग्रेजी कहानी को बनाया.'

मगर स. चरनसिंह कहानी के क्षेत्र में मौलिक लेखक नहीं थे, एंतव चेखव की प्रसिद्ध कहानी—'गिरगिट' उनके नाम से पंजाबी में छपी हुई है. शेष सामग्री भी उन्होंने इधर-उधर से ही प्राप्त की थी. इसी तरह भाई मोहनसिंह वैद्य और श्री बलवंत सिंह चतर्थ जैसे कुछ और लेखकों ने भी धार्मिक और प्रच-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पंजाबी आद्यकथाकार : संतसिंह सेखों

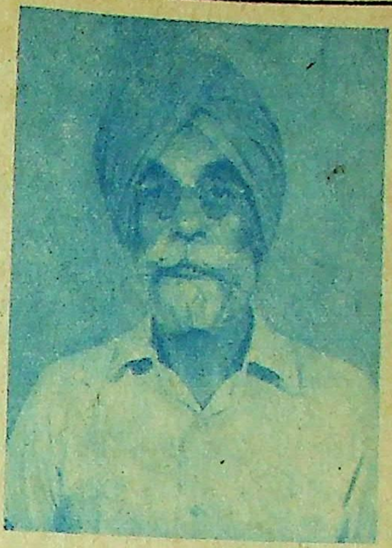

सेखों का जन्म चक न. ७० जिला लायलपुर (अब पाकिस्तान) में श्री हुकम सिंह के घर हुआ. लायलपुर में इनके पिता खेती का काम करते थे, इन्होंने खालसा कालेज, अमृतसर से अर्थशास्त्र और अंग्रेजी भाषा में एम. ए. किया और सन् १९३१ में उसी कालेज में प्राध्यापक नियुक्त हो गए. १९३६ में कालेज में हड़ताल होने की वजह से नौकरी छोड़नी पड़ी और नौकरी से विमुक्त होकर लाहौर से 'नार्दर्न रिव्यू' नामक पत्रिका निकाल ली. १९४० में फिर खालसा कालेज, अमृतसर की प्राध्यापकी की ओर नौकरी स्वीकार कर ली. सन् ४३ में ठेकेदारी के पेशे का प्रयोग किया जो कि असफल रहा और घाटे का सौदा सिद्ध हुआ. १९४८ में फिर खालसा कालेज, अमृतसर की नौकरी की. फिर १९५२ के चुनाव में मार्क्सवादी पार्टी की ओर से खड़े हुए परंतु पैसे की कमी के कारण जीत न सके. तत्पश्चात कुछ समय तक गुरू सर सुधार के कालेज में प्राध्यापक रहने के बाद, पहले वह माता गुजरी कालेज, सरहिन्द के प्रिंसीपल (१९६१) बने, फिर खालसा कालेज पटियाला के प्रिंसीपल और फिर कुछ समय के लिए गुरु गोबिंद सिंह रिपब्लिक कालेज, जंडियाला, (जालंधर) के प्रिंसीपल रहे. उनका विचार है कि वह अपने कालेज को ही एक विश्वविद्यालय और स्वयं को उपकुलपति समझते रहे हैं. यदि वह मार्क्सवादी न होते, तो अवश्य ही किसी विश्वविद्यालय के उपकुलपति बन चुके होते!

आजकल संतसिंह सेखों अपने गांव दाखा (जिला लुधियाना) में फार्मिंग करते हैं और साथ में पंजाबी विश्वविद्यालय, पटियाला के लिए अर्थशास्त्र-पंजाबी शब्दकोष तैयार करवा रहे हैं.

संत सिंह सेखों सर्वप्रथम अंग्रेजी में कविता और कहानी लिखते थे. उनकी कुछ कविताएं इंग्लैंड की पत्रिकाओं में भी प्रकाशित हुई हैं.

श्री सेखों पंजाबी के प्रमुख कहानी लेखक, कवि, नाटककार, उपन्यासकार, निबंध लेखक और आलोचक हैं. उन्होंने ही पंजाबी आलोचना को मार्क्सवादी दिशा दी है. लेनिन के जीवन पर उन्होंने जो नाटक लिखा—'मित्र प्यारा', उस पर उन्हें साहित्य अकादमी का ५००० का पुरस्कार प्रदान किया गया.

संतसिंह सेखों के पक्ष और विरोध में जितना कुछ लिखा गया है, और किसी लेखक के बारे में, उसके जीवन काल में, इतना कुछ नहीं लिखा गया.

संतसिंह सेखों सागर की तरह विशाल हैं, जो अपनी मर्यादा नहीं छोड़ता.

लत्त विषयों पर कथाएं लिखीं, जो कि मौलिक कहानियां नहीं थीं. इन कथाओं का शिल्प भी नवीन नहीं था और शैली भी नहीं!

१९२० से १९३५ तक का समय पंजाबी गल्प के लिए विशेष संभावनाओं का समय था. इस काल में श्री गुरुबख्श सिंह, ज्ञानी हीरासिंह दर्द, जोशुआ फजलदीन, गुरुमुख सिंह मुसाफिर, चरनसिंह शहीद तथा नानक सिंह ने गल्प के क्षेत्र में कुछ नये प्रयोग किये परंतु पंजाबी की कलात्मक और मौलिक कहानी का जन्म १९३५ में ही हुआ जबकि सर्व श्री संतसिंह सेखों, सुजान सिंह, मोहन सिंह और कर्त्तारसिंह दुग्गल ने लिखना शुरू किया. इनमें से संत सिंह सेखों प्रथम कहानी लेखक है, जिसने अंग्रेजी में लिखना छोड़ कर पंजाबी में कलम सम्भाली और उसने प्रथम कहानी 'भत्ता' लिखी. इस संबंध में सेखों के प्रथम कहानी संग्रह 'समाचार' (१९४३) की भूमिका में श्री सोहन सिंह जोश लिखते हैं—'संत सिंह सेखों ने सबसे प्रथम मेरे कहने पर पंजाबी में पत्रिका 'प्रभात' के लिए लिखना शुरू किया था और 'प्रभात' में प्रो. साहिब की प्रथम दो कहानियां 'भत्ता' और 'कीटां अंदर कीट' फरवरी तथा मार्च १९३६ के अंकों में प्रकाशित हुई थीं. 'भत्ता' की उस समय विशेष प्रशंसा हुई थी, और आज भी मेरी राय में विश्व साहित्य संसार में यह एक बहुत ऊंचा स्थान प्राप्त कर सकती है!'

स्वयं संत सिंह सेखों नें भी पुस्तक—'झूठियां सच्चियां' की भूमिका में लिखा है—१९३५-३६ में एक लूटमार परंतु स्वस्थ लड़की की भांति पंजाबी कहानी का यौवन एक दम प्रस्फुटित हो गया, 'प्रभात',

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

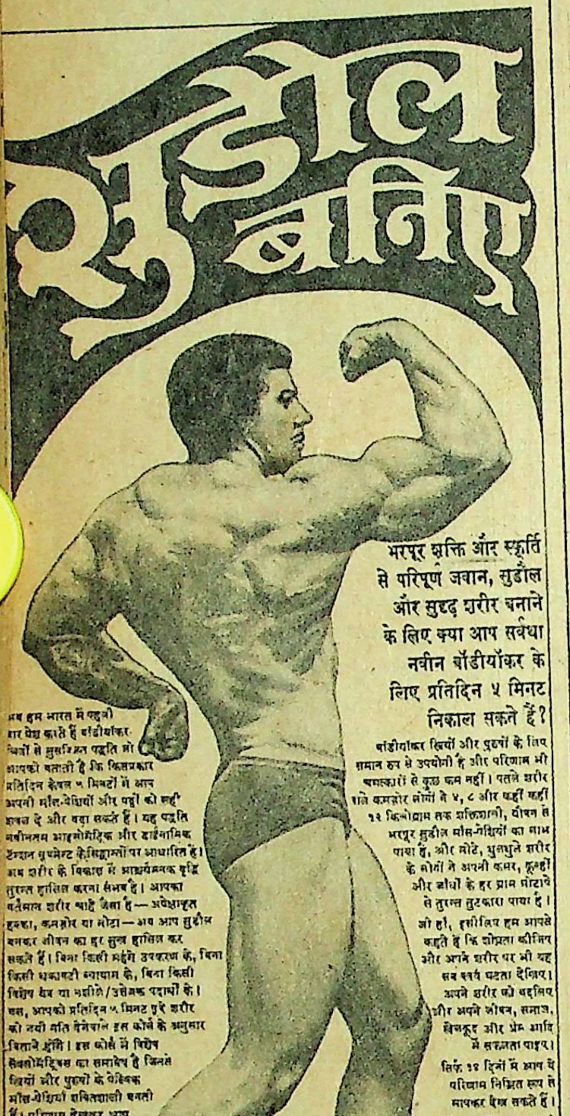

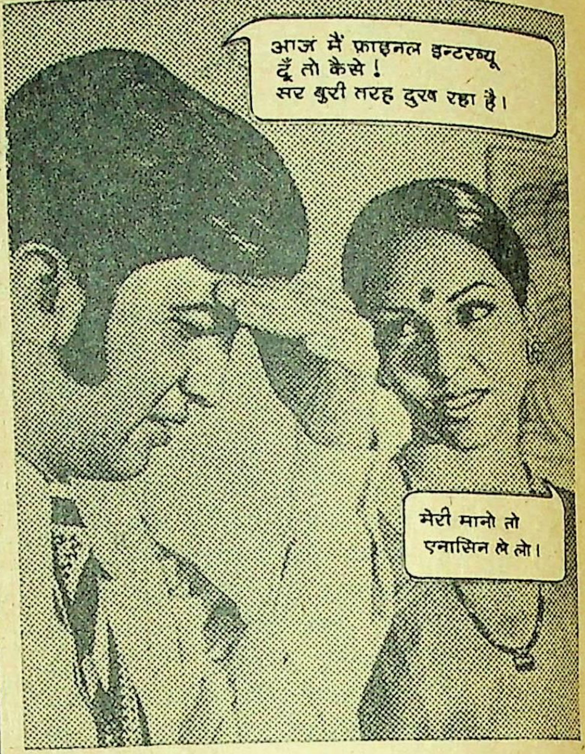

जल्द आराम पाने के लिए तेज़ असर और विश्वसनीय एनासिन लीजिए

तेज़ असर—एनासिन में वह दर्द-निवारक दवा ज़्यादा है, जिस की दुनिया-भर के डॉक्टर सिफ़ारिश करते हैं। इसी लिए एनासिन दर्द से जल्द आराम दिलाती है।

विश्वसनीय—एनासिन आपके डॉक्टर की दवाई की तरह दवाओं का नपा-तुला सम्मिश्रण है। इसी लिए एनासिन पर लाखों लोगों को पूरा भरोसा है।

एनासिन बदन के दर्द, दाँत के दर्द, सर्दी-जुकाम और फ़्लू की पीड़ा से भी जल्द आराम दिलाती है।

तेज़ असर और विश्वसनीय

एनासिन,

भारत की सब से लोकप्रिय दर्द-निवारक दवा

A/2/8-74

Regd. User of TM: Geoffrey Manners & Co. Ltd.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'लिखारी' और 'पंज दरिया' ने पंजाबी में नई कहानी को क्षेत्र प्रदान किया. सुजान सिंह, कर्त्तारसिंह दुग्गल, मोहन सिंह और संत सिंह सेखों—के कहानियों के संकलन-'दुख सुख (१९३९) 'सवेर सार' (१९४०), 'निकी निकी वाशना' (१९४२) और 'समाचार' (१९४३) प्रकाशित होने से पंजाबी कहानी भारत की अन्य भाषाओं की कहानी की पंक्ति में खड़ी हो गयी.'

मेरे विचार में सन् १९२० से लेकर १९३५ तक पंजाबी पत्र-पत्रिकाओं में जिस गल्प रूप के प्रयोग हो रहे थे, उन्होंने १९३० के बाद अपना गल्प-स्वरूप निश्चित करना शुरू कर दिया होगा. फलस्वरूप, संतसिंह सेखों की कहानी 'भत्ता' पंजावी की प्रथम मौलिक कहानी है, जिस द्वारा पंजाबी में कहानी के विलक्षण अस्तित्व की परंपरा शुरू होती है. उपरिलिखित लेखकों और उनके बाद के लेखकों ने विशेष रूप से पश्चिम की कहानी से प्रभाव ग्रहण किया है. इन लेखकों के बारे में तो संत सिंह सेखों ने 'झूठियां-सच्चियां' की भूमिका में भी लिखा है कि—'संत सिंह सेखों, प्रो. मोहन सिंह, कर्त्तारसिंह दुग्गल और सुजान सिंह कहानी-संसार में कैथरीन मैनजफील्ड के संप्रदाय के अनुयायी हैं.'

श्री सुजान सिंह ने भी १९३५ तक लिखना शुरू कर दिया था परंतु उनकी प्रथम कहानी 'भुलेखा' से 'भत्ता' पहले लिखी गयी थी. यह वही समय था जबकि श्री प्रेमचंद हिन्दी में 'कफन' लिख चुके थे और राजेंद्र-सिंह बेदी ने भी अपनी प्रथम कहानी 'भोला' लिख ली थी.

संतसिंह सेखों की कहानियों का सूक्ष्म वातावरण कैथरीन मैनजफील्ड का कहानियों को स्मरण करवाता है. मगर अपनी कहानी के प्रथम चरण में सेखों एक ही समय फ्रायड और मार्क्स के दर्शन से प्रभावित थे. अभी तक भी वह इन दोनों के प्रभाव को छोड़ नहीं सका. यह अलग बात है कि मार्क्सवाद का प्रभाव उस पर अधिक रहा है.

'नीहां ते ममटियां' नाम के संग्रह में डा. हरनाम सिंह शान लिखता है कि आधुनिक पंजाबी कहानी के निर्माण की बुनियादें 'पुरातन जन्म साखी' (जीवन कथा गुरु नानक) की साखियों में खोजी जा सकती हैं.' यदि इस कथन के तर्क को मानना हो तो फिर 'पंचतंत्र' सर्वप्रथम कहानी संग्रह है.

मगर पंजाबी कहानी ने अपने अस्तित्व के मूल तत्व पश्चिम की कहानी में से प्राप्त किये हैं, भारतीय परंपरा में से नहीं. पंजाबी के सभी विद्वान इस मत पर सहमत हो चुके हैं.

संतसिंह सेखों पंजाबी का सर्वप्रथम मौलिक कहानी लेखक है जिसने कहानी को समकालीन जीवन के भाव-बोध और संचार का माध्यम बनाकर इसे समय के सत्य को प्रकट करने में समर्थ किया. इस लेखक द्वारा की गयी शुरुआत की वजह से ही कहानी को पंजाबी में गौरवमय स्थान प्राप्त हुआ है, जो स्थान कहानी को पश्चिम में भी प्राप्त नहीं है. अब यदि कहानी संस्कृति के उत्थान की साहित्यिक प्रतीक बन गयी है, तो इस परंपरा का

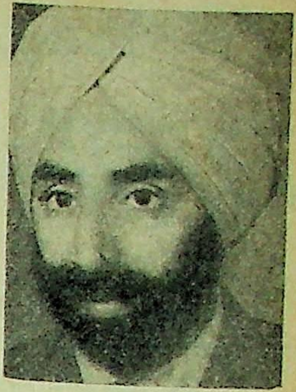

जसवंत सिंह विरदी (जन्म : ७ मई १९३४) : पंजाबी के जाने-माने कहानीकार हैं. इनकी सशक्त लेखनी ने आज के आदमी की जिंदगी को उसकी अपनी उच्छृंखलताओं और विडंबनाओं के साथ बड़े सही रूप में चित्रित किया है. कहा जा सकता है कि इनकी कहानियां संबद्ध लेखन का उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत करती हैं.

प्रारंभ 'भत्ता' कहानी से ही हुआ है.

'भत्ता' कहानी मूल रूप में स्त्री—पुरुष के परस्पर शारीरिक आकर्षण की कहानी है. सेखों की अधिक कहानियां स्त्री-पुरुष के शारीरिक और मानसिक संबंधों की समस्याओं की कहानियां हैं और उसके गांव के जाट अथवा अन्य किसान-जीवन के प्रतिनिधि होते हैं. इस कहानी का नायक हरनाम सिंह प्रातःकाल उठकर पिता के साथ खेतों में काम के लिए आ जाता है. वह सूर्योदय के साथ अन्य किसानों की तरह घर से आने-वाले 'भत्ते' (हाजरी) का इंतजार करता है. वह सोचता है कि उसकी नवविवाहिता पत्नी भत्ता लेकर आ रही होगी. मगर भत्ता लेकर उसकी पत्नी नहीं, बल्कि उसकी बहन नामो आती है. नामो को देखकर उसका शरीर शिथिल हो जाता है और मन दुखी. उसकी इस अवस्था को देख कर उसका पिता अपनी बेटी को कहता है—'नामो ! पुत्र, अपनी भाभी को रोटी देकर भेजो. तुम लस्सी (छाछ) बहुत कम लाती हो.'

समूची कहानी में लेखक का ट्रीटमेंट मनोवैज्ञानिक है और 'भत्ता' खेतों में काम करने वाले किसान के लिए इंतजार का प्रतीक बन जाता है. शिल्प की दृष्टि से इस कहानी में कसाव कम है तथा कुछ और भी कलात्मक त्रुटियां अवश्य रह गयी हैं जिनके बारे में इन पंक्तियों के लेखक की सेखों साहिब से बात भी हो चुकी है. उन्होंने कहा था—यदि यह कहानी सन ५७ में लिखी जाती तो इसका स्वरूप कुछ और ही होता.

संतसिंह सेखों ने पंजाबी कहानी को धार्मिकता तथा प्रचार के दलदल में से निकाल कर इसे राजनीतिक, आर्थिक और मनोवैज्ञानिक आधार दिया है और कथा को कहानी के शिल्प में ढाला है. सेखों के बयान में सूक्ष्म कटाक्ष है और कहानी के वातावरण में ताजगी का प्रभाव फैला रहता है.

संतसिंह सेखों की प्रथम पुस्तक 'समाचार' पंजाबी कहानी के स्वरूप को निश्चित करती है और उनकी कहानियों का परवर्ती पंजाबी कहानी पर इतना गहरा प्रभाव है कि उन्हें पंजाबी कहानी का पितामह माना जाता है. □

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रथम मौलिक पंजाबी कहानी

भत्ता

संत सिंह सेखों

नामो शायद रात के समय देर तक गुड़िया के सूटों की चिंता में डूबी रही थी, शायद पश्चिम की ठंडी वायु के कारण अथवा किसी और वजह से. दूसरे दिन वह सुबह सूर्य उदय होने तक चारपाई से न उठी. मां उसकी कुछ करारे स्वभाव की थी, उसने आवाजों से छत फाड़नी शुरू कर दी थी.

--अरी रांड! अब और क्या तू वन की तरह बढ़ेगी, बारह वर्षों की हो गयी है, इतनी बढ़ी है, और अब तक सोई पड़ी है. मैं भी जगाती नहीं, आज रोटी तूने ले जानी है? जब जी चाहे ले जाना. वहां तेरा बाप ही तुझे ठीक करेगा.

यदि नामो बीमार भी होती तो भी मां के 'इस न जगाने' से उठ बैठती, इसलिए वह क्षण में ही बिछौना और चादर लपेट कर, कंधे पर रखती हुई नीचे उतर आयी. पानी का गिलास भर कर हाथ-मुंह धोया और अपनी रोटी तथा दही की कटोरी निकाल कर खाने लगी. उधर मां भी अपना 'न जगाने' का प्रण पूरा करती रही और नामो के खसम (पति) और भाइयों को पीटती रही. पड़ोस से पीतो की माता ने भी आवाज दी--नामो, अरी बेटी! हमारी पीतो को भी रोटी देने के लिए साथ ले जाना.

नामो ने शीघ्र ही हाजरी खत्म कर ली और फिर उधर मुड़कर देखा. मां ने रोटियां, दहीं और प्याज कपड़े में बांधकर लस्सी की मटकी पर रख दिये थे. नामो ने उन्हें उठाया और चुपचाप घर से चल दी. रास्ते में पीतो को भी बुला लिया और दोनों सखियां खेतों में रोटी देने चल पड़ी.

उधर हरनाम सिंह हल रोक कर गांव की ओर देख रहा है. उसे यह भी डर है कि उसके साथ वाले हलवाहक बापू को पता न चल जाए कि पीछे वाला हल खड़ा हो गया है. हरनाम सिंह की दृष्टि थक गयी है. उसी समय, क्षण भर में ही ईख के पीछे से लंबे-लंबे कदम उठाती और थिरकती हुई एक बहू, जिसने घी-कपूरी घाघरा पहना हुआ और सिर पर गुलाबी दुपट्टा ओढ़ा हुआ था, भत्ता उठाये आ रही थी.

--वह मेरी रोटी आती है, मन पुलकित होकर कहता है. यह केवल भत्ता ही नहीं बल्कि प्रातःकाल हल चलाने के कारण उठ जाने की वजह से, प्राप्त न हो सकी. प्रेम की अंतिम किस्त ब्याज सहित साथ लिये आ रही है. आंखों में से एक झनझनाहट-सी शुरू हो कर कमर में, कूल्हों में से गुजरती हुई जांघों में उतरती है और फिर ऊपर को चढ़ जाती है. दिल में चटख-सी होती है. हलवाहक उधर से मुख मोड़कर बैल को पराणी (पशुओं को हांकनेवाली छड़ी) मारता और ललकारता है. सिपाड़ (हल द्वारा बनाई गयी दरार) बहुत जल्दी आ जाती है और फिर उसी जगह आकर वही अवस्था हो जाती है. दूसरा सिपाड़ निकालकर जब वह फिर उसी जगह आता है तो गुलाबी दुपट्टे और घी-कपूरी घाघरे वाली सुंदरी के चेहरे की रश्मि आंखों से टकराती है. आंखें विद्युत से भी अधिक तेजी से वहां पहुंचती हैं और सुंदरी क्षण में हीं घूघट निकाल लेती है.

--अरे, यह तो बंते की बहू है, दिल धरती में धंसता हुआ बता जाता है.

फिर वही पुरानी रफ्तार, शरीर की लचक गायब, पांच-छः सिपाड़ निकाल कर बेचारा उत्सुक आंखों को फिर उस ईख के खेत की नुक्कड़ की ओर जाने की आज्ञा दे देता है. बैल आहिस्ता चलने लगते हैं. क्षण भर देखने के बाद निराश होकर फिर आंखों और दिल को मोड़ लेता है और खीझकर बैल को छड़ी मारता है. ललकार की जगह एक सुस्त-सी चिटकारी ही निकलती है. दिल करारा करके दो-तीन सिपाड़ और निकाले तो फिर दिल-आंखों को ईख की उसी नुक्कड़ पर ले गया कि अबकी जरूर इच्छा पूरी हो जाएगी. क्षण भर बाद जब आंखें कहीं और इधर-उधर झांकने के लिए तैयार हो रही होती हैं तो ईख की नुक्कड़ से क्षण में ही एक लंबी, चमकदार, पतली (कृशकाया) ने मोड़ काटा. मगर, उसका घाघरा घी-कपूरी नहीं बल्कि किसी और ही रंग का है. (वह पत्नी के रोज के घाघरे का घी-कपूरी रंग और दुपट्टे का गुलाबी रंग ही जानता है.) शायद घाघरा बदल लिया हो परंतु आशा का सूत्र टूट जाता है जब दो गुड़ियों जैसी लड़कियां साथ ही, उसके पीछे आती हुई दिखाई देती हैं.

--यह तो नामो है, एक जबड़े ने तो रोटी खाने की सलाह ही हटा दी है. मां के काम ने लालच की वजह से नहीं आने दिया, नामो को ही भेज दिया.

क्या कर सकता था? बैल को एक छड़ और मार दी जो उसके कूल्हे पर लगी. वह कुछ उछल गया और सिपाड़ टेढ़ा हो गया. . . 'दरार पड़ी रह जाए', कह कर सिपाड़ के पीछे चल पड़ा.

* *

आठ-दस सिपाड़ निकल चुके. दिल की कामना पूरी नहीं हुई तो पेट क्यों खमियाजा भुगते? बेचारे ने फिर रास्ते की ओर देखा. घाघरे वाली तो साथ के खेत की ओर चली गयी. नामो और पीतो पहुंच गयीं.

--भाई, रोटी खा ले, नामो ने मधुर आवाज में पुकारा.

--खा लेते हैं, यह सिपाड़ निकाल लें, हरनाम सिंह ने भर्राए गले से उत्तर दिया.

सिपाड़ आ गया और पिता-पुत्र हल छोड़कर रोटी खाने के लिए बैठ गए. हरनाम सिंह को तो हाथ धोने की भी बात न याद रही. पिता भी जानता है कि बहू के न आने से लड़का कुछ सुस्त पड़ गया है.

--नामो पुतर, अपनी भाभी को रोटी देकर भेजा कर. तू लस्सी बहुत कम लाती है. बड़ी मटकी उठा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं सकती, यह लस्सी तो हम अभी पी लेंगे.

—नहीं बापू! भाभी आज दाने पीसती थी. आटा खत्म हो गया था इसलिए नहीं आयी.

—दाने! दाने हम चक्की पर पीस देंगे. अपनी मां से कहना, चने सूखने के लिए रख छोड़े, हम आज दाने पीस देंगे. हरनाम सिंह! आज हल चाहे जरा जल्दी ही छोड़ दें, जाकर दाने पीसने हैं.

हरनाम सिंह को आज पिता और सब दिनों की अपेक्षा अच्छा लगा. उस दिन भी अच्छा लगा था जिस दिन उसकी शादी थी और पिता ने कपड़ों के लिए तीस रुपये दिये थे. मगर वह 'अच्छा' कहकर चुप कर गया. उसके दिल में कुछ चुभन की तरह चला गया था जो मां के विरुद्ध सब बातों की गांठ खोलने लग पड़ा था.

—बापू, आप रोटी खा लीजिए, हम आगे जा कर पीतो की रोटी दे आएं, नामो क्षण भर बाद बोली.

नामो के पिता को पीतो बहुत अच्छी लगती थी—पीतो तेरी भाभी नहीं रोटी लेकर जाती? उसने पीतो को प्यार से पूछा.

पीतो को पता नहीं था कि उसकी भाभी रोटी देने के लिए खेतों में क्यों नहीं आया करती थी. उसका भाई कालेज में पढ़ता था और पिता ही मजदूरों के साथ हल चलाता था. उनकी रोटी—पीतो मां ले जाती थी अथवा जिस दिन पिता हल चलाने के लिए न जाए, वह ले जाता था और कभी-कभी पीतो की भी बारी आ जाती थी. नामो के पिता को पता था कि यदि लड़का हलवाहक न हो तो बहू रोटी लेकर नहीं जाती, मगर उसने यह प्रश्न केवल पीतो के साथ बातें करने के लिए ही किया था.

—पता नहीं, चाचा, पीतो ने पहले से भी अधिक मिठास के साथ उत्तर दिया. पिता-पुत्र दोनों मुसकरा दिये मगर नामो और पीतो, दोनों को, अंतर्मन की बात का पता न चला.

—पीतो तेरी भाभी पढ़े हुए की बहू है, वह रोटी लेकर नहीं जाती.

—नहीं, मेरी मां ने कभी उसे कहा ही नहीं, पीतो ने अपनी भाभी के पक्ष में बात की, मगर फिर चाचा की बुद्धि के सामने अपनी बुद्धि को झुकाकर कहा, पता नहीं, इसी तरह ही होगा.

पिता और पुत्र दोनों हंस दिये तो नामो और पीतो भी मुसकराने लगीं. हरनाम सिंह आदि तो रोटी खाते रहे और नामो और पीतो, पीतो की जागीर की ओर चल दीं.

खेत भर की दूरी पर जाकर पीतो ने नामो से पूछा—अरी, तेरी भाभी रोटी लेकर क्यों नहीं आती?

नामो को भी पता नहीं था, मगर उसने एक उपाय सोचा—पीतो, कल को तुम अपनी भाभी को साथ लेकर रोटी देने के लिए आना. मैं भी अपनी भाभी के साथ आऊंगी. अगर तुम्हारी भाभी न आई तो तुम पूछना कि क्यों नहीं आती.

—अच्छा, पीतो को भी बात कुछ जंच गयी. मगर फिर कहने लगी, तेरी मां ने तुम दोनों को नहीं आने देना. कहेगी एक जनी जाओ. नामो को भी इसी तरह महसूस हुआ और उसने कोई और बात न की.

पीतो के खेतों में पीतो का पिता और दो मजदूर हल चला रहे थे. पीतो को देखकर सभी प्रसन्न हो गए.

—आज पीतो रोटी लेकर आयी है? एक ने कहा. अरी, थक तो नहीं गयी? दूसरे ने बगल से कहा. नामो को महसूस हुआ कि पीतो को सब प्यार करते हैं परंतु उसकी कोई परवाह नहीं करता.

पीतो ने मजदूरों की खुशामद और नामो की उदासी, किसी की ओर ध्यान न दिया. क्षण में ही वे रोटियां पकड़ाकर वापस चल पड़ीं. बर्तन बापू ले आएगा.

—अरी, कल को भी रोटी देने तू ही आएगी? नामो ने पीतो से पूछा.

—अरी बहन, मैं तो आज थक गयी हूं. पीतो थका-वट की सांस लेकर बोली, कहीं बैठकर आराम कर लें.

—उस शीशम की छांव में बैठेंगे, नामो ने खेत भर की दूरी पर शीशम के वृक्ष को देखकर कहा. जब वे उस शीशम के नीचे पहुंचीं तो पीतो तुरंत बैठ गयी.

—पीतो, तू तो बहुत जल्दी थक गयी, नामो ने कहा, इतनी जल्दी थक जाती हो? मैं तो कोस भर और चलूं तो भी न थकूं. अब तक वे कोस से अधिक चल चुकी थीं, परंतु नामो के कोस का अर्थ कोई थका देने वाला रास्ता था.

—बहन, मैं तो थक गयी. मेरा तो जैसे सिर घूम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहा हो, पीतो ने सिर पकड़कर कहा.

—पीतो अब भाभी ने बाग लगा लेना है. मां कहती है कि तू उसका चर्खा लेकर कात लिया करना. कभी तुम्हारे घर कातने बैठ जाया करेंगे, कभी हमारे, नामो ने जैसे पीतो से प्रार्थना की.

—बहन, तुम्हारे घर तुम्हारी मां से डर लगता है, हमारे घर ही आ जाया करना, पीतो ने कुछ गर्व से उत्तर दिया.

—अच्छा, फिर कभी-कभी हमारे घर भी काता करेंगे. कभी-कभी के लिए मेरी मां कुछ नहीं कहती, नामो ने पराजित-सी होकर कहा.

—नामो! तेरी भाभी कैसी है? पीतो ने अपनी बड़ाई करने की इच्छा से पूछा, तेरे साथ अच्छा व्यवहार करती है?

—अच्छा ही है, नामो ने उत्तर दिया. नामो भाभी की ओर से अभी निराश नहीं हुई थी. अभी तो अच्छी ही है, कल का पता नहीं.

—मेरी भाभी तो, भई, बड़ी अच्छी है, पीतो फिर बड़ाई करने लगी, एक बाग गुलखट्टूरों का पूरा भी कर लिया, और कहती है, बीबी! मायके से मैं सरपल्लू काढ़ कर लाऊंगी.

—तुझे तो सरपल्लुओं की पड़ी रहती है, नामो की बात भी बन गयी, तेरा तो अभी से गौना लेने को जी चाहता है.

—कहां की कहां ले जाती है बात को, पीतो ने लज्जित हो कर उत्तर दिया.

—अच्छा फिर उठो, चलें. धूप चढ़ रही है. कहकर नामो ने गड़वा उठाया और खड़ी हो गयीं.

—अरी, हम उस बुढ़िया को साथ ले लें, दो कदम चलकर पीतो ने पीछे आ रही बुढ़िया की ओर संकेत किया, अकेली चलीं तो सड़क से डर लगेगा.

रास्ते में एक जरनैली सड़क थी, जहां से गांव के छोटे बच्चे बहुत डरते थे, क्योंकि उधर से कई तरह के लोग, जांगली और राशे मजदूरी करनवाले गुजरते थे.

नामो में कुछ साहस था—अरी डर काहे का? उसने कहा, तुम्हें कोई नहीं पकड़ेगा.

—इस तरह की बात न कर, पीतो ने अलमदो जैसा मुंह बनाकर कहा, भाभी के गांव के समीप एक गांव है. वहां इसी तरह अपने जैसी लड़की को राशे उठाकर ले गए.

यह बात सुनकर नामो पीछे आ रही उस बुढ़िया को अपने साथ मिलाने के लिए मान गयी. दो-एक क्षणों के बाद वह बुढ़िया उनके पास थी.

—अम्मा, हमें सड़क से डर लगता था. हमने कहा, अम्मां के साथ चलेंगे. नामो ने अम्मा को प्रसन्न करने के लिए कहा.

—अरी, तुम्हें कौन उठा ले जाता, हूरजादियों को सड़क से? बुढ़िया खीझकर बोली.

—ओह हाय, अरी अम्मां! पीतो के मुंह से निकला.

—चलो, बेटी चलो उसने तुरंत पसीज कर कहा.

(अनुवाद : जसवंतसिंह बिरदी) □□□

नागा लोककथा

लिकुम और आवो लिपि

आवो जन-जाति भारत के उत्तर-पूर्व की दिशा से बर्मा सें हो कर आ रही थी. सीमा के समीप बर्मा की हद में मंवांग नामक एक झील है. इस स्थान पर पहुंच इसके एक बहुत बड़े दल ने अनेक दिशाएं पकड़ीं— कुछ चीन की ओर गये तो कुछ ब्रह्मपुत्र को पार कर असम के मैदानों की ओर बढ़े. दूसरा दल जो आवो लोगों का था, बर्मा की सीमा के साथ-साथ आगे बढ़ा. अपनी-अपनी दिशा की ओर मुड़ते हुए प्रत्येक जन-जाति अपनी लिपि भी संभाल कर लेती चल रही थी. आवो जन-जाति का एक प्रमुख व्यक्ति था लिकुम. वह बांस के पीपे में सहेजकर आवो लिपि ले चला. रास्ते में स्थान-स्थान पर लोग आराम करते हुए चल रहे थे. एक दिन जब सब दोपहर का भोजन कर रहे थे तो लिकुम ने लिपिवाला बांस का पीपा पास में ही रख दिया. वह खाने में इतना मशगूल हो गया कि एक कुत्ता कब उसे उठा कर ले गया और उदरस्थ कर गया, इसकी ओर उसका ध्यान ही नहीं गया.

खाना खा लेने के बाद जब लिकुम ने पाया कि लिपि गायब है, तब उसका कलेजा धक् से रह गया. उसने पहले तो बकरी से पूछा कि क्या वह लिपि के बारे में जानती है. किंतु बकरी ने कहा—'मां' जिसका अर्थ आवो भाषा में है: 'नहीं'. उसी दिन से बकरी 'मां' 'मां' करने लगी. अब लिकुम ने लिपि के बारे में एक कुत्ते से पूछा तो वह कुत्ता बकरी के पास पहुंचा और उस पर चोरी का आरोप लगा कर 'खां', 'खां', करने लगा जिसका अर्थ है कि 'मुझे दो'. किंतु बकरी ने उसे लिया होता तब तो देती! वह तो बिलकुल निर्दोष थी. अतएव कुत्ता तब से अपनी रट लगाये हुए है—खां', खां'.

लिकुम की चिंता और परेशानी की सीमा न रहीं. अंत में एक सुअर ने आकर उसे स्वयं बतलाया कि उसने कुत्ते को लिपि को अपने खेत में खाते हुए देखा था. लिकुम को कुत्ते पर बड़ा क्रोध आया. वह उसे तत्काल मार कर उसका गोश्त खा गया ताकि उसकी स्मरण शक्ति में सब कुछ आ जाये. और इसका अच्छा परिणाम निकला. तभी से यद्यपि आवो लिपि में कुछ भी लिखा हुआ नहीं पाया जाता, फिर भी उसकी सभी लोककथाएं ज्यों की त्यों सबको याद हैं.

जिस स्थान पर आवो लिपि लुप्त हो गयी थी, उसका नाम 'लिकुम' है. कहते हैं कि यह स्थान आज के मणिपुर के करीब है. □□□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

झे इस कहानी का इंतजार काफी समय से था. उसे मैंने रास्ते में बताया भी कि तुम पर मैं कोई ानी लिखूं तो उसका शीर्षक होगा, 'उस कहानी का जार'.

मैंने पहली बार उसकी आंखों में देखा और उसकी राइयों के सम्मोहन के पूर्वाभास को अनुभव किया.

—ऐसा करें, अब हम लौट कर जाएं ही ना. . . मैंने ा. मैं इस सम्मोहत के गहरे कूप में तब तक भी झांक ा था.

—यह बात तुमने कल भी कही थी, वहां झील अंधेरे में. . .माने क्या झांकते ही रहोगे. . . कूदोगे नहीं?

अतल स्थित सम्मोहन लहरियों ने मुझे आविष्ट ाए रखा जैसे कंकरी के हल्के-से आघात से वे विद्युत-क्र उत्पन्न हो गये थे.

—हम फिर चलेंगे वहां. . . मैंने जैसे अपनी विव-ता को अस्वीकार करते हुए कहा.

—तो फिर इस 'जात्रा' पर आने की क्या आवश्य-ता थी. . . उसने कहा.

इतना बड़ा वाक्य मुझे किसी व्यतीत शताब्दी-मुख निकलता हुआ-सा लगा जो केवल 'आओ' जैसे कंडेंस्ड मेरा प्रस्ताव उसने मान लिया था. बस रुकते ही उसे इंतजार था कि मैं चाय का शोर मचाऊंगा. लेकिन मैं चुप रहा.

—चाय के लिए बड़े बेताब थे न तुम. . . उसके स्वर में अजीब-सी विवशता थी.

हम दोनों के बीच के अदृश्य मांत्रिक को हम अनुभव कर रहे थे. वह अंधेरे के साथ प्रकट होगा, हम जानते थे. हम उसके सम्मोहन-चक्र के भीतर थे. इधर-उधर कुछ दूसरे जोड़े भी घूम रहे थे.

—आज के दिन भी इतने टूरिस्ट आए हुए हैं. . . चलो, हम पैदल थोड़ी-सी चढ़ाई चढ़ें. . . इतने लोग जहां घूमने आते हैं, हम वहां भी नहीं जायेंगे. . . मैं थोड़ी खीझ के साथ बोला.

—तो तुम घूमने थोड़ी आए थे. . . तुम्हें तो चाय पीनी थी. . .

मांत्रिक. . . मंत्रमुग्ध. . . मुझे वह दीख रहा था. पहाड़ी ढलान से अंधेरा नदी घाटी में उतर रहा था. मैंने उसका हाथ पकड़ लिया और कहा— मुझे एक नींद लेनी थी, मैडम. . .

मैं चौंका. यह मैंने तो नहीं कहा. . . तो फिर किसने

शहर आ गया, श्यामली • परेश

आकार में उस कूप-गर्भ में बुला रहा था. मैंने बच्चों की तरह ताली बजाकर इस सम्मोहन जाल को छिन्न करने की कोशिश की. बोला—अरे, बस से उतरकर हम चाय लेंगे. . . आहा. . . चाय. . . कितना मजा आएगा. . . मुझे इस विचार मात्र से इतना सुख मिल रहा है. . .

—तुम चुप रहो. . . उसने आंखों से कहा. कहकर वह आंखों से ही थोड़ा-सा हंसी. सम्मोहन के वर्तुल थोड़ी दूर घेरा डालकर बैठ गए.

—तुम्हारी आंखों में मुझे चाय नजर आ रही है. . . चाय और सम्मोहित होने का सुख. . . दोनों बराबर हैं . . . न. . . न. . . नाराज नहीं. . . मैं दरअसल कहीं भी शाम करना चाहता हूं और बाद का जो अंधेरा होगा, उसका मुझे इंतजार है. . . तब तक हम कई बार चाय लेंगे . . . देखो पहाड़ी चढ़ाई की सेंसेशन शुरू हो गयी.

—सेंसेशन. . . वह हंसी और खिड़की के बाहर देखने लगी. कोयले या पत्थरों की ट्रालीज सिर के ऊपर तारों पर सरक रही थी. सड़क की बांई ओर कोई टाउनशिप तैयार हो रही थी. दांई ओर एक पहाड़ी नाले का बहुत चौड़ा पाट और सीढ़ी-दर-सीढ़ी पहाड़ी चोटियां. . . धुंध हल्की-सी. . .

—मैं पहाड़ पर बस से नहीं जा सकती.

—मेरा भी सिर भन्नाने लगता है. . . लेकिन यात्रा के बाद की चाय . . . मैंने जैसे उसे फिर याद दिलाया. वह हंस पड़ी. शहर से नौ मील दूर आकर चाय पीने का कहा?

हम घाटी की एक दरार के अंधेरे में उतर गए.

वे लोग थोड़ी दूर पर बैठ गए.

* *

थोड़ी देर बाद लगा वे अपने चक्र समेट रहे थे और अंधेरे में पीछे सरक रहे थे. मैंने श्यामली को हिलाया. बोला— उठो, फिर कोई बस नहीं मिलेगी.

बालों के घने गुच्छ-जाल, आयत वाम स्कंध पर पड़ी हुई श्लथ कंचुक-पट्टिका और पाउडर से ढकी हुई वक्ष की मांसलता से मैं धीरे से उठा. सरकंडों में बजती हुई हवा उसके विच्युत परिधान के गिर्द 'हूं हूं' करने लगी. नाले के पुल पर से कोई ट्रक गुजरा तो मैंने उसका कंधा पकड़कर हिलाया. उठने के लिए उसने थोड़ा सहारा मांगा. उसके सैंडलों को तलाश करने में थोड़ा समय लगा वे मिट्टी से पुरकर पदचिह्नों के समान हमारे अनुमान से काफी दूरी पर चमक रहे थे.

वह उसी तरह ढीले जूड़े और अस्तव्यस्त साड़ी और खुले ब्लाउज के साथ श्लथमना नाले की पुलिया पर आकर बैठ गयी. मैंने फिर उसे जोर से हिलाया, बोला, —देखो, स्टॉप तक चलने की हिम्मत करो. यहां बस नहीं रुकेगी.

वह फिर भी गुमसुम रही तो मैंने घड़ी में रेडियम को पढ़ा. आखिरी बस निकल गयी थी—रात क्या पुलिया पर बीतेगी? मैंने बीच के मांत्रिक से पूछा. वह उन चक्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समेटने वालों के साथ ही चला गया था. लेकिन श्यामली अभी तक आविष्ट थी.

--श्यामी उठो, रात क्या इस जंगल में गुजारोगी?

उसने थोड़ा-सा मेरी तरफ देखा तो मैंने उसका एक बाजू पकड़ कर उसे लगभग कंधे पर लाद लिया और उसे घसीटने लगा. सामने से रोशनी का कोई धीमा बिंदु हमें अपनी ओर आता लगा. रिक्शा थी--खाली.

--शहर जा रहे हो? मैंने रोककर पूछा.

उसने स्थिति को आंका और अपना हिसाब लगाया. बोला--बाबूजी, बख्शीश ज्यादा होगी, किराया कम.

रिक्शा आने से वह अपने पांवों पर टिककर खड़ी हो गयी. बैठने के लिए उसने शालीनता से मेरा हाथ थामा और रिक्शे में एक ओर गरिमा-मूर्ति-सी बैठ गयी. अंधेरे में सामने की हवा लगी तो एक दूसरी नींद के लिए मैंने अपना सिर उसके खुले कंधे पर टिका दिया. उसने धीरे से मेरा सिर अलग किया और उसी हाथ से सरकी हुई ब्रेसियर की पट्टी को कंधे पर चढ़ा लिया. मैंने नजर बचाकर देखा-- ब्लाउज वैसे का वैसा खुला पड़ा था. उसने चोरी पकड़ ली. अतः हंसी और बोली-- शहर अभी दूर है.

मैंने थोड़ी-सी स्वस्ति का अनुभव किया. उसका हैंग-ओवर उतर रहा था.

रिक्शा कॉफी हाउस पर रुकी. लेकिन उसने उतरने की कोई चेष्टा नहीं की--शहर आ गया,श्यामली. मैंने उसके पुल ओवर को उसके कंधों पर रखते हुए कहा.

उसने नियन-लैटर पढ़े, 'कॉफी हाउस' के ओर उस रोशनी में अपने खुले ब्लाउज से झांकते पृथुल वक्षस्थल को भरपूर दृष्टि से देखा. बोली-- मैं घर जाऊंगी.

—नहीं, अभी नहीं, कॉफी के बाद. . . थोड़ा नारमल हो जाओ पहले. . .

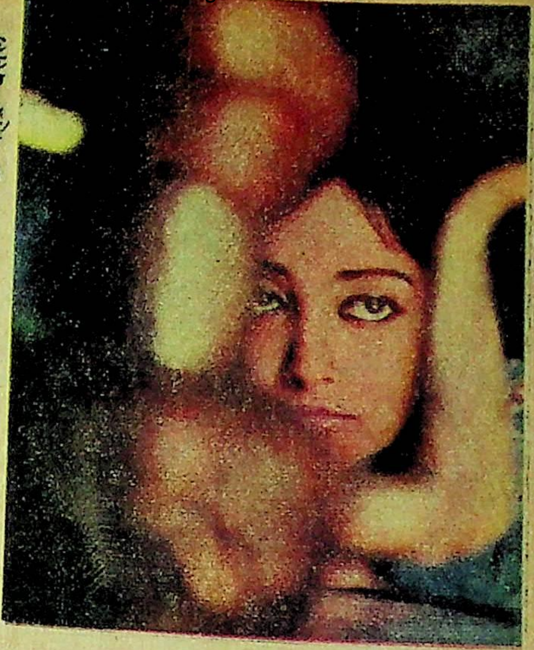

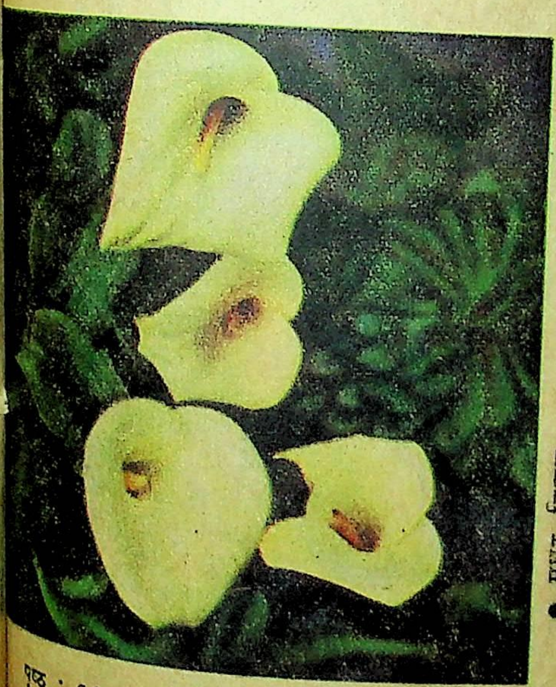

—नारमल. . . वह फिर हंसी.

कुछ लोग कॉफी हाउस से निकले तो मैंने रिक्शे वाले को 'क्वालिटी' चलने के लिए कहा. रिक्शा चला तो वह थोड़ा और हंसी और बोली-- तुम अपना सिर मेरे कंधे पर टिका लो.

--सरकंडों में बजती हुई हवा. . . उसने यह पंक्ति गायी और अपना सिर मेरे कंधे पर टिका दिया. मैंने कंधे को थोड़ा सिकोड़ा तो उसने पुल ओवर के दो बटन बंद कर लिये. भीतर के कपड़े वैसे ही रहने दिये.

'क्वालिटी' कॉफी हाउस से सौ गज के अंतर पर था बरामदे के फर्श पर बिछे हुए रफ कालीन पर वह शालीनता से उतरी. संवार कर बांधी हुई साड़ी अस्तव्यस्त होने के बावजूद बांधने के आभिजात्य को मेंटेन किये हुई थी.

बेयरा दरवाजा खोल कर सलाम-मुद्रा में एक ओर झुक गया तो मैंने प्यार से श्यामली के कंधे पर हाथ रखा और आंखों से कोई प्रार्थना की. वह महारानियों की तरह मुस्कराई और एहसान करने के अंदाज में उसने पुल ओवर का एक बटन और बंद कर लिया.

--तिनके. . . मैं उसके कान में फुसफुसाया.

उत्तर में उसने बेयरे की सलाम कबूल की और भीतर चली गयी. मैंने मुड़कर रिक्शे वाले की तरफ देखा. उसने झट दियासलाई जलाकर अपना मुंह हाथों के कोने में छुपा लिया.

--मीली, हमें सब देख रहे हैं. . . बैठने के बाद मैंने कहा.

उत्तर में उसने झुके हुए बेयरे को कुछ क्षण अपनी तृप्ति के आभिजात्य में झुकाए रखा और फिर हैंगिंग लैंप का बटन दबाते हुए बोली—कॉफी.

लांग प्लेयर के बराबर का एक दूधिया चकत्ता सनमाइका पर बिखर गया तो उसने सीधी दृष्टि से मेरे सर्वांग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का आलिंगन किया और बोली—क्या तुम नहीं, सूंघते हैं.

रोशनी के चकते में कॉफी रख दी गयी. उसे थोड़ी गर्मी लगी तो उसने बंप किया हुआ एक बटन खोल लिया. मैं भी थोड़ा स्वस्थ हो रहा था और उसके आलस्य के आभिजात्य से स्वयं को थोड़ा गौरवान्वित अनुभव करने लगा.

—जापानी काव्यशास्त्र घ्राण बोध पर विकसित हुआ है, भारतीय. . . रसबोध पर. . . कॉफी के साथ वह अपने आभिजात्य की रजत-शिविका में सवार हो गयी.

मैंने अनुनेय की भांति गर्दन झुकाई.

—कॉफी के बाद नहीं बोलूंगी. वह हंसी. कुछ शताब्दियों पूर्व यह बात जापानी काव्यशास्त्र के गुरु बसो ने कही थी. . . सॉरी. . . तुम्हें नींद आ रही है. . . फिर एक नींद .. . रेस्तरां के संगीत की धुन पर वह गुनगुनाई. सैंडल की एड़ी से फर्श को एक ताल भी दी. रिक्शा बाहर इंतजार कर रहा है. . . मैंने उसको उसकी रजत-शिविका से नीचे उतारा.

—मैं यहां से पैदल जाऊंगी, तुम रिक्शे पर चले जाओ. बाहर निकल कर वह बोली .

—ना, मैं तुम्हें घर तक छोड़ूंगी. . .

—हूं. . . वह फिर हंसी. . . संगीत का थोड़ा-सा धुंआ रेस्तरां के बाहर आ रहा था. मैंने उसे आधी बांह के घेरे में ले लिया तो वह फिर हंसी. बोली—तुम्हें विश्वास नहीं, अच्छा तो चलो. . . मगर तुममें हिम्मत है मुझे घर तक छोड़ने की?. . .

—नुक्कड़ पर छोड़ूंगा, अंधेरे में. . .

—तुम मुझे अंधेरे में कभी नहीं छोड़ सकते. . . वह फिर घंटियों-सी बजी.

रिक्शा रुक गया.

—अच्छा तो उतरो और जाओ.

वह उतर गयी.

—चली जाओगी?

उसने धीरे से पीठ घुमाई और अंधेरे में अदृश्य हो गयी. रिक्शा मोड़ कर मैं कुछ गज चला. फिर उसे रुकने के लिए कह कर उतरा. उस स्थान पर पैदल वापस आया जहां उसे छोड़ा था.

वह खड़ी थी वहां. कुछ देर हम अंधेरे में एक दूसरे को ताकते हुए खड़े रहे.

—क्यों आए हो? वह रो रही थी. .

मैंने उसे धीरे से भुजाओं में लिया तो वह सुबकने लगी.

—तुम गयी नहीं अभी? मैंने उसे प्यार से थपथपाया.

—चली जाऊंगी, तुम वापस क्यों आए हो?

—यह बताने कि मैं गया नहीं. . . विश्वास दिलाने कि मैं भाग नहीं रहा. . .

—मैं जानती हूं, तुम कल फिर आओगे. . .

□□□

हिन्दी विभाग, पंजाबी युनिवर्सिटी
पटियाला,

राजस्थानी लोककथा

दोनों तजे प्राण

एक जंगल में एक मृग और एक मृगी रहते थे. दोनों में परस्पर अगाध प्रेम था. वे साथ-साथ चरते, साथ-साथ पानी पीने जाते और साथ-साथ सो जाते.

एक दिन चरते-चरते वे दूर निकल गये. तेज धूप थी. उन्हें प्यास लगी. वे इधर-उधर पानी की तलाश में दौड़े. प्यास के मारे उनका बुरा हाल था. खोजते-खोजते वे एक पोखरे के निकट पहुंचे जिसमें इतना-सा जल था, जिससे उनमें से एक की प्यास बुझ सकती थी. मृगी ने कहा — तुम अपनी प्यास बुझाओ. मृग बोला—नहीं, तुम पी लो. एक पानी पीले और दूसरा रह जाए यह उसमें से किसी को भी स्वीकार नहीं था. वे पानी पीने के लिए परस्पर आग्रह करते रहे. अंत में प्यास के मारे दोनों ने प्राण त्याग दिये. दोनों के शव पोखरे के किनारे पड़े थे.

दो सखियां उधर से गुजरीं. मृग शवों को देख कर एक सखी ने पूछा—

खड्यो न दीखे पारधी, लग्यो न दीखे बाण,
मैं तन्ने पूछूं सखी, किण विधि तज्या पिराण?

(पारधी) शिकारी, खड़ा दिखाई नहीं देता. इनको कोई बाण भी नहीं लगा. हे सखी बताओ, फिर इन्होंने प्राण कैसे त्यागे?)

दूसरी सखी ने उत्तर दिया—

जल थोड़ो, नेहा घणूं, लग्या प्रीत का बाण,
'तू पी, तू पी' करत ही, दोन्यूं तज्या पिराण ।

(जल कम था पर दोनों में परस्पर प्रेम अधिक था. 'तू पी, तू पी' करते हुए दोनों ने प्राण त्याग दिये, क्योंकि इन्हें प्रीत का बाण लगा था.)

काफी समय बीत गया इस घटना को. वे दोनों सखियां बुढ़िया हो गयीं. एक दिन वे दोनों पुनः उस पोखरे के पास से गुजरीं. उस पोखरे के किनारे दो मृग-शव पड़े थे. एक बुढ़िया ने पूछा—हे सखि, क्या ये दोनों भी प्रेम के बाण से ही मरे हैं? दूसरी बुढ़िया हंसी और बोली—बावली, अब वह समय कहां? इस पोखरे में जल कम था और ये दोनों प्यासे थे. पोखरे के पानी से केवल एक की प्यास ही बुझ सकती थी. दोनों ही पानी पीना चाहते थे इसलिए दोनों परस्पर लड़ कर मर गये. □□□

(प्रस्तुतकर्ता : हेतु भारद्वाज)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लाबी पगड़ी पहने लाला जानकीदास कोठी के गेट के पास खड़े आनेवाले अतिथियों का स्वागत कर रहे वे आज खुश हैं, उनके सब से छोटे बेटे की सेहराबंदी बरसों बाद घर में रौनक हुई है. कोठी के ग्राउंड में मियाना लगा है और लगभग सौ-सवा सौ लोगों के ने का प्रबंध है. सारी कुर्सियां धीरे-धीरे भरती जा रही यह देखकर मन ही मन उन्हें बड़ा संतोष हो रहा है, लो, पिछले चार-पांच दिनों की भाग-दौड़ सफल हुई.

उसी समय घर के सामने बस आकर खड़ी हुई. स की ओर देखकर उनका मन अचानक आशंकित हो टा, पंडाल की ओर नजर गयी और सोचने लगे, पता हीं कौन-कौन बारात के साथ चलने वाला है. छप्पन ीटों की बस ली है, कम से कम चालीस बराती तो हों. ड़े लड़के ने राय दी थी, आठ-दस घर के लोग हैं, दो ारों में चलें जाएंगे. पर लाला जानकीदास का कहना था बिना बारात के भला क्या शादी होगी! घर में आखिरी शादी है, धूमधाम से होनी चाहिए. इसीलिए पिछले महीने भर से प्रत्येक मित्र और परिचित के घर स्वयं जाकर विशेष आग्रह कर रहे थे, आपको बारात के साथ जरूर चलना है जी, इतवार का दिन है, छुट्टी भी नहीं लेनी पड़ेगी. अपने नहीं जाएंगे तो भला और कौन जाएगा?

—बारात पर जाने का हक तो सगे-संबंधियों का होता है!

—आप से अधिक सगे और कौन हैं? रोज के मिलने वाले ही तो असली सगे-संबंधी हैं!

—ब्याह-शादियों पर तो अपने घर, अपने परिवार के लोग ही बहुत हो जाते हैं!

—घर और परिवार की बात भी सुन लीजिए : घर के तो हम सही हैं न — मैं और मेरे तीन लड़के —— उन में से भी एक केनेडा बैठा है. परिवार का जहां तक सवाल है, मेरा सिर्फ एक भाई है और उसका छोटा-सा कुनबा. बच्चों के ननिहाल हम से नाराज हैं! यह कहते हुए लाला जानकीदास का चेहरा बुझ-सा गया था. उनके चेहरे की झुर्रियां और गहरी हो गयीं जैसे सोच रहे हों, बात आगे करूं या न करूं! आंखों को झपकाते हुए निश्चय कर बोले, अब आप से भला क्या छिपाना है—आज से लगभग बीस साल पहले की बात है, इन बच्चों की मां को मरे अभी तक एक साल भी नहीं बीता था कि मेरे बड़े साले की लड़की का रिश्ता आया. दूसरी शादी करने से मुझे बीवी तो मिल जाती, पर इन बच्चों को मां भी मिलती, इसका मुझे शक था. सोचा, मेरी आधी से ज्यादा जिंदगी बीत गयी है,आधी इन बच्चों को पढ़ाने-लिखाने, पालने-पोसने में कट जाएगी. मन में एक उमंग भी थी—— खुद तो उमर-भर अफसरों की, जी हजूरी की, पर अपने बेटों को बहुत बड़ा अफसर बनाऊंगा —डाक्टर, इंजीनियर, कमिशनर! सो, मैंने रिश्ता स्वीकार नहीं किया और तब से आज तक बच्चों के ननिहाल हमारी किसी भी खुशी-गमी में शामिल नहीं हुए. यह कहते हुए उनके मन की गहरी अव्यक्त पीड़ा, आंखों में झलकने लगी. अपने आपको सम्भाल कर बोले, नाराज हैं तो बने रहें, मैं भी बुलाने नहीं जाऊंगा, इंवीटेशन कार्ड भेज दिया है, आना होगा तो आ जाएंगे! कुछ रुक कर फिर बोले, असल रिश्ता तो प्यार का होता है, इसी नाते बारात पर चलने के लिए आप से मिन्नत भी कर रहा हूं! उनके इस आग्रह के आगे भला कौन मना ही कर सकता था?

लाला जानकीदास अभी भी गेट के पास खड़े थे. उन्होंने महसूस किया, जिनको आना था, आ चुके हैं. फिर भी उनका पंडाल में जाकर बैठने को मन नहीं हुआ. वहीं अकेले खड़े रहे. उनकी समझ में नहीं आ रहा था कि आज इस खुशी के मौके पर अचानक उनका मन बैठता क्यों जा रहा है? उन्हें तो खुश होना चाहिए कि आज उनकी आखिरी जिम्मेवारी भी पूरी हो जाएगी. उनके जीते जी तीनों बेटों की नौकरियां लग गयीं, शादियां हो गयीं, आदमी को और क्या चाहिए? राजी की शादी के बाद वे पूरी तरह से आजाद हो जाएंगे. बहू को घर सौंप कर हरिद्वार चले जाएंगे. . . . उनके सोचने की कड़ी तब टूटी जब टॉमी उनके पांव सहलाता हुआ बाहर सड़क की ओर चला गया. घर में भीड़ देखकर अपने लिए जगह की तलाश में सड़क की ओर जा रहा था. वह तो हरिद्वार चले जाएंगे, पर टॉमी कहां जाएगा? राजी को तो वह पहले से ही अच्छा नहीं लगता. मेरे हरिद्वार जाने के बाद भला कौन उसे रखेगा. चलो जब तक टॉमी जिंदा है, मैं भी यहीं राजी के पास पड़ा रहूंगा. जब तक हाथ-पांव चलते हैं, तब तक घर का कुछ संवारूंगा ही, बिगाड़ूंगा तो नहीं!

बारात

उसी समय उन्हें अपने बेटे महेंद्रनाथ की आवाज सुनाई दी—बाऊजी! बाऊजी!! —अरे, आप अकेले गेट के पास खड़े क्या कर रहे हैं? इधर हमने सारा घर ढूंढ़ मारा, चलें, पंडितजी हवन के लिए बुला रहे हैं. उसके लहजे से यह भाव प्रकट हो रहा था कि बाऊजी का हर काम निराला होता है.

* *

लाला जानकीदास चौंके और हवन मंडल के पास जा बैठे. वे हवनकुंड में आहुतियां डालते जा रहे थे— उन्हें बीते हुए सालों की याद आ रही थी—ओम स्वाह— ओम स्वाह— कितनी ही आहुतियां डाल दीं, कितने साल बीत गये. आग की लपटें ऊंची उठने लगीं— बच्चे बडे हो गये!

सिर पर बांधने से पहले चांदी के मुकट को प्रत्येक व्यक्ति के पास ले जाया गया. उसे छू कर सारी बिरादरी अपनी सद्भावनाएं प्रकट कर रही थी. जानकीदास ने भी उसे छू कर मन ही मन कामना की— राजी की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

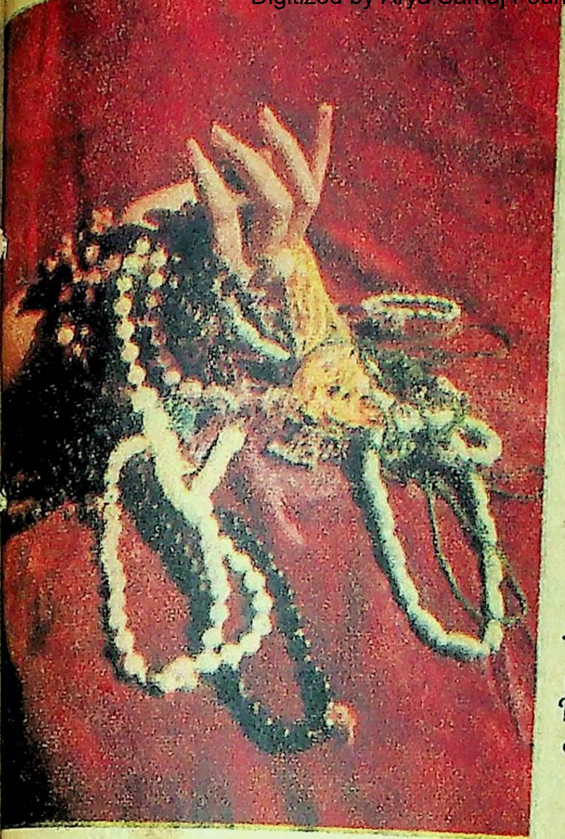

छाया : इंष

● वीरेंद्र मेहंदीरत्ता

जिंदगी खुशियों से भरपूर हो—— दोनों, बरसों जियें और सुखी रहें! सुखी रहें! सब सुखी रहें! सुरेंद्र और उस का परिवार केनेडा में सुखी रहे! महेंद्र नाथ अपने बच्चों के साथ अपने घर में सुखी रहे! राजेंद्र अपनी पत्नी के साथ सुखी रहे! ! ! उनके सुख में ही मेरा सुख है. . . . . पर क्या यह सच है? उनके सुख में ही मेरा सुख है? सब से बड़े बेटे सुरेंद्र नाथ की शादी हुई—— पढ़ी-लिखी, बड़े घर से बहू आयी. उसका खान-पान, रहन-सहन बड़े घर के लोगों जैसा था. कसूर तो मेरा ही था, मेरा उठना-बैठना सब पुराने ढंग का—— उस बेचारी को बात-बात पर टोकना पड़ता, बाऊजी ऐसे नहीं, ऐसे! हम पुराने आदमी, नये जमाने की चाल क्या समझें! पर बुरा मुझे उस दिन लगा जब उन्होंने केनेडा जाने के संबंध में राय न ली बल्कि फैसला ही सुनाया. आखिर बुरा क्या किया? भारत में उनकी पढ़ाई की कदर नहीं! केनेडा में उसे यहां से दुगनी-तिगनी तनखा मिलती है, हर तरह की सुख-सुविधा है. पहनने को अच्छा मिलता है, खाने को अच्छा मिलता है.

. . . . बाकी तो सब ठीक है, पर अफसोस इसी बात का है, कि इतनी दूर बैठा है. किसी खुशी में तो शामिल हुआ नहीं, अब भला गमी में क्या होगा? . . . मेरा ध्यान आज बार-बार उस ओर क्यों जा रहा है? खुशी का मौका है और मैं क्या सोच रहा हूं! . . . . सुरेंद्र नाथ तो केनेडा चला गया, पर महेंद्र नाथ तो इसी शहर में रहता है. यहां भी पिछले पांच साल से वे अलग मकान लेकर राजी के साथ रह रहे हैं. सुखी तो महेंद्र नाथ भी अपने बच्चों में है. उसकी पत्नी अनिता यदि स्वभाव की तेज है तो वह क्या करे? बाप के लिए घर तो नहीं उजाड़ना. रोज घर में क्लेश हो, इससे तो अच्छा है अलग-अलग रहा जाए.

मुकुट बांधा जा चुका है. पंडितजी पूर्णाहुत डालने के लिए कह रहे हैं. जानकीदास ने सारी प्लेट साफ कर सामग्री हवन कुंड में डाल दी और आग की लौ भड़क उठी. पंडितजी आशीर्वाद दे रहे हैं—हे, राजेंद्र, सब लोग दोहरा रहे हैं, 'हे राजेंद्र.'

——तुम्हारा विवाहित जीवन. . .

——तुम्हारा विवाहित जीवन. . .

——सुखी हो!

——सुखी हो!

जानकीदास फिर न जाने किन ख्यालों में डूब गये थे कि सबके बोल चुकने के बाद जैसे अचानक उन्हें याद आया, उन्होंने तो आशीर्वाद के शब्द नहीं बोले, सो कहने लगे —— सुखी हो!

सेहराबंदी के लिए आए अतिथि बधाई देकर लौटने लगे. जानकीदास फिर गेट पर जा खड़े हुए. प्रत्येक व्यक्ति से कह रहे थे——बड़ी कृपा की जो आज इस अवसर की शोभा बढ़ाई ——अब बारात के साथ चलेंगे.

जिनके चलने की थोड़ी भी उम्मीद होती, उन्हें कहते आप ही तो हमारी बारात की रोनक हैं, आपके बिना तो बारात का रंग नहीं जमेगा.

परंतु बहुत-से लोग जो सेहराबंदी की औपचारिकता निभाने आए थे, एक-एक कर विदा हो गए.

जानकीदास फिर गेट पर अकेले खड़े रह गये. टॉमी अब भी बाहर सड़क के किनारे बैठा था. पंडाल में काफी रौनक थी. इस बार तो राजी के ननिहाल से भी उसके मामा-मामी और उनकी दो बेटियां आयी थीं. सोचा होगा, खुशी का आखिरी मौका है, अब नाराजगी को भूल जाना चाहिए. और ठीक भी है, अब भला कौन-सा मौका आएगा हमारे रिश्तेदारों से मिलने का? तीनों बेटों की शादी हो गयी. अब शायद सारी बिरादरी इकट्ठी तब होगी जब . . . नहीं-नहीं, आज के शुभ दिन मुझे यह सब बातें नहीं सोचनी चाहिए.

★ ★

उसी समय गेट पर अपने मालिक को देख कर टॉमी जानकीदास की टांगों से लिपट गया. सुबह से उसे मौका नहीं मिला था, गेट पर अकेले देखकर भागता आया था. टॉमी पिछले पांच सालों से जानकीदास के पास था. उससे पहले सड़कों पर घूमता और बाप-बेटे के चले जाने पर बरामदे में सारा दिन बैठा रहता. कुछ दिनों बाद जानकीदास ने उसे नियमित रूप से रोटी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Alverca air base near Lisbon... | soldier and ...
ter.

Defaulting companies keep depositors on the run

removing its depo-

टाइम्स आफ-इंडिया में प्रकाशित एक खबर

फोर्ट क्षेत्र की एक हाईबोर्ड कम्पनी ने पिछले २ वर्षों से जमाकर्ताओं को भुगतान नहीं किया है।

कम्पनी का दिवाला होने पर, जमाकर्ताओं का नम्बर सबसे बाद में आता है।

दिवाले के आवेदन पर न्यायालय में कभी कभी समझौता हो जाता है।

जीवन बीमा-सुरक्षा पाने का सबसे सुरक्षित और विश्वस्त तरीका है। (भारत सरकार द्वारा पूर्णतया गारन्टी शुदा है)

ऊँची दर पर ब्याज वाली योजनायें आकर्षक होती हैं, परन्तु उनसे मृत्यु होने पर सुरक्षा नहीं मिलती। केवल जीवन बीमा द्वारा ही जीवन पर जोखिम से सुरक्षा मिलती है। इसलिए बीमा कराने के दिन से ही, आप उस पूरी राशि के लिए आश्वासित हैं जिसे बचाने की आपकी योजना है—उन अंशांश बचत योजनाओं की तरह नहीं जिनमें कुल जमा-राशि ही मिलती है

जीवन बीमा का दूसरा विकल्प नहीं है।

RADEUS/LIC/AS 12 HIN

---

femina

फेमिना २१ नवंबर '७५ विशेषांक

बेहतरीन परिधान की प्रशंसिकाओं के लिये नये-नये डिजायन

उन्हीं कपड़ों को नयी शैली में अपनाइये जो आपसे और आप के बजट से मेल करते हों.

युवा भारतीय डिजाइनरों के संग्रह में से फेमिना कुछ कल्पनापूर्ण संकलन पेश करती है.

पट्टीवाली चोली घाघरे और साड़ी की संगत के लिए मिनी टाप, स्कर्ट की नयी लम्बाई आधुनिक जीन्स का सम्मिलन.

अब वुडोरस् सजाने की जरूरत नहीं, खर्च बचाये.

नये बुने हुए सूती टयुब वस्त्र बुन्ददार, जामा, लहराता घाघरा ये सब चीजें आप को बगैर दीवालेपन के प्राप्त हो सकती हैं.

किस पर क्या अच्छा लगता है?

लंबे कद वालों पर बड़े प्रिंट अच्छे दिखते हैं. छोटे प्रिंट सब पर भाते हैं. मोटे लोगों पर चौड़ी धारियों वाले कपड़े. पतले लोगों के लिए ढीले-ढाले झालरों वाले कपड़े. कुछ सुझाव आपके शरीर के आकार को सुंदर बनाने के लिये.

सिलाई कहाँ कहाँ से करवाएं, और कितने दाम में? कहाँ कहाँ और कितने में होती है.

आपके नगरों में बसे दर्जी संस्थान व सिलाई के स्कूलों के पते. जहां आप प्रवेश पा सकते हैं.

रेडीमेड कपड़ों के निर्यात का व्यवसाय आप खुद शुरु कर सकते हैं. व

एंसेफेलेटिस मस्तिष्क की एक भयंकर बीमारी है. कुछ तथ्य व सलाह के उपाय.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डालनी शुरू कर दी और गले में पट्टा डाल दिया. उसका नाम रखा— टॉमी. आज सुबह से लाला जानकीदास ने टॉमी को प्यार नहीं किया था, सो खुद ही प्यार लेने आ गया. जानकीदास उसकी पीठ थपथपा रहे थे.

उसी समय महेंद्रनाथ कोठी के पीछे से दही-बड़ों का दोना लिये आए और बाऊजी को टॉमी के साथ देख-कर बोला— घर में इतना काम है और आप. . . उसके स्वर से प्रकट था कि बाऊजी जो भी काम करेंगे, जरूर गलत होगा. चलें, सब लोगों को खाने के लिए कहें और खुद भी खाना खा लें!

जानकीदास पंडाल में आए. उनका दोस्त बुद्धसिंह अमृतसर से आया था. तीस साल की नौकरी में यही एक कोलीग दोस्त बना था. बच्चे पालते या दोस्तियां निभाते! दोस्तियों को कायम रखने के लिए पैसा चाहिए, वक्त चाहिए. जानकीदास के पास दोनों नहीं थे. यह तो बुद्धसिंह की ही खूबी थी कि जानकीदास की हर तकलीफ में देवदूत को तरह आकर मदद करता था.

जानकीदास को, बच्चों के लिए घर की चारदीवारी और रसोई में बंधे देखकर बुद्धसिंह अक्सर कहा करता था— जानकीदास, मेरी मानो तो जरूर शादी कर लो! बच्चे अपनी किस्मत साथ लाते हैं. बुद्धसिंह के जिंदगी के असूल बड़े सीधे थे, खाओ-पियो और खुश रहो. आगे की फिकर मत करो. जानकीदास की पीठ पर हाथ मार बुद्धसिंह बोला— सुनाओ यार, अब क्या इरादा है, राजी की भी शादी हो जायेगी, अपने लिए भी कुछ सोचा है?

जानकीदास ने कुछ उत्तर नहीं दिया, सिर्फ मुसकरा दिये और बोले— चलो, खाना खाओ! उसे प्लेट पकड़ा कर स्वयं उठकर भीतर चले गये.

दायीं ओर का कमरा महिलाओं ने काबू किया था. भीतर से आवाजें आ रही थीं.

—हाय, यह झुमके कहां से बनवाए?

शोर! ! !

—यह साड़ी खूब फब रही है!

शोर! !

—तुम्हारे पास किस कलर की लिप्सटिक है? मैंने तो खास आज के लिए गरारा-कुर्ता सिलवाया है.

—मैं तो लुंगी पहनूंगी!

* *

जानकीदास दूसरे कमरे की ओर गये, वहां राजी के दोस्त फ्लाश खेल रहे थे.

—अठन्नी की चाल!

—एक रुपया ब्लाइंड!

—दो रुपये!

—अच्छा शो.

—बादशाह.

—बस?

—बेगी. . . . गोला ! !

—ले जाओ!

जानकीदास मन ही मन सोचने लगे, उनकी सारी चालें भी ब्लाइंड ही थीं, फुसफुसाए—ले आओ, ले आओ.

जानकीदास का मन आज उखड़ा-उखड़ा-सा था. तीसरे कमरे की ओर गये, वहां का दरवाजा बंद था. शायद महेंद्रनाथ के दोस्तों ने बोतल खोली हुई थी. बारात के साथ चलने की उनकी यही शर्त थी.

जानकीदास वहां से पीछे के बरामदे की ओर गये. वहां महेंद्रनाथ अपनी पत्नी अनीता से कह रहा था— टिकू के लिए थरमस में दूध रख लिया है?

—हां, ले लिया है.

—पिंकी की दवाई भी ले लेना.

—अच्छा!

बरामदे के सामने तंबू लगे थे जहां हलवाई खाना बना रहे थे. जानकीदास उस ओर चले गए. जिस देगची में तरकारी थी, उसके नीचे चूल्हा बुझ चुका था. अब गर्म राख पर तसला पड़ा था. एक हलावई उसके पास खड़ा दोने भरता था और तसला खाली होता जा रहा था.

* *

जानकीदास वहीं खड़े उस सारी प्रक्रिया को देख रहे थे. टॉमी उन्हें ढूंढ़ कर फिर उसके पास आ गया था. खाने-परोसने की जगह से उसे दूर रखने के इरादे से वे उसे एक ओर ले गए.

—बाऊजी, सब के अटैची केस बस में रखवा दें. . . और आप का अपना अटैची कहां है?

—मेरा अटैची, हां, याद आया, उसकी तलाश में तो मैं अंदर आया था. . . .

—अपना सारा सामान समेट लिया?

—हां. . . समेट लिया. . .

और अनीता चली गयी, शायद उसे काई और काम याद आ गया.

सब लोग अपनी अपनी सीटें रोकने के लिए बस की ओर जा रहे थे. सब की अटैची बस की छत पर रखवा कर एक खाली बची सीट पर जानकीदास जा बैठे.

बस चलने को तैयार थी. अचानक बच्चों के चिल्लाने, चीखने और रोने की आवाज सुनाई दी.

बुद्धसिंह ने ठहाका लगाते हुए कहा—लो टॉमी भी आ गया है. पीछे मुड़ कर जानकीदास से बोले, चलो इसे भी बारात के साथ ले चलेंगे.

जानकीदास के घिरे हुए बादलों के समान आशंकित चेहरे पर बिजली-सी चमक आयी और बोले—ले चलें, जैसे उनके मन की बात किसी ने कह दी हो. □ □ □

७६—सेक्टर—११,
चंडीगढ़.

CC0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्रिया-कर्म

• प्रकाश बाथम

उसने जो कुछ सोचा था, वह सब गलत निकला. न उसका सारा अनुमान गलत साबित हुआ. रत्ती भर भी अनुमान सही निकलता तो भी कोई बात होती. अम्मा की तबीयत साल भर से ऊपर से खराब चली आ रही थी. उनकी पीठ चारपाई से लग गयी थी. पीठ में घाव हो गये थे. घाव कूल्हे पर भी थे, लेकिन पीठ के मुकाबले कम गहरे थे. उसकी पत्नी अम्मा को करवट के बल लिटा कर रोज सुबह-शाम घावों पर 'बरनाल' का लेप लगा कर उस पर पाउडर छिड़क देती थी. अम्मा उससे खासी संतुष्ट थीं. लेकिन अम्मा के चेहरे और हाथ-पैर की सूजन इधर तीन महीने से बढ़ती जा रही थी. घर-भर में सब लोगों को विश्वास था कि अम्मा अब जाने वाली हैं, तब जाने वाली हैं. चारपाई पर लेटी-लेटी अम्मा स्वयं इसी विश्वास में जिये चली जा रही थीं कि किसी समय भी उनका बुलावा आ सकता है. वह भी एक महीने से, अपने दिल्ली जाने की बात को टालता चला आ रहा था. दिल्ली वाली कंपनी का पत्र आ चुका था कि एजेंसी के लिए शर्तों पर बातचीत आमने-सामने होती है, और उसके लिए उसे दिल्ली जा कर बातचीत करना चाहिए. कई बार तो वह बिल्कुल तय कर चुका था कि मंगल को जायेंगे, शुक्र को जायेंगे. लेकिन जब रात में बिस्तर पर लेटते समय पत्नी को बताता कि मंगल की रात वाली गाड़ी से दिल्ली जाने की सोच रहे हैं, तो पत्नी उसकी कमर दबाते हुए सलाह देती, काम जरूरी है तो जाना ही पड़ेगा लेकिन अम्मा की हालत आप देख ही रहे हैं. इनका कोई ठीक नहीं. आखिरी समय तक आप रहें तो उन्हें भी संतोष होगा और बाबूजी को भी. . . बात उसकी भी समझ में आ जाती और यात्रा स्थगित हो जाती. उसे लगता, बहुत आवश्यक काम टलता जा रहा है.. .. . कभी-कभी अम्मा के फूलते हुए दम और उनके हांफते बेदम चेहरे की ओर देख कर उसे लगता कि हो सकता कि अम्मा कल सुबह जीवित न मिलें.

फिर एक रोज दोपहर की डाक से दिल्ली वाली कंपनी की चिट्ठी आ गयी और सत्ताईस तारीख माह की निश्चित करते हुए उन्होंने लिखा कि उस तारीख तक अवश्य पहुंच जाय, अन्यथा प्रस्ताव रद्द करके एजेंसी दूसरे प्रस्तावक को दे दी जायेगी. सोचा तो उसने यही था कि अम्मा के मरने के बाद ही जायगा लेकिन वहां से ऐसी चिट्ठी आने के बाद वह अम्मा के मरने की प्रतीक्षा कब तक करता.

सारा कारोबार बाबूजी ने अपने तीनों लड़कों के हाथों सौंप दिया, और निश्चित हो कर घर पर बैठ गये थे. कभी-कभार शाम को मन बहलाने की नीयत से अपने नाती-पोतों के साथ रिक्शे में लदे-फंदे आकर दुकान पर उतर जाते थे. काउंटर के पास बाहर की ओर मुंह किये सिर्फ कुर्सी पर बैठ आते-जाते, लोगों मोटरों और साइकिलों को देखते रहते. उनके चेहरे को देख कर कभी कभी लगता था कि क्रियाशील आदमी जब क्रियाहीनता की स्थिति में आ पहुंचता है तो किस तरह मात्र दर्शक की हैसियत से वह दूसरों की जीवनघटनाओं में इधर से उधर पैसिव तरह से डोलते हुए अपने को जीवित रहने की प्रक्रिया में डाले रहता है.

बाहर जाने के लिए उसने कभी बाबूजी से सलाह नहीं ली. और न ही बाबूजी ने जरूरत समझी थी कि वह उनसे सलाह ले. उन्हें भरोसा था कि वह जो कुछ कर रहा है, उचित और ठीक है. लेकिन इस बार दिल्ली जानेवाली बात, उसे लगा, कारोबार से इतना संबंध नहीं रखती है जितना अम्मा से. इसलिए उसने यही उचित समझा कि बाबूजी से पूछ लेना अच्छा ही होगा.

दिल्ली की कंपनी का पत्र ले कर जब वह बाबूजी के पास पहुंचा तो बाबूजी अम्मा की चारपाई के करीब बेंत वाली आरामकुर्सी पर बैठे अम्मा को गीता का दूसरा अध्याय सुना रहे थे. जब से अम्मा ने चारपाई पकड़ी है, बाबूजी ने गीता, रामायण और महाभारत कई-कई बार सुना डाली हैं.

बाबूजी ने उसका पत्र पढ़ा. लगे हाथों उसने अम्मा को भी बता दिया. अंदर से अम्मा ने चाहे जो कुछ भी सोचा हो, उधर से कह बोल पड़ीं—— इसमें पूछने की क्या बात है, बबुआ! जरूरी काम तो रोके नहीं जा सकते. बाबूजी भी ने इसी से मिलता-जुलता उत्तर दिया था. उसकी पत्नी की अब भी यही इच्छा थी कि यदि संभव हो तो दिल्ली जाना फिर कुछ दिनों के लिए आगे बढ़ा दिया जाये. लेकिन वह उसी रोज रात की गाड़ी से दिल्ली चला गया.

गोश्त खाने और दारू पीने का वह बहुत शौकीन है. लगभग रोज ही गोश्त खाता है और दारू भी पीता है. दिल्ली में पहले रोज काम करने के बाद उसने शाम को होटल के अपने कमरे में बैठ कर, धांस कर दारू पी, और चिकेन सूप और तली हुई मछली खा कर सिनेमा देखने चला गया. रात में दो बजे जब सिनेमा देख कर लौटा तो होटल के मैनेजर ने उसे सूचना दी कि उसकी मां रात में ग्यारह बजे के लगभग मर गयी हैं.

रात ही में उसने कंपनी के कामर्शियल मैनेजर को फोन द्वारा बताया कि उसकी मां की मृत्यु हो गयी है और वह वापस जा रहा है. सारी बातें स्थगित रखिए. बीस-पच्चीस रोज बाद लौटेगा तब अंतिम रूप से सारी की सारी बातें तय कर ली जायेंगी. दिल्ली से चलने के पहले उसने सोचा, बारह-तेरह रोज तक उसे अम्मा के क्रिया-कर्म पर बैठना पड़ेगा. इस बीच न गोश्त मिलेगा, न दारू. सिगरेट और चाय तो चल ही जायगी, क्योंकि समय के बहाव ने इतनी छूट मजबूरन दे दी है. रास्ते भर वह यही सोचता रहा,. . . . बाबूजी अभी जिंदा हैं. उनके रहते, और उनके संतोष के लिए तो सब कुछ करना ही पड़ेगा. साथ में ली हुई दारू वह रास्ते में पीता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आया. दोपहर को डायनिंग कार से मंगवा कर उसने चिकेन रोस्ट, उबली हुई सब्जी और कौ के साथ खाया.

* *

घर पर जब वह उतरा तो सारा घर मुर्दनी की व्यापक शांतिमयता में भीगा हुआ था. बाहर के बरामदे में बर्फ की सिल्ली पर अम्मा का शरीर चादर में रखा था. बाबूजी उसी के नजदीक बैठे अब भी गीता का पाठ कर रहे थे. उसका छोटा भाई चंदर गर्म शाल लपेटे वहीं बाबूजी के पास बैठा बर्फ की सिल्ली से पिघलता पानी, फर्श पर बहता देख रहा था. सबसे छोटा भाई रामू बड़े दरवाजे की दहलीज पर बैठा, घुटनों पर सर दबाए ऊंघ रहा था. छोटी बहन चन्नो और उसके बच्चे भी आ गये थे. उसके चारों बच्चे अंदर सो रहे होंगे. वह दीवार से सटी कंबल ओढ़े बैठी थी. पाखर के पुत्ती पहलवान मारकीन का मैला चादर अपने भारी-भरकम ढीले शरीर पर सर से ओढ़े, पलथी मारे बैठे थे. उनके मुंह में छोटे कद की बीड़ी धधक रही थी. आंखों में नींद थी, लेकिन जबरन जाग रहे थे.

उसके रिक्शे को सबसे पहले पुत्ती पहलवान की नींद से बजनी आंखों ही ने देखा था. देखते ही फौरन उठ कर खड़े हो गये थे, 'बबुआ, आ गये.' सबसे पहले चन्नो लिपट कर जोरों से राई. फिर रानू आ गया, सिसकता हुआ. चंदर दूर खड़ा आंखों से आंसू पोंछ रहा था. पुत्ती पहलवान ने मुंह की बीड़ी बरामदे के नीचे कच्ची जमीन पर फेंक दी. आ कर रिक्शे से सामान उतारने लगे. उसे देख कर चंदर की बीवी जोरों से रोती हुई अंदर आंगन की ओर भाग गयी. चंदर की पत्नी रोते-रोते बेहोश हो जाती थी, उसी को सम्हालने के लि उसकी पत्नी भी पीछे-पीछे दौड़ी. फिर बाबूजी कर खड़े हो गये. वह उनके गले से लिपट गया. बाबू की आंखें स्वयं गीली थीं लेकिन उनका एक हाथ उस पीठ पर धैर्य की थपकियां दे रहा था. परिवार के छ चच्चा और उनका परिवार भी वहां मौजूद डिब्रूगढ़ से सुकेशी जिया अभी आयी नहीं थी. सुके जिया और उसी का इंतजार था, नहीं तो अम्मा सु ही फूंक दी गयी होतीं.

जगेसर बाबू के यहां से चाय आ गयी. कल रात सभी लोग चाय पर थे. अम्मा उठ जातीं तो चूल जलता. सब लोगों में चाय बंटी. पुत्ती पहलवान ने चा लोटे में पी और सारी रात बरामदे के खंबे से सटे नी में ऊंघते रहे.

सुबह अम्मा को बबुआ ने आगी दी. घाट पर उस सारे परिवार ने बाल मुड़ाये. नाई का उस्तरा तेज नह था, इससे सभी लोग बाल मुड़ाने की ऊपरी पीड़ा क झेलते हुए भी नाई से मजाक कर रहे थे. छोटे चच्चा का बड़ा लड़का बड़े-बड़े बाल और आधे गालों तक लंब मोटी कलम रखाये था. मोहल्ले के दो-चार लड़के घा के एक किनारे उल्टी हुई नाव की पेंदी पर उठकुरुआ बैठे, बाल मुड़ने के बाद उसकी शक्ल की तस्वीर खींचने में लगे हुए थे. लड़के खींच रहे थे, 'अबे, बंबई जाने का प्लान अब साल भर तक पोसपोन करो.' छोटे चच्चा का फिल्मबाज लड़का तड़प रहा था.

दो बजे तक सब लोग घाट से वापस आ गये. बबुआ महीन झीने सफेद कपड़े की लांगदार धोती बांधे जनेऊ डाले हुए थे. सुबह से ही ठंडी हवा चल रही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

थी. शरीर पर झीनी धोती के अपर्याप्त पल्ले के अतिरिक्त कुछ था नहीं. बबुआ सर्दी में सिकुड़ा जा रहा था. घर के बाहर बरामदे में एक तखत के ऊपर पुराना मैला गद्दा डाल कर सफेद चादर बिछा दी गयी. उसी पर घिरे हुए कंबल को ओढ़ कर बबुआ घुटने सिकोड़ कर बैठ रहे. सिगरेट वह बाबूजी के सामने भी पीता था. छोटे चच्चा के सामने भी. लेकिन इस समय उसके पास नहीं थी. अपने बड़े लड़के को बुला कर उसने कहा—मम्मी से पैसे ले कर दो पैकेट सिगरेट ले आओ. और क्या, बैठे-बैठे कुछ काम तो है नहीं. समय कैसे कटेगा? नौकर दौड़ कर दो पैकेट सिगरेट ले आया. शाम को बहुत से लोग मातम-पुर्सी के लिए आए. दसवें तक घर में तो चूल्हा जल नहीं सकता था, इसलिए जगेसर बाबू के यहां राशन भिजवा दिया गया. दो ब्राह्मणियां लगा दी गयीं. रात का खाना उन्हीं के यहां से बन कर आया.

खड़े उर्द की पानीदार दाल और कहीं कच्ची, कहीं जली रोटी देख बबुआ (वह) बुदबुदाया तो, लेकिन खामोश रहा. और कोई दिन रहा होता तो सारे घर में हाय-तोबा हुई होती और कुहराम मच गया होता. जिस प्लेट में ऐसी दाल आयी होती वह पनाले पर चकनाचूर पड़ी होती. मन मारते हुए उसने खींचतान कर दो रोटी खाई और तकिया के पास पड़ी हुई डिब्बी में से निकाल कर सिगरेट सुलगा ली.

वर्षों के बाद आज पहला रोज था जब वह बिना दारू पिये सोने के लिए लेटा था. तकिया पर सर रख कर उपर देखते हुए उसे बड़ा अजीब लग रहा था. मुंह का स्वाद जो थोड़ी देर पहले दारू की तल्खी की तलब महसूस कर रहा था, वह सिगरेट के कशों के धुंआ से स्वाद की वजह से कुछ ढीला पड़ने लगा था. लेकिन मन तड़फड़ा रहा था.

* *

सुबह बहुत सर्दी थी. सूरज सड़क के उस पार वाले मकानों के पीछे था. किन्हीं दो मकानों के बीच बने हुए गलियारे से होती हुई सूरज की धूप मकान के सामने छोटे-से मैदान के एक कोने पर बने कुएं की टूटी कगार पर फिसल रही थी. बाबूजी को बहुत मना किया गया, लेकिन वह माने नहीं. तबीयत खराब होने की आशंका पर उन्होंने किंचित ध्यान नहीं दिया. अंदर गर्म पानी से नहाने के बारे में कह दिया, 'उसने हमारी सुख-सुविधा के लिए इतना किया, और क्या मैं उसकी आत्मा के लिए दस रोज इतना भी नहीं कर सकता! सब लोग चुप हो गये. उन्होंने पानी भरवा कर कुएं की कगार पर ही नहाया. बबुआ गंगास्नान करने चले गए. साथ में नाऊ और पंडित भी गया था. सुबह उठना ही बबुआ के लिए मुश्किल था. दस-ग्यारह के पहले तो कभी उठे ही नहीं थे. सर्दियों में या तो नहाया नहीं, और अगर नहाया भी तो गर्म पानी से. नाऊ के जगाने पर बड़ी मुश्किल से जगे थे और अब सुबह गंगा के ठंडे पानी से बिना साबुन लगाए कैसे नहाएंगे, यह वही जानें.

अम्मा का क्रिया-कर्म बड़ी शान और तामझाम के साथ हो रहा था. बबुआ तनिक भी पैसे की फिकर नहीं कर रहे थे. सारे रिश्तेदारों के यहां अम्मा के गुजरने की सूचना भेजने के लिए रानू को पोस्ट कार्ड ला कर लिखने के लिए कहा गया. ऐसे-वैसे कामों में रानू का मन तो लगता नहीं था, नाक-भौं सिकोड़ कर साइकिल उठायी और डाकखाने चले गए. लौट कर आए तो एक मजमून बना लिया और सामने वाले छोटे कमरे में दरी बिछा कर मेंढक की तरह से बैठ गए.

ग्यारह बजे के लगभग बबुआ जब घाट से लौटे, उसी के थोड़ी देर बाद, सब से बड़ी बहन सुकेशी जिया का रिक्शा आ कर खड़ा हुआ. जीजा भी आए थे. लेकिन बच्चे वह डिब्रूगढ़ में ही छोड़ आये थे. सुकेशी के आने पर थोड़ा-बहुत कुहराम फिर मचा. चन्नो रोती रही, लेकिन सुकेशी आंखें नम करके चुपचाप बरामदे में बाबूजी के पास बैठी मुंह में दातून चबा रही थी. बाबूजी उसे अम्मा के अंतिम दिनों के हाल और उनकी इच्छाएं बताने में लगे हुए थे. मरने के पंद्रह रोज पहले ही तो सुकेशी मय बच्चों के अम्मा को देखने डिब्रूगढ़ से यहां आयी थी. चार-पांच रोज रहने के बाद फिर चली गयी थी. वह यह तो समझती थी कि अम्मा अब अधिक नहीं चल सकतीं, लेकिन उसने यह कतई नहीं सोचा था कि, इतनी जल्दी मर जाएंगी. नहीं तो, जब इतना पैसा खर्चा कर के वहां से यहां आयी थी तो कुछ दिन और रुक जाती. इस समय बाबूजी के पास बैठी हुई भी वह यही सोच रही थी, कि तीन-चार सौ रुपया और खर्च हो गया. लेकिन यह एक ऐसा सत्य था जो किसी से कहा नहीं जा सकता था. इसी सत्य को मन के अंदर पोसे हुए वह अंदर भौजाइयों के पास चली गयी.

दोपहर के खाने समय फिर वही खड़ा उर्द और चावल था. थाली आते ही बबुआ भकुआ गए. थाली उसकी पत्नी लायी थी. जोर से तो नहीं, लेकिन धीरे से उसी पर बरस पड़े. फिर, कमरे से बाहर बरामदे में आते हुए बाबूजी को देखा तो चुप हो गए.

शाम तक बबुआ, चंदर और रानू की ससुराल से साले लोग आ गए. गया वाली बुआजी अपने मझले लड़के के साथ आ गयीं. हरिदर मामा आ गए. उनका बड़ा लड़का जगाधरी में तैनात था. वह भी अपनी बहू-बच्चों के साथ आ पहुंचा. उसकी टोकरी में बिस्कुट का आधा पैकेट और दालमोठ की पुड़िया पड़ी थी. सुबह गाड़ी पर नाश्ते के लिए ली होगी. घर पर मौजूद सभी छोटे बच्चे उसी पर टूट पड़े.

रात में खाने के लिए सब आदमी लोग एक साथ बैठे. पुत्ती पहलवान चौघड़ा लिये परसने में लगे हुए थे. ससुरालियों का खाना जगेसर बाबू के घर रख दिया गया. काफी भभ्भड़ थी.

सुबह नाश्ते के समय भी अच्छा शोरगुल था. बाहर बाबूजी और सुकेशी जिया धूप में बैठी बात करने में लगे हुए थे, और अंदर आंगन में लड़के लोग खेल खेलने और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सीटी बजाने पर तुले हुए थे. सबसे ज्यादा शैतान चन्नो का लड़का गोलू और चंदर की लड़की रक्कू थी. दोनों की मम्मियों ने पिटाई भी की कि ऐसे मौकों पर शोर मचा कर कोई खेल नहीं खेलते, लेकिन वे बच्चे थे और उनके लिए यह बात बहुत भारी पड़ती थी. थोड़ी देर तक वह ओंठ दबाए मातमी जामा पहनने का भरसक प्रयास करते रहे. असफल होते ही रक्कू ने जोरों से सीटी बजाई और फिर खेल शुरू हो गया. चंदर की पत्नी ने तो सोच लिया, ऐसे मौकों की संजीदगी को बच्चे क्या समझें. और यह सोच कर वह सब्जी छीलने में जुट गयी. लेकिन चन्नो को अपने लड़के की करतूतों पर जरूर शर्म आ रही थी. वह रह-रह कर दांत किटकिटा रही थी.

चौथे रोज दोपहर तक सर्दी बहुत कम हो गयी. दो-तीन रोज पहले पछुआ हवा का तेज बहाव जो शुरू हुआ था, वह एक दम से शांत पड़ गया. सामने सड़क के किनारे लगी पाकड़ के पत्ते भी बहने बंद हो गये. म्युनिसिपैलिटी की जमादारिन झाड़ू से पत्तों को बुहार कर एक जगह इकट्ठा कर रही थी. पत्तों को इकट्ठा करने के बाद फिर उसने उसमें आग लगायी और चलती बनी.

* *

चार रोज पहले मकान के हर कमरों और कमरों की प्रत्येक दीवारों पर दुख की जो पर्तें चढ़ गयी थीं, वह पपड़ी बन कर जगह-जगह से गिरने लगीं. बच्चे लोग तो पहले से ही शोर मचाए हुए थे, अब बड़े लोगों ने भी शुरू कर दिया था. उनका कहना था कि समय कैसे कटेगा. मुंह बांध कर रोते-रोते संजीदगी में डूबे रहने की स्थिति को सामने देखते ही सब लोगों के हाथ-पैर फूलने लगते थे. फिर धीरे से किसने शुरू किया, यह तो नहीं कहा जा सकता, लेकिन शुरू हो गया. बुआजी का लड़का मजाक में बहुत तेज था. तीनों भाभियों से छोटा था. मजाक के मारे उसने तीनों भाभियों का उठना-बैठना मुश्किल कर दिया. बबुआ और चंदर की पत्नियां तो जरा भी नहीं खिसियातीं थी, लेकिन रानू की पत्नी बहुत जल्दी खिसिया कर रोने लगती थी. इसी मजाक में सुकेशी जिया और चन्नो भी शामिल हो गयीं. बबुआ का साला बाहरवाले कमरे में कंबल ओढ़े सो रहा था. चन्नो और हरिंदर मामा के लड़के ने आपस में मिसकौट की और दोनों जनों ने जा कर उसके मुंह भर में डिबिया का सारा काजल पोंछ डाला. सो कर जब उठा तो वह सीधे बाहर के बरामदे में बाबूजी, पुत्ती पहलवान, हरिंदर मामा, बबुआ, जगेसर बाबू और प्रहलाद जी के पास बेंच पर जा कर बैठा. उसकी शक्ल देखते ही पुत्ती पहलवान ने खूब बनाया. सभी लोग हंसे. बाबूजी के लटके हुए चेहरे को देख कर लगता था, कि उनके अंदर की हंसी, मोटी पर्त के नीचे से बाहर फूटने के लिए बुलबुला रही है. फिर वह हल्का-सा मुसकरा कर के ही रह गए.

शाम को जगेसर बाबू, प्रहलादजी और बबुआ वहीं बाहर तखत पर ही तीन गड्डी मिला कर 'पपर खेलने लगे. बबुआ के चेहरे पर पहले अम्मा के मर का दुख तो था, लेकिन उससे कहीं ज्यादा, व्यावहारि चिंताओं की छाप थी. दसवां और तेरहीं के रोज ए हजार आदमियों को भोज पर बुलाने की बात थी. द शोरबेदार सब्जियां, दो सूखी सब्जियां, रायता, पापड़, चटन और चार तरह की मिठाई देने को बाबूजी कह रहे थे बाबूजी, चंदर, बबुआ और रामू जब तीनों-चारो लो सलाह करने के लिए बैठे तो रानू न तो इतने आदमिय के बुलाने के पक्ष में था, और न ही खाने में इतनी चीज देने के पक्ष में था. कहता, 'क्या कोई शादी हो रही है जो इतना सब होना जरूरी है. समय को देख कर करना चाहिए. अभी अगले साल भैया रेवा की शादी करने को ठाने हुए हैं. उसमें भी तो खर्चा होता है. सब कैसे सपरेगा.'. . . . . बाबूजी को जरूर बुरा लगा होगा क्योंकि रानू के मुंह से यह सुनने के बाद उन्होंने कह दिया था, 'भई, जैसा तुम लोग जानो. . . .' रुपए की चिंता बबुआ को भी थी लेकिन वह बाबूजी के मन के अंदर अम्मा के लिए राग को समझता था, इसीलिए न चाहते हुए भी वह चाहता था कि वही सब हो जो बाबूजी चाहते हैं.

दसवें तक अंदर-बाहर खूब हंसी-मजाक और तिन-पतियां होती रहीं. दारू और गोश्त न मिलने की तीखी वेदना को बबुआ पपलू, सिगरेट, हंसी-मजाक और एजेंसी मिलने की चिंता से पाटे रहे. लगभग एक हजार आदमियों को कार्ड बांटे गये और शाम को बाहर के खुले मैदान में तंबू, कनात, मेज और कुर्सियां लगने लगीं. रात में सब लोगों के खाने समय ऐसा लगता ही नहीं था जैसे इस घर में गमी है. लगता था, शादी है.

सब लोगों ने जम कर खाया और शोक प्रकट करते हुए चले गए. बच गए प्रहलादजी और जगेसर बाबू. बबुआ ने भी नहीं खाया था. तीनों आदमियों के लिए अंदर से खाने की बुलाहट आयी तो मना कर दिया, अभी नहीं थोड़ी देर में खायेंगे.

एक रिक्शे पर लद कर तीनों आदमी अंग्रेजी दारू की दुकान गए. दुकान बंद थी. 'बार' में गए. प्रहलादजी और जगेसर बाबू ने थोड़ी-थोड़ी पी लेकिन बबुआ ने उसे पहली रात के मिलन की तरह खूब पिया. फिर तंदूरी मुर्गा भी मंगाया. लेकिन दारू ज्यादा हो जाने की वजह से उसको एक बोटी ही खा पाया. फिर वह डगमगाते कदमों से घर आया.

बाहर बेंच पर शाल ओढ़े बाबूजी उसके आने की प्रतीक्षा में बैठे थे. उसने बाबूजी से पूछा— बाबूजी आप लेटे नहीं? तो बाबूजी चुप थे. इतना पूछते हुए वह सीधे अपनी पत्नी के कमरे में चला गया.

बाबूजी थोड़ी देर तक वहीं बेंच पर बैठे सामने की सुनसान सड़क पर जले हुए पत्तों की राख देखते रहे.

३५६, डा. बायम रोड, रेल बाजार, कानपुर-४ □□□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

खत

शरत

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मम्मी के पास... ऊं-ऊं-ऊं... मम्मी के पास जायेगा...

तंग आ कर ग्यारह-वर्षीय तेजू ने डेढ़-वर्षीय छोटे बच्चे को एक थप्पड़ लगाया. छोटे बच्चे का दस मिनट से लगातार चलता रिरियाना जोर से चिलकारी मार कर रोने में परिवर्तित हो गया.

तेजू ने घबरा कर चारों ओर देखा. छत पर कोई और नहीं था. नीचे घर में साहब दोपहर के खाने के बाद सोने के कमरे में जा चुके थे. बीबी जी यानी 'ममी' के लौट कर आने में अभी एक घंटे से ज्यादा समय बाकी था. परेशान हो कर उसने छोटे बच्चे को असहाय दृष्टि से देखा और फिर उसे गोदी में उठा और झुला कर चुप कराने की कोशिश करने लगा.

उसकी कोशिश के नतीजे में नन्हें बच्चे ने अपने रोने की तेजी और बढ़ा दी. हताश हो तेजू ने बच्चे को छत के फर्श पर बैठा दिया.

★ ★

दोपहर के ढलते आकाश में कुछ बादल तैर रहे थे. घर के सामने वाली सड़क के दूसरी ओर नदी तक खुले खेत थे, जिनमें सरसों की पीली फ़सल हवा में लहरा रही थी. दाहिनी तरफ बढ़ते शहर के दबाव के बावजूद अब तक बच रहे गांव में खूंटों से बंधी गायें आराम से बैठी जुगाली कर रही थीं. घर के पालतू कुत्ते के छत पर आ जाने से नन्हा बच्चा रोना भूल कर कुत्ते के साथ खेलने लगा.

दोपहर की शांति में छत की मुंडेर के साथ खड़े तेजू के आंसू टपकने लगे. बहुत दूर, आकाश के अंत में, काले बादलों के पास, उसके 'देश' में बरसात हो रही होगी...

खपरैल वाली छत के उसके घर में पानी टपकता था. शाम होने से पहले, अब, मां छोटी बहनों को संभाले खाना बना रही होगी. बरसात के झोंकों से चूल्हे में गिरती बूंदों ने घर को धुएं से भर दिया होगा. खेतों से आगे, नदी के उस पार, बहुत दूर, उसका मन उठता गया, हालांकि अपने देश से आते समय उसने और उसके बापू ने बीबी जी को वचन दिया था कि कम-से-कम छह महीनों तक वह लौट कर नहीं आयेगा.

बापू ने कहा था—मां कहती है, पढ़ने में तेरा मन नहीं लगता. अब तू बड़ा हो गया है. बड़े शहर में काम पर जा. दुनिया देखेगा. आदमी बन जायेगा.

★ ★

नन्हें बच्चे के खेलने की रंगीन पेंसिलों के डिब्बे से हरी पेंसिल निकाल कर तेजू ने अपने घर चिट्ठी लिखनी शुरू की—

बापू,

मैंनें तीन महीने नौकरी कर ली है. बीबी जी सुबह से बाहर गयी हैं. बच्चा यहां है. कुत्ते से खेलता है. कुत्ता बड़ा खराब है. मुझे काटता है.

कल बीबी जी ने मुझे मारा. रोटी खाने को नहीं दी. कांच का गिलास मेरे हाथ से फिसल कर टूट गया.

तीन महीने बाद मैं घर लौटूंगा. अब मैं मेहनत से पढ़ूंगा. घर में डाक्टर साहब मोटर में आते हैं. उनको बहुत रुपये मिलते हैं. मैं डाक्टर बनूंगा, बड़े शहर के घरों में बीबी जी लोग बीमार रहती हैं. काम नहीं करतीं.

घर में तीन नौकर हैं. बीबी जी खाना नहीं बनातीं. बरतन नहीं माजतीं. बेयरा साबुन से प्लेट धोता है. साहब मोटर में बैठ कर दफ्तर जाते हैं. बीबी जी बाजार जाती हैं. रोज नयी-नयी चीजें खरीद कर लाती हैं. दिन में कई बार कपड़े बदलती हैं. फटी साड़ी नहीं पहनतीं. मैं मां के लिए नयी साड़ी बाजार से लाऊंगा. छोटी मुन्नी के लिए प्लास्टिक-पैंटी. तब मां की साड़ी गंदी नहीं होगी.

साहब और बीबी जी अखबार पढ़ते हैं. बड़े कमरे में बैठ कर लोगों से बातें करते हैं. क्लब जाते हैं. सोने से पहले साहब और बीबी जी बच्चे को प्यार करते हैं. बच्चा आया के पास सोता है. जब घर में कोई नहीं होता तो आया बच्चे को मारती है.

छोटी मुन्नी के लिए मैं फ्रॉक लाऊंगा. खेलने के लिए एक बड़ा कुत्ता भी. बड़ी हो कर मुन्नी बीबी जी बनेगी. मैं डाक्टर बनूंगा और उसका इलाज करूंगा.

मैं सुबह जल्दी उठता हूं. जब नदी से सूरज निकलता है. बच्चे को गाड़ी में घुमाने ले जाता हूं. घर में दो गाड़ियां हैं. तीन पहियों की लाल वाली और चार पहियों की बड़ी विलायती गाड़ी. लाल गाड़ी मैं मुन्नी के लिए ले आऊंगा. एक बच्चे के लिए एक गाड़ी ठीक है. गांव की कच्ची सड़क पर गाड़ी कैसे चलेगी?

साहब के दफ्तर जाने के बाद बीबी जी उठती हैं. बाजार जाने से पहले बहुत देर शीशे वाली मेज के सामने बैठती हैं, जहां बहुत-सी रंगीन शीशियां हैं. मां के लिए मैं रंगीन शीशी लाऊंगा. तब मां ऊंचे-ऊंचे बाल बनायेगी.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

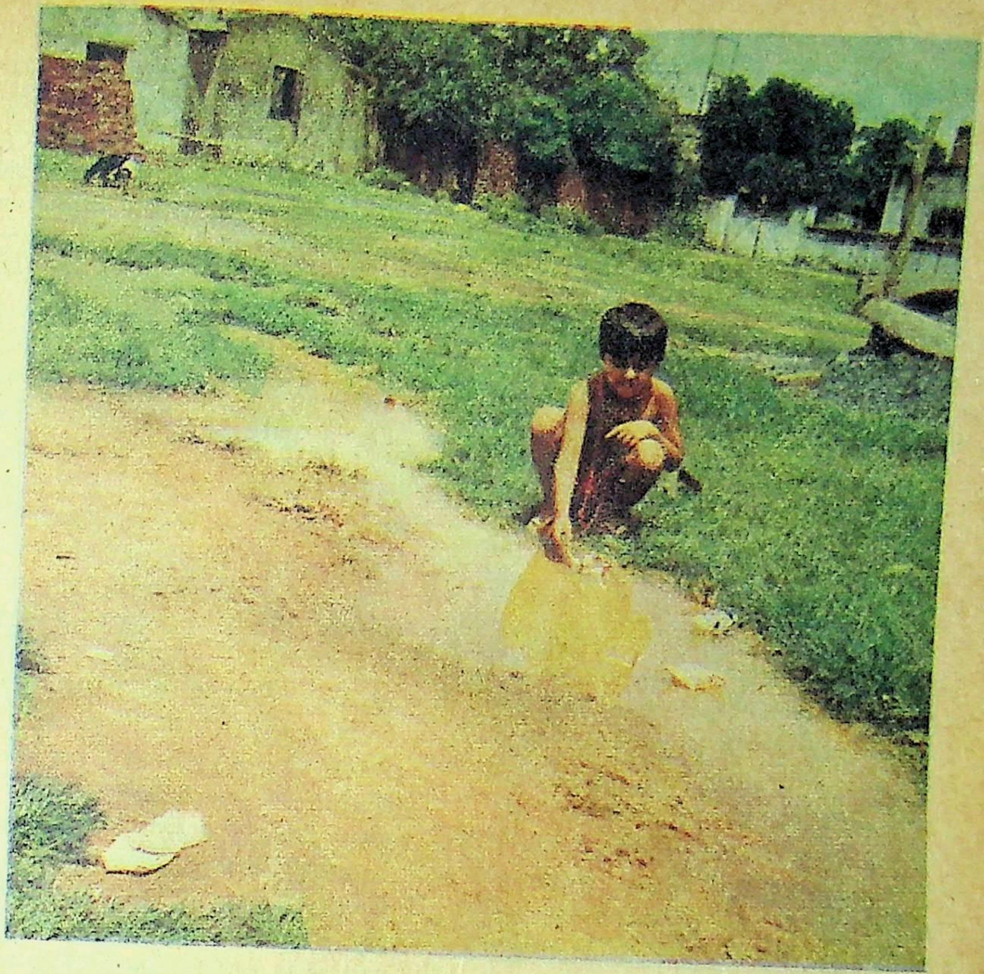

आर. एन. प्रसाद

मयूर मित्तल

नयी साड़ी पहनेगी. बाजार जायेगी.

बापू, तुम्हारे लिए मैं काले रंग का कोट लाऊंगा. तुम फिर दफ्तर में नौकरी करने जाना. हम शहर में आ कर रहेंगे. नये घर में, जिसकी छत नहीं टपकेगी.

★ ★

सड़क पर आती मोटर के हॉर्न से तेजू का ध्यान टूटा. नन्हा बच्चा कुत्ते के साथ खेलता हुआ नीचे उतर गया था. बीबी जी के आने का वक्त हो आया था. दूर क्षितिज पर काले बादल छंटने लगे थे. चिट्ठी में लिखने को उसे कुछ और नहीं सूझा. कागज को तह कर जेब में रखते समय उसे लगा कि उसकी चिट्ठी में कहीं कुछ गलती है. ढलते हुए सूरज से मकान की छाया सड़क पर लंबी फैलती जा रही थी. गांव की गायें जुगाली खतम कर उठ रही थीं. छोटे बच्चे की तलाश में जब तेजू छत से उतर रहा था, तो उसका मन काफी हलका हो चुका था. □□□

● नंबर ६, अलेग्जेंड्रा कोर्ट, ६०/१ चौरंगी रोड, कलकत्ता–२०

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नदी का दूसरा किनारा

● रामसरूप अणखी

एक बस-अड्डे से दूर हट कर हम शीशमों की छांव में सड़क -किनारे जा बैठे. तुमने मेरा हाथ भींचते हुए कहा था—जगरूप, तुम एक नदी हो. गोता लगा कर मैं वापस नहीं आऊंगी. सांस लौटे चाहे न लौटे. और मैंने तुम्हारी नाक की उठान को पकड़ते हुए जवाब दिया था—तुम नदी का दूसरा किनारा हो.

सुलोचना, इस खुश्क इलाके में हमें नदी का खयाल कैसे आ गया था?

और अब मैं अपनी भविष्यवाणी पर हैरान हूं. सचमुच ही तुम नदी का दूसरा किनारा थीं. या अब दूसरा किनारा हो गयी हो.

तुम्हें याद है एक बार एक शहर में हम मिल गये थे! मिले तो ऐसे थे जैसे तिथि और दिन और समय पूर्व-निश्चित हों. शहर में मेले जैसी भीड़ थी. ऐसा लगता था जैसे इस मेले का हर आदमी हर औरत हमें जानता हो. और शहर में कोई भी ऐसी जगह नहीं थी जहां हम घंटा, आधा घंटा बैठ सकें और मन हलका कर सकें. आखिर शहर से दूर एक नाले के किनारे, सरकंडों की ओट में जा बैठे थे. बातें थीं कि खत्म ही नहीं होती थीं. दिन छिपा था तो हम स्टेशन पर पहुंचे थे और गाड़ी में चढ़ गये थे. पता नहीं किधर जा रहे थे. जहां जा कर गाड़ी रुकी थी, उतर गये थे. लौटते हुए फर्स्ट क्लास का टिकट ले लिया था. ऊपर वाली गद्देदार सीट पर तमाम सफर के दौरान मैंने तुम्हारे शरीर में अपने शरीर को गूंथे रखा था. नीचे वाली सीट पर एक 'रायसाहब' पड़े थे. सारे सफर में वह करवटें बदलते रहे थे. स्टेशन आने पर तुम तो डब्बे से नीचे उतर गयी थीं. पर मुझे बांह से पकड़ कर उन 'रायसाहब' ने कहा था—बेटा जी, फर्स्ट क्लास के डब्बे में पहले भी कभी सफर किया है?

—जी हां. . .मैं घबरा गया था.

—फर्स्ट क्लास में यों सफर नहीं किया जाता.

—कैसे?

—देखो, तुम लोग सारी रात मुझे डिस्टर्ब करते रहे.

—ऐक्स्क्यूज मी! मैंने कांपते-कांपते कहा.

—नेवर माइंड! नेवर माइंड! और उन्होंने मेरा कंधा थपथपा दिया था. तुम नीचे खड़ी पानी-पानी हो रही थीं.

जब हम बिछुड़ने लगे थे तो मैंने कहा था—रूमाल? और तुमने अपने बैग में से नया-निकोर रूमाल निकाल कर मुझे दे दिया था. जब कभी भी तुम मिलती थीं और मेरे पास रूमाल नहीं होता था, तो तुम एक रूमाल मुझे दे देती थीं. जैसे एक अतिरिक्त रूमाल तुम हमेशा अपने बैग में रखती हो.

कितना अरसा हो गया है! अब तुम कभी नहीं मिलीं.! शायद तुम्हारा व्याह हो गया है! या शायद तुम किसी और आदमी को रूमाल देने लग गयी हो. मुझे कुछ पता नहीं. खैर, मुझे इस बात का कोई गम नहीं है.

और तो सब कुछ छोड़ो, पांचवें -छठे महीने तुम अगर एक रूमाल ही लिफाफे में डाल कर भेज दिया करो तो मैं समझ लूं कि मैं तुम्हारा कुछ लगता हूं. या तुम मेरी कुछ लगती हो. इतना भी नहीं? इतना-सा तो कर दो!

. . .नदी के इस किनारे की पुकार है. □

ग्रीक दंतकथा

नीओबी : पत्थर के आंसू

नीओबी थीबिस के सम्राट एंफीयन की पत्नी थी. कहा जाता है कि नीओबी के पिता टेंटालस और मां डायोनी देवताओं के बड़े विश्वास पात्र माने जाते थे. देवताओं से निकट संपर्क नीओबी को वरोहर में मिला था. स्वर्ग के देवता जियस की स्त्री लीटो से नीओबी के बहुत मधुर संबंध थे. नीओबी छह वीर पुत्रों और छह सुंदर कन्याओं की मां बनी. अपनी उर्वर कोख का उसको बहुत गर्व हो गया. इससे उसके मन में यह दंभ आ गया कि वह जियस की स्त्री लीटो से भी बढ़ कर थी. किंतु अधिक संतान होने का वह अहंकार नीओबी के लिए बहुत ही दुर्भाग्यपूर्ण साबित हुआ. लीटो के स्वयं के दो संतानें थीं और अपनी तुलना में जब नीओबी ने उसे हीन बताया तो लीटो के अभिमान ने जियस के पौरुष को झकझोर दिया और उसने क्रुद्ध हो कर नीओबी को दंडित करने का निश्चय किया. जियस ने नीओबी के महल में अपोलो और आर्टेमिज को भेज कर उसके छह लड़के और छह लड़कियों को कत्ल करवा दिया. नौ दिन तक वे रक्तस्नात पड़े रहे क्योंकि उनको दफनाने वाला कोई न था. जियस ने शेष सबको पत्थरों में बदल दिया. दसवें दिन देवताओं ने बारह शवों को दफनाया. जियस ने नीओबी को सीफलस की एकांत पहाड़ियों में चट्टान बना दिया था. लेकिन उस हालत में भी वह अपना गहरा दुख न भूली थी. एक स्रोत का पानी सदैव उस चट्टान पर हो कर बहता रहता है, जिससे लगता है मानो नीओबी अपनी संतानों के शोक में निरंतर विलाप कर रहा हो. □

(प्रस्तुतकर्ता : गोपालचंद्र जोशी)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पराक्रमी बेलारफोंटीज

बेलारफोंटीज देवताओं के प्रसिद्ध शत्रु सिसीफस का पोता था. वह कर्निथ के वंश का था. और उसका वास्तविक नाम हिप्पोनीज था. जब वह तरुण हुआ तो उसने अत्यंत शौर्यपूर्वक बेलारफोना नामक एक भीषण दैत्य को मार डाला. इस पराक्रम से खुश हो कर टाईरंस के राजा प्रोटस ने उसको अपने यहां निमंत्रित किया. प्रोटस की नवयौवना रानी एंटिना बहुत खूबसूरत थी और तरुण और सुंदर बेलाफोंटीज को देखते वह उससे प्रेम करने लग गयी. बेलारफोंटीज को बहुत समय तक आमोद-प्रमोद के वातावरण में रखा गया. प्रोटस की अनुपस्थिति में जब-जब रानी एंटिना ने बेलारफोंटीज से प्रणय-याचना की तब-तब उसने कठोर बन कर उसको अनसुना कर दिया. एंटीना का प्यार चोट खा कर प्रतिकारात्मक हो उठा और अपने पति प्रोटस से उसने बेलारफोंटीज के प्रति मिथ्यापवाद लगा दिये. प्रोटस ने उसको समाप्त कर देने का निश्चय कर लिया. उसने बेलारफोंटीज को एक संकेतात्मक पत्र दे कर लीसिया अपने श्वसुर आयोबेटीस के पास भेजा जिसका आशय यह था कि पत्रवाहक को मौत के घाट उतार दिया जाये. आयोबेटीस ने सबसे पहले उससे कहा कि वह आग उगलनेवाले दैत्य शिमेरा से युद्ध करे और उसको मार डाले. बेलारफोंटीज ने अपने पंखदार उड़न घोड़े पेगासस की मदद से भयंकर दैत्य शिमेरा को मार डाला. उसके बाद सोलमी और अमेज़न लोगों से उसका भीषण संग्राम हुआ और बेलारफोंटीज ने उन्हें भी मार गिराया. अपनी वापसी विजय-यात्रा के समय वह शत्रुओं के उन शूर योद्धाओं को भी खदेड़ कर नष्ट कर देता है जो उसके निकलने की ताक में आक्रमण के लिए छिपे हुए थे. अब आयोबेटीस की समझ में आता है कि बेलारफोंटीज में कोई दैवी अंश है और वह उसको पास रख लेता है. यही नहीं वह उसको अपना आधा राज्य दे देता है और अपनी लड़की का विवाह उससे कर देता है.

बाद में हम होमर के महाकाव्य में इस किंवदंती का नाटकीय विस्तार इस तरह पाते हैं : बेलारफोंटीज की दिव्य शक्ति और दिव्य घोड़े के कारण सभी देवता उससे घृणा करने लगे और उन्होंने उसको एकाकीपन का शाप दे दिया. जंगलों में अकेले घूमते हुए जब बेलारफोंटीज अपनी पीड़ा को न भूल सका तो वह अपने कलेजे को ही निगल गया. देवताओं के प्रति उपेक्षा और मानवीय स्वाभिमान का इससे सुंदर आकलन और क्या हो सकता था ? □

• श्री अनंत

मयूराक्षी

आरगस इनेकस का लड़का था. यह भी कहा जाता है कि वह पृथ्वी के गर्भ से उत्पन्न एक राक्षस था और उसके शरीर पर सब जगह आंखें थीं जिससे वह आगे-पीछे, दांये-बांये, ऊपर-नीचे सब जगह एक साथ देख सकता था. इसलिए आरगस का नाम पेनोप्टीज पड़ गया था जिसका आशय होता है सर्वदृष्टा. वह स्वर्ग की रानी ऐरा के यहां पहरेदार था. बात यह थी कि इनेकस की अत्यंत रूपवती पुत्री आयो स्वर्ग की रानी हेरा के यहां पुजारिन थी. स्वर्ग के देवता जियस की आंखों में आयो चढ़ गयी थी. आयो और जियस एक दूसरे से प्रेम करते थे. रानी हेरा यह सह न सकी और ईर्ष्यावश उसने आयो को एक सफेद गाय में बदल दिया. और उस गाय की चौकसी का काम सर्वदृष्टा आरगस को सौंपा गया था. जियस ने आयो को पाने का उपाय खोजा. उसने संगीत के देवता हरमीज को आरगस के पास भेजा. संगीत के सम्मोहन से आरगस बच न सका. हरमीज ने अपनी बंसी और मृदंग के मोहक जादू से पेनोप्टीज की सब आंखों को एक-एक करके सुला दिया और हंसिये जैसी तलवार से उसका सिर काट लिया. रानी हेरा को अपने मृत पहरेदार से बड़ा स्नेह था और उसकी स्मृति अक्षुण्ण रखने के लिए हेरा ने अपने मृत पहरेदार पेनोप्टीज की सभी आंखें अपने पवित्र पक्षी मोर की पूंछ में लगा दीं. □

(प्रस्तुतकर्ता : गोपालचंद्र जोशी)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कृतियां

दो कहानी संग्रह

'कड़वे सच'

लेखिका: दीप्ति खंडेलवाल; पराग प्रकाशन, दिल्ली ११००३२; १३०-९ पृष्ठ; मूल्य : ९ रुपये.

हिंदी में लेखिकाओं की कथा-कारिता बहुत-से जायज-नाजायज कारणों से 'जनाना लेखन' जैसी फबती का शिकार रही है. दीप्ति खंडेलवाल, सौभाग्य से, ऐसे लेखन से ऊपर रही हैं– यद्यपि दूसरे दोष उनके कृतित्व में प्रचुर मात्रा में मिल जायेंगे.

'कड़वे सच' में उनकी ग्यारह कहानियां संकलित हैं––**'क्षितिज'**, **'मूल्य'**, **'एक पारो-पुरवैया'**, **'परिणति'**, **'देह की सीता'**, **'युद्धरत'**, **'ये भी कोई गीत हैं'**, **'जिजीविषा'**, **'विषपायी'** और **'कटु सत्य'**. मगर इन कहानियों के माध्यम से वह किसी भी तरह की विशिष्टता स्थापित नहीं कर पातीं. न बात की, न बात कहने के अंदाज की.

हम मानते हैं कि सादगी भी एक जबरदस्त गुण है. पर दीप्ति निहायत सादगी से कहानी कहते-कहते, जाने किस असमर्थता या मजबूरी की शिकार हो कर अति नाटकीयता का आंचल ओढ़ लेती हैं––बार-बार, और पाठक को भी व्यर्थ चिड़चिड़ाहट में झोंक देती हैं. यह चिड़चिड़ाहट कई बार घनघोर आश्चर्य भी बन जाती है. मसलन पहली कहानी **'क्षितिज'** के संदर्भ में––कि यह कहानी एक पुरस्कृत कहानी है. (भला पुरस्कार देने वालों ने इसमें क्या देखा?)

दीप्ति के बहुत-से शुभेच्छुओं ने उन्हें पति-पत्नी या प्रेमी-प्रेमिका के टूटते हुए संबंधों की लेखिका कहा है. और दीप्ति ने इसे शायद मान भी लिया है. मगर असलियत यह है कि जब वह इन संबंधों की कहानियां कहती हैं, तभी टिपिकल 'जनाना' लेखन की मिसालें भी कायम कर बैठती हैं (मसलन **'ये भी कोई गीत है!'**) इस लेखकीय गुहा से निकलते ही उनमें समसामयिकता के प्रति सजगता भी लक्षित होने लगती है. उदाहरण है **'विषपायी'**. इस कहानी में भी छोटे-मोटे दोष हो सकते हैं, मगर यह इस संग्रह की सम्भवतः सबसे सार्थक कहानी है. पारिवारिक, सामाजिक व आर्थिक परिस्थितियों के घेरों में दबे-फंसे एक सीधे-सादे तरुण के जीवन-विमुख होने का खासा कन्विंसिंग चित्रण है इसमें. **'युद्धरत'** भी इसी किस्म की एक काल सापेक्ष कहानी है; कमजोर है. पिटा हुआ रोमानी (या आउटडेटेड 'जनाना') चश्मा कितना घातक है, इसका प्रमाण **'परिणति'** और **'जिजीविषा'** की तुलना करने पर स्पष्ट हो जाता है. जिस किस्म की व्यथा-पीड़ा को दीप्ति **'परिणति'** में रोमांस के माध्यम से कहती हैं, उसी बात को **'जिजीविषा'** में रोमानियत से कुछ ज्यादा पिंड छुड़ा कर कहीं अच्छे और समर्थ ढंग से कह लेती हैं. . . हां, **'एक पारो पुरवैया'** जैसी कहानी जरूर एक संतुलित कहानी है––बावजूद जनाने नजरिये और अतिनाटकीयता के.

बाज वक्त थोड़ी झल्लाहट हो सकती है, मगर यह मानना पड़ेगा कि कथा-लेखिका दीप्ति हर हालत में एक नयी और अधिक सार्थक व समय-सापेक्ष जमीन तलाश रही हैं. यह लेखकीय संघर्ष एक शुभ संकेत है, और दीप्ति खंडेलवाल के प्रति आशावान व उत्सुक बने रहने का आधार है.

□ **रा. अ.**

दीप्ति खंडेलवाल

'सत्तारे मौसी'

लेखक : दुर्गाप्रसाद श्रेष्ठ; स्मृति प्रकाशन, इलाहाबाद; पृष्ठ: ११८; मूल्य : ५ रुपये.

दुर्गाप्रसाद श्रेष्ठ नेपाली और हिंदी लेखन में एक खासा परिचित नाम है. हिंदी में यह उनकी दूसरी पुस्तक है.

श्रेष्ठ अनिवार्यतः निम्न-मध्यवर्गीय पात्रों की परिस्थितियों और दुविधाओं-पीड़ाओं के कथाकार हैं. उनके अधिकांश पात्र आर्थिक अभावों और विडंबनाओं के शिकार हैं, बहुधा मानसिक और सामाजिक रूप से पिछड़े हुए हैं– और इसी कारण संभवतः प्रकृति भी उनका शोषण करती है.

'सत्तारे मौसी' में दुर्गाप्रसाद श्रेष्ठ की तेरह कहानियां हैं, और ये सब प्रायः इसी कसौटी पर कसी जाने से ताल्लुक रखती हैं. मगर श्रेष्ठ की कलम शायद बड़ी ही वेगवान है–– जैसे उसकी बस या ट्रेन छूटी जा रही हो. इस बस या ट्रेन को पकड़ने की रौ में वह अंधाधुंध भागते हैं और बीच में उन तमाम बारीकियों और मामूली (!) चीजों को नजर-अंदाज कर जाते हैं, जो (अन्यथा) रचना के प्राण बन सकती थीं, या कहानी की प्रभाववत्ता और विश्वसनीयता में अद्‌भुत वृद्धि कर सकती थीं. फिलहाल स्थिति यह है कि संग्रह की उनकी अधिकांश कहानियों में एक खास तरह की गहराई और फीलिंग का अभाव बुरी तरह अखरता है. **'जरूरत'** जैसी कहानी पढ़ कर पाठक बरबस सोचता है कि आखिर क्या कमी रह गयी है. कमी वही है––सरपट भागने की आदत. **'सत्तारे मौसी'** और **'मजबूरी'** पढ़ कर कुछ न महसूस करने पर भी पाठक खीझता है.

मगर यही गति **'केटी'** की रचना के दौरान सहसा भाषा की मितव्ययिता बन कर भी सामने आती है; और तब दुर्गाप्रसाद श्रेष्ठ की रचना-क्षमता में विश्वास होने लगता है. **'बंधे-अनबंधे'** को भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक ठीक-ठाक कहानी माना जा सकता है.

'बंध्या धरती और नीरस बादल', **'भगीरथी'** और **'वधू'** कहानियां भी श्रेष्ठ के रचनाकार के प्रति आश्वस्त करती हैं. **'भागीरथी'** की सुकुमारी किशोरी गंगा किस प्रकार सपने देखने की अभ्यस्त होने से पहले ही सपने देखने वाली आंखें और मन खो बैठती है, यह पाठक में टीस पैदा किये बिना नहीं रहता. और इस कहानी में भी श्रेष्ठ का वेग उनकी भाषागत मितव्ययिता बन कर ही सामने आता है.

'दिशाहीन' नवधनाढ्य वर्ग के तरुणों की दुर्भाग्यकारी मगर संपन्नतामयी नियति पर एक टिप्पणी है. कहानी अपेक्षाकृत अधिक काल सापेक्ष है. मगर नव-नेपाल की पृष्ठभूमि पर आधारित **'एक और मौत'** में फिर गहरायी की कमी अखरती है और कहानी अत्यंत बढ़िया न बन कर अत्यंत साधारण रह जाती है.

मगर दुर्गा की लेखकीय पकड़ और दृष्टि निश्चय ही सम्यक और स्पष्ट है. इनके रहते उनसे अपेक्षाएं बनी ही रहेंगी.

☐ **रा. अ.**

एक व्यंग्यरचना-संग्रह

'उड़ते उल्लू के पंख'

लेखक : लतीफ घोंघी; हस्ताक्षर प्रकाशन; ग्रेट ईस्टर्न रोड, तात्या पारा, रायपुर (म. प्र.); दो रुपये पचास पैसे

संग्रह में लेखक की १७ व्यंग्य रचनाएं शामिल हैं. लतीफ मूल रूप से व्यंग्य कथाकार हैं और व्यंग्य लेखन में सफल भी हैं. फिर भी संग्रह की रचनाओं को पढ़ने के बाद लगता है, जितनी सफलता उन्हें मिलनी चाहिए थी; वह मिली नहीं है. इसके बावजूद, सीधी-सपाट और

लतीफ घोंघी

सरल भाषा में लिखा गया व्यंग्य स्पष्ट हो कर सामने आया है. यही कारण है कि पाठक तिलमिला उठता है.

संग्रह की पहली रचना है **'चार शीर्षकों वाला व्यंग्य'**. यह एक ही विषय को ले कर चार विभिन्न पात्रों के बीच लिखी गयी रचना है. **'घुन वाली श्रीमती'** में अमरीका के लाल गेहूं पर, **'पागल भीड़ का सिपाहसलार'** में नौकरशाही पर, **'काफी-हाउस का शिकारी'** में शिक्षित बेकार नवयुवक वर्ग पर, और **'शतरंज का पागल मोहरा'** में असफल युवा कवि पर जोरदार छींटाकशी की गयी है.

'एक संदर्भहीन चिकित्सा' में डॉ. जापानी के माध्यम से दोतरफा मार की गयी है. एक तो नीम हकीम डाक्टरों पर, जिनका पेशा पैसा कमाना है, और दूसरा उन पढ़े-लिखे और बेकार डॉक्टरों पर जो गांव में बसने से घबराते हैं.

युद्ध होता है तो साहित्यकारों खासकर कवियों की बन आती है. वे जोर-शोर से कवि-सम्मेलनों में वीर रस की कविताएं पढ़ते हैं. देश के लिए मर मिटने को तैयार हो जाते हैं; किंतु यदि उन्हें युद्ध लड़ने जाने की बात कह दी जाये, तब उनकी क्या हालत होती है—इसका यथार्थ चित्रण किया गया है **'कविवर निडर मोर्चे पर'** में.

लतीफ का व्यंग्य अंतर्मुखी है. उन्होंने व्यंग्य को सार्थक रूप दिया है. उन्होंने व्यंग्य के जिस अंश को भी छुआ है, गहरी पकड़ के साथ छुआ है.

संग्रह की सबसे चर्चित और तीखे व्यंग्य वाली रचना है **'किस्सा तीसरे बंदर का'**. **'शिक्षा दर्शन'**, **'सदाचार की बोतल'**, **'अनिवार्य परिवार नियोजन'**, **'अलादीन का चिराग'**, **'सत्यवान-यमराज संवाद'**, **'भूत सम्मेलन'**, **'आत्महत्या के पहले'** रचनाएं सामान्य कोटि की हैं.

लतीफ के व्यंग्य में ताजगी और चुभन है. कम शब्दों में बहुत कुछ कह देना लतीफ की सफलता का राज है. इनकी रचनाओं को समझने के लिए दिमागी कसरत की जरूरत नहीं पड़ती.

☐ **चेतन आर्य**

लघुकथा : दो अंक

संपादक : अश्विनी कुमार द्विवेदी; प्रकाशक : साहित्य श्री सहयोग संघ; मूल्य : ७० पैसे.

यह अपने ढंग की अकेली पत्रिका है. इस चौमासिक प्रकाशन के दो अंक सामने हैं और इन दोनों अंकों में कुल सत्ताईस लघुकथाएं हैं.

प्रवेशांक विनोबा भावे की एक तीखी लघुकथा **'शौचालय'** से प्रारंभ हुआ है. इसके अतिरिक्त अन्य अच्छी लघुकथाएं हैं—**'छुटकारा'** (रामनारायण उपाध्याय), **'पूत के पांव'** (के. पी. सक्सेना), **'अपना बच्चा'** (जार्ज मेगास), **'विद्रोह'** (पृथ्वीराज मोंगा).

'लघुकथा' का दूसरा अंक पहले की अपेक्षा अधिक सशक्त है और इस अंक की लगभग सभी लघुकथाएं ज्यादा अच्छी हैं. चयन की इस प्रगति को देख कर अगले अंकों के प्रति आश्वस्त हुआ जा सकता है.

☐ **अ. ना. मु.**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहानी की लोकप्रियता और शक्ति में उतार

• चंद्रगुप्त विद्यालंकार

कुछ अरसा पहले प्रख्यात कथाकार चंद्रगुप्त विद्यालंकार यूरोप के दौरे पर गये हुए थे. वहां विभिन्न देशों के साहित्य और साहित्यकारों की स्थितियों का उन्होंने अध्ययन किया. इस लेख में, जिसे उन्होंने स्टॉकहोम में 'सारिका' के लिए विशेष रूप से लिखा था, उन्होंने रूस और स्वीडन में कहानी की स्थिति की चर्चा की है.

पिछले छह महीनों से मैं यूरोप में हूं और कितने ही देशों के साहित्यकारों तथा बुद्धिजीवियों से विभिन्न विषयों पर बातचीत करने के अवसर मुझे निरंतर मिल रहे हैं. विचार, उद्देश्य, शैली या अभिव्यक्ति की दृष्टि से एक-दूसरे से भिन्न और कभी-कभी तो प्रतिरोधी रहते हुए भी सभी देशों के लेखक जैसे एक ही ढंग से बोलते हैं. उनकी प्रतिक्रियाएं भी लगभग एक ही प्रकार की हैं. सभी देशों के लेखक कम-अधिक एक ही तरह अपने को विश्व की प्रतिभा समझते हैं. यह अनुभूति भी अधिकांश देशों के लेखकों में एक ही समान है कि उनका उचित मूल्यांकन नहीं किया गया. पर जहां तक एक लेखक का दूसरे लेखक से संबंध है, वे एक-दूसरे को आसानी से और प्रायः अच्छी तरह समझ लेते हैं.

इस बार यूरोप आने से पहले मैं कहानी के संबंध में पूरी तरह आश्वस्त था. पिछले ५० बरसों (पहली कहानी मैंने १९२५ में लिखी थी) से मेरी यह धारणा रही है कि कहानी नामक यह नयी साहित्यिक विधा आज के विश्व की एक अत्यंत लोकप्रिय और सशक्त विधा है. मेरा यह भी खयाल था कि यह स्थिति अभी बहुत समय तक जारी रहेगी. पर इस बार मैंने कितने ही देशों में पाया कि कहानी की लोकप्रियता और शक्ति में स्पष्ट रूप से भाटा प्रारंभ हो गया है.

इस संबंध में विविध देशों में भिन्न-भिन्न स्थिति है. यहां मैं सिर्फ दो सीमांत उदाहरण ले रहा हूं. रूस और स्वीडन. वर्तमान कहानी के विकास में रूस का योगदान सब से अधिक महत्वपूर्ण है. आज भी रूस में कहानी के पाठक लाखों बल्कि करोड़ों में हैं. पर वहां भी कहानी की अपेक्षा नाटक कहीं अधिक सशक्त और लोकप्रिय विधा बन गयी है. अन्य देशों में यह उतार या भाटा और भी अधिक स्पष्ट रूप से दिखायी देता है. सब से अधिक स्वीडन में.

स्वीडन प्रति वर्ष साहित्य का नोबेल पुरस्कार देता है और वहां की 'स्वीडिश अकादमी' साहित्य की श्रेष्ठता मापने के मानदंडों का निर्माण करने का प्रयत्न करती है. उसी स्वीडन में आज 'कहानी' बहुत अंशों तक एक उपेक्षणीय साहित्यिक विधा बन गयी है. स्थिति यहां तक पहुंच गयी है कि यदि कोई नया लेखक कहानी लिखता है, तो वह सिर्फ स्वांतः सुखाय. इसकी संभावना पांच प्रतिशत ही है कि वह कहीं छप पायेगी. नये कहानी-संग्रह प्रकाशित नहीं हो रहे हैं. नोबेल पुरस्कार विजेता मार्टिन्सन के १९३५ के आसपास लिखी गयी कहानियों के संग्रह आज भी छप रहे हैं. पर अन्य कहानी लेखकों को प्रकाशक नहीं मिलता.

भारत में भी हिंदी प्रकाशक बहुत कम कहानी-संग्रह छापते हैं. अच्छे कहानी-संग्रह की अपेक्षा वे घटिया उपन्यास छापना कहीं अधिक पसंद करते हैं. पर फिर भी हिंदी कहानी-लेखकों के लिए कितने ही मार्ग खुले हैं. हिंदी में कितनी ही अच्छी मासिक कहानी पत्रिकाएं हैं. अन्य भारतीय भाषाओं में भी कम-अधिक यही स्थिति है. पर स्वीडन में ऐसा नहीं है. यहां सिर्फ एक अच्छी साहित्यिक पत्रिका है, जिसमें प्रति मास ४०० पृष्ठ रहते हैं. पर यह पत्रिका प्रायः सिर्फ एक स्वीडिश कहानी छापती है. पांच बड़े दैनिक पत्र हैं जो अपने साहित्यिक संस्करण में एक-एक कहानी छापते हैं. वह भी नियमित रूप से नहीं. बड़े आकार के २६ से ६४ पृष्ठ इन पत्रों में प्रति दिन रहते हैं. खेलों के समाचार लगभग चार पृष्ठ प्रति दिन. वे चाहें तो प्रति दिन एक कहानी छाप सकते हैं. स्त्रियों, बच्चों आदि के पत्र स्वीडन में अच्छी संख्या में मिलते हैं. उनका स्तर भी बहुत अच्छा है. पर कहानियों में उन्हें रुचि नहीं है. विज्ञान, शिक्षा, व्यापार, व्यवसाय आदि के संबंध में बहुत ही ऊंचे स्तर के पत्र स्वीडन में प्रकाशित होते हैं. पर साहित्य उनका क्षेत्र नहीं है. ऊंचे व्यवसायपतियों की एक बहुत सुंदर पत्रिका प्रकाशित होती है, जो छपाई आदि की दृष्टि से विश्व की सबसे श्रेष्ठ पत्रिकाओं में है (मूल्य एक प्रति अठारह रुपये.) वह एक कहानी प्रति अंक में जरूर देती है. सिर्फ एक.

मैंने इस संबंध में प्रकाशकों से बातचीत की, तो उन्होंने वही उत्तर दिया, जो भारतीय प्रकाशक देते हैं—कहानी-संग्रह बहुत कम बिकते हैं. उनकी अपेक्षा तो वैज्ञानिक तथा तकनीकी ग्रंथ भी बहुत बड़ी संख्या में बिकते हैं (भारत में ऐसा नहीं है.) पत्र-प्रकाशकों से मैंने यह जानना चाहा कि वे साहित्यिक पत्र क्यों नहीं निकालते. उनका कहना है कि साहित्यिक पत्र प्रकाशित करना सबसे अधिक खर्चीला काम है. सभी कहानी-लेखक, कवि तथा साहित्यकार अपनी रचनाओं के लिए बहुत बड़ी राशि मांगते हैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्यकार अपनी पुस्तकों द्वारा बहुत बड़ी राशि अर्जित करते हैं (देश भर के हजारों पुस्तकालयों से पाठक जिनकी पुस्तकें ले कर पढ़ते हैं, उनका पूरा हिसाब रखा जाता है.) गत वर्ष पुस्तकालयों से ले कर साढ़े पांच करोड़ पुस्तकें पढ़ी गयीं. प्रति पाठक प्रति बार के लिए राष्ट्र मूल लेखक को ४५ पैसा देता है. एक पुस्तक एक वर्ष में एक लाख पाठकों ने पढ़ी तो लेखक को ४५००० रुपया मिलेगा, उसकी तुलना में सामयिक साहित्यिक पत्र उन्हें कुछ दे नहीं पायेंगे.

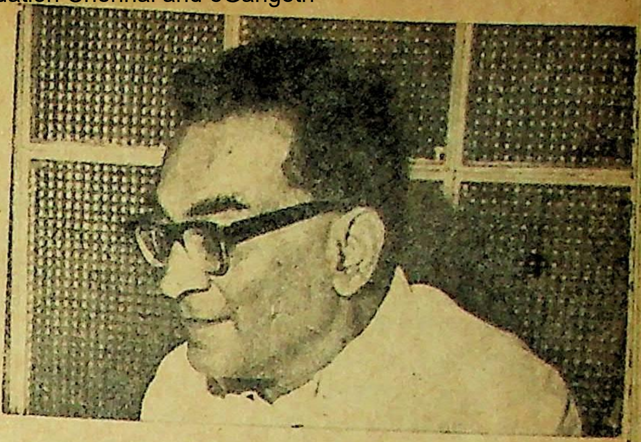
चंद्रगुप्त विद्यालंकार

* *

आखिर वे कारण क्या हैं, जिन्होंने स्वीडन-से प्रबुद्ध देश को 'कहानी' जैसी समर्थ, सुंदर और दिलचस्प विधा से इस हद तक विमुख कर दिया है. आज कितने ही स्वीडिश लेखक भी यह अनुभव कर रहे हैं कि यही स्थिति रही तो इस देश में कहानी का पूरी तरह ह्रास हो जायेगा.

किस्से-कहानियां साहित्य की सब से प्राचीन विधा हैं और हमें मानना चाहिए कि उन्हीं से १९वीं सदी के मध्य में वर्तमान कहानी का जन्म हुआ. यह भी ठीक है कि तब तक मानव जाति इतनी जागरूक हो गयी थी कि इस नये माध्यम की ओर विश्व भर का ध्यान आकृष्ट हुआ और तीव्र गति से 'कहानी' विकसित होती चली गयी. स्पष्टतः 'कहानी' नामक इस नये माध्यम में कुछ ऐसी कलापूर्ण नवीनता थी, जो किसी अन्य माध्यम में नहीं थी. यह नवीनता क्या थी?

कहानी द्वारा सिर्फ एक भाव का चित्रण किया जाने लगा. जितना अनोखा भाव होगा और उसका जितना कलापूर्ण चित्रण होगा, कहानी उतनी ही अच्छी होगी. दूसरे शब्दों में किसी तरह का गुथीलापन कहानी में बरदाश्त नहीं होगा. स्थिति यहां तक पहुंची कि यह माना जाने लगा कि कहानी में एक वाक्य भी ऐसा नहीं रहना चाहिए, जो उसके केंद्रीय भाव के चित्रण में सहायक न हो.

और इस तरह शीघ्र ही कहानी नामक यह नया माध्यम सबसे कठिन साहित्यिक विधा बन गया. यानी अच्छी कहानी एक अत्यंत दुष्प्राप्य वस्तु बन गयी. अच्छे और प्रामाणिक आलोचकों का कहना है कि जिन दिनों कहानी सबसे अधिक लोकप्रिय विधा थी, उन दिनों भी बहुत अच्छी और पूरी तरह निर्दोष कहानियां बहुत कम लिखी गयीं. यानी कि एक तरफ कहानियां सबसे अधिक लिखी और पढ़ी जा रही थीं, दूसरी तरफ यह भी माना जा रहा था कि अच्छी तथा निर्दोष कहानियां उंगलियों पर गिनी जा सकती हैं. इस स्थिति का वही परिणाम हुआ, जो स्वाभाविक था. यानी विश्व के सैकड़ों कहानी-लेखकों द्वारा कहानी की स्वीकृत तकनीक के खिलाफ विद्रोह.

'विद्रोह' की जगह सिर्फ 'अस्वीकृति' कहना अधिक उपयुक्त होगा. अधिकांशतः इस अस्वीकृति का रूप यह था कि 'कहानी' नाम से चाहे जो कुछ लिखा जाने लगा. शुरू-शुरू में यह कोशिश भी हुई कि कहानी की स्वीकृत तकनीक की उपेक्षा करके कुछ ऐसा लिखा जाये, जो पाठकों को ग्राह्य हो. कुछ समझदार लेखकों को इस प्रयत्न में असाधारण सफलता मिली. उन्होंने कहानी के नाम से जो कुछ नये ढंग से लिखा, उसमें असाधारण ताजगी थी. पर बहुत शीघ्र यह स्थिति आ गयी कि 'कहानी' के नाम पर जो कुछ लिखा जाने लगा, उसका खासा बड़ा अंश ऐसा था कि उसकी अपेक्षा कोई सीधा-सादा निबंध या किसी तरह की जानकारी देने वाला लेख पाठकों को कहीं अधिक पसंद आने लगा और इस तरह कहानियों की मांग बहुत कम हो गयी.

पर एक बात आप याद रखें. कहानी मानव-इतिहास की सबसे पुरानी साहित्यिक विधा है—किस्से-कहानी के रूप में. मानव ने जब चित्रलिपि द्वारा पहली बार कुछ कहना चाहा तो उसने एक अर्थपूर्ण किस्सा ही अभिव्यक्त किया था. सिर्फ साहित्य ही नहीं, चित्रकला, संगीत और नृत्य को भी पृष्ठभूमि इन्हीं किस्सों-कथानकों ने दी. साहित्य में कथातत्व सदा समादृत रहेगा. साहित्य में चाहे कितनी ही नयी विधाओं का प्रादुर्भाव हो, अच्छी कहानी, चाहे वह किसी रूप में लिखी जाये, सहृदय पाठकों को सदा पसंद आयेगी.

साहित्यिक विधाओं की सुरक्षा और साहित्यकारों के हितचिंतन के लिए स्वीडिश सरकार ने पिछले दो वर्षों से एक शाही कमीशन नियुक्त किया हुआ है. उक्त चर्चा के बाद मैं शाही कमीशन के एक प्रमुख सदस्य से मिला. उनका कहना है कि कहानी की लोकप्रियता और शक्ति में जो उतार विश्व भर में है, उसका यह सही विश्लेषण है. पर जहां तक स्वीडन में कहानी के भविष्य का संबंध है, शाही कमीशन ने ऐसे उपायों की सिफारिश की है, जिनसे कहानी समादृत रहेगी. □□□

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मिर्ज़ा ग़ालिब : कुछ भूलें, कुछ भ्रांतियां

● प्रकाश पंडित

१९६९ में मिर्जा असदउल्लाखां 'गालिब' की शताब्दी भारत और पाकिस्तान में ही नहीं, अमेरिका और योरुप में भी मनायी गयी. हमारे यहां उस समय डाक्टर जाकिर हुसेन राष्ट्रपति थे; जिन्होंने जर्मनी में अपने शिक्षा-काल में पहली बार 'दीवान-ए-गालिब' टाइप में छपवाया था. (और मुझे बताया था कि आज गालिब का ऊंची टोपी वाला जो चित्र सबसे अधिक प्रचलित है वह भी उन्होंने वहीं के एक आर्टिस्ट से अनुमान के आधार पर बनवाया था जो सरासर गलत, यानी जाली है.)

गालिब शताब्दी मनाने के लिए जिस राष्ट्रीय समिति का गठन हुआ था उसके संरक्षक स्वयं जाकिर साहब थे. अध्यक्ष प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी तथा प्रधान सचिव केंद्रीयमंत्री श्री फखरुद्दीन अली अहमद.

इसी शताब्दी के वर्ष में अचानक एक दिन गालिब के कलाम का एक नुस्खा (हस्तलिखित पांडुलिपि) भोपाल में 'प्रकट' हुआ तथा भारत और पाकिस्तान के 'गालिब-विशेषज्ञ' तुरंत इस निर्णय पर पहुंच गये कि यह नुस्खा स्वयं 'गालिब' के हाथ का लिखा हुआ है. इस नुस्खे के प्रकटन या दर्याफ्त की कहानी यों है कि हैदर पठान नाम के एक कबाड़ी ने यह नुस्खा कौड़ियों के मोल 'शफीफ' भोपाली के हाथ बेचा. अमरोहा के एक दुर्लभ वस्तुओं के व्यापारी तौफीक अहमद जब भोपाल गये तो 'शफीफ' भोपाली ने वह नुस्खा दस रुपए कुछ पैसों में यह कह कर उन्हें बेच दिया कि—तुम भी क्या याद करोगे, क्या चीज दे रहा हूं. यह मिर्जा गालिब की अपने हाथ से लिखी हुई बयाज (कविता की कापी) है.

तौफीक अहमद नुस्खा ले आये और दिल्ली के एक समाचार पत्र में उस नुस्खे के मिलने की घोषणा एक विज्ञापन के रूप में करवायी और लिखा कि उसे चार हजार रुपये से कम में नहीं बेचूंगा. फिर कीमत छह हजार मुकर्रर कर दी. इस दुर्लभ नुस्खे की दर्याफ्त के बारे में अखबारों के अतिरिक्त रेडियो पर भी खबरें आयीं. इलाहाबाद में उत्तर प्रदेश आर्कयूज के जलालुद्दीन साहब को इस नुस्खे के पहले और अंतिम पृष्ठों के फोटो प्राप्त हुए तो उन्होंने शायद इतिहास में अपना नाम लिखवाने के लिए कि सबसे पहले उन्होंने ही उस नुस्खे के गालिब के हस्तलिखित होने की पुष्टि की थी, असल नुस्खे की स्याही और कागज को आधुनिक वैज्ञानिक उपकरणों द्वारा जांचे बिना ही घोषणा कर दी कि वह नुस्खा गालिब ही का हस्तलिखित है.

तौफीक साहब के एक हमवतन निसार अहमद फारुकी से भी उस नुस्खे को गालिब का हस्तलिखित सिद्ध करते हुए लेख लिखा डाला. लेकिन निसार अहमद फारुकी

मिर्जा गालिब का प्रचलित चित्र : क्या यही प्रामाणिक है?

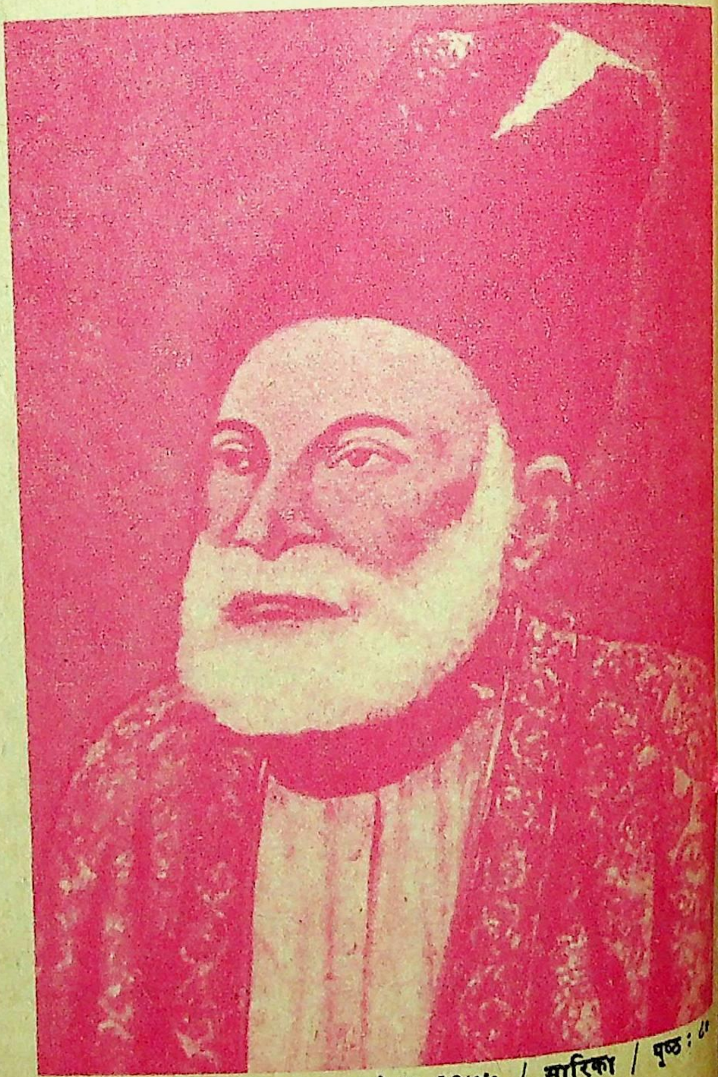

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चूंकि 'गालिब-विशेषज्ञ नहीं थे'; इसलिए गालिब-विशेषज्ञों—इम्तियाजअली खां अर्शी और मालिक राम साहब ने महसूस किया कि यह उनके क्षेत्र में घुसपैठ हो रही है. अर्शी साहब द्वारा संपादित **'दीवान-ए-गालिब'** (नुस्खा-ए-अर्शी) पर साहित्य अकादमी पुरस्कार मिल चुका है; यद्यपि उसमें **'अप्रैल फूल'** के शीर्षक से एक ऐसी नज्म भी शामिल है जिसमें गालिब ने भोपाल में कुछ दिन और रहने की इच्छा व्यक्त की थी. गालिब कभी भोपाल नहीं गये और यह नज्म एक कालेज की मैगजीन में किसीने मजाकन छपवा यी थी. इसी प्रकार अब्दुलबारी 'आसी' ने गालिब के रंग में जो गजलें लिख कर एक बयाज से 'बरामद' की थीं' वे भी इस नुस्खा-ए-अर्शी में शामिल हैं. मालिक राम साहब ने भी **'दीवान-ए-गालिब'** का संपादन किया है; जिसकी विशेषता यह है कि गालिब के जमाने से अब तक जितनी गलतियां **'दीवान-ए-गालिब'** के विभिन्न संस्करणों में छपी हैं, वे सबकी सब एक जगह यानी मालिक राम साहब द्वारा संपादित **'दीवान-ए-गालिब'** में सिमट आयी हैं. अतएव गालिब के इन दो महाविशेषज्ञों ने भी इस नुस्खे को गालिब की लिखावट में होने का 'फतवा' दे दिया.

लेकिन इन महाविशेषज्ञों के इस विषय में लेख छपने से पूर्व ही इस नाटक में एक और एक्ट की वृद्धि हो गयी. दिल्ली नेशनल आर्क्यूज के एक उच्चाधिकारी को, जिन्होंने गालिब के सिलसिले में एक महत्वपूर्ण पुस्तक के अतिरिक्त कई महत्वपूर्ण लेख भी लिखे हैं, (वह नहीं चाहते कि अभी इस बखेड़े में उनका नाम लिया जाये) एक दिन एक केंद्रीय मंत्री के यहां से फोन आया कि वह मंत्री महोदय के यहां आ कर एक नुस्खा के बारे में अपनी राय दें. उन्होंने पूछा—वह नुस्खा नई दर्याफ्त 'बयाज-ए-गालिब' तो नहीं है? उत्तर मिला—वही है.—तब मैं क्षमा चाहता हूं, उन्होंने कहा—'मेरे

कमाल अहमद सिद्दीकी

लिए वहां आ कर कोई राय देना व्यर्थ है. आर्क्यूज में पांडुलिपि दाखिल करके फीस जमा करा कर जांच करानी होगी. कागज, स्याही और लिखावट की विभिन्न एक्सपर्ट जांच करेंगे और माल असली हुआ तो सर्टिफिकेट जारी कर दिया जायेगा.

इस उत्तर के बाद नुस्खा आर्क्यूज में नहीं भेजा गया. इस नुस्खे के विषय में उर्दू, हिंदी और अंग्रेजी पत्र-पत्रिकाओं में बहुत कुछ लिखा गया है लेकिन आर्क्यूज के एक उच्चाधिकारी पर दबाव डाल कर उसे फांसने और उसे अलीगढ़ विश्वविद्यालय के प्रोफेसर बशीरुद्दीन द्वारा (जो भारत भर की लाइब्रेरियों की परिषद् के अध्यक्ष और अपने काम के बहुत बड़े माहिर हैं) अलीगढ़ विश्वविद्यालय की लाइब्रेरी के हाथ बेचने में असफल होने की बात अभी तक किसी पत्र-पत्रिका को मालूम नहीं थी. प्रोफेसर बशीरुद्दीन ने ही नुस्खा बेचने वाले को दिल्ली आर्क्यूज से माल के असली होने का प्रमाणपत्र लाने को कहा था और जिसके लिए एक केंद्रीय मंत्री ने दिल्ली आर्क्यूज के उस उच्चाधिकारी को फोन करवाया था.

यह सब हो जाने के बाद अर्शी साहब ने इस नुस्खे के साथ अपना नाम जोड़ने के एवज तौफीक साहब से अनुबंध किया कि वह उनके बेटे अकबर अली खां की साझेदारी में उस नुस्खे को फोटो आफसेट से छपवायें. यों अकबर अली खां रातों-रात 'अर्शी-जादा' बन गये और उन्होंने उसे **'दीवान-ए-गालिब नुस्खा-ए-अर्शीजादा'** बना कर छाप डाला और भारत सरकार की ओर से उपराष्ट्रपति श्री पाठक द्वारा बेहतरीन छपाई का पदक भी प्राप्त कर लिया. उधर मालिक राम और निसार अहमद फारुकी साहब भी सक्रिय रहे. उन्होंने इसके असली माल होने की सनद जारी करने की कीमत यों वसूल की कि किसी प्रकार उसके फिल्म पाकिस्तान भिजवा दिये और वहां से मासिक पत्र **'नुकूश'** (लाहौर!) का गालिब नंबर (विशेषांक) प्रकाशित हो गया जिसमें इस नुस्खे के फोटो प्रिंट को **'बयाजे-गालिब-ए-खते-गालिब'** कहा गया और जिसके संपादक के रूप में निसार अहमद फारुकी का नाम प्रकाशित किया गया. ये प्रिंट पाकिस्तान कैसे पहुंचे और इस आरोप का भी खंडन नहीं किया गया कि निसार अहमद फारुकी को जो पुष्प-पत्र या पारिश्रमिक (शायद लाखों में) मिला, वह फारेन एक्सचेंज कहां है? भारत सरकार तथा गालिब समिति के पदाधिकारियों को इसकी कुछ भी खबर नहीं है. **नुस्खा-अर्शीजादा** की कीमत तीन सौ रुपये रखी गयी थी और **'नुकूश'** के विशेषांक की चालीस रुपए—जो कड़ी पाबंदियों के बावजूद हजारों की संख्या में भारत आ कर सौ रुपये प्रति अंक के हिसाब से बिका.

अब तक यह एक एक्ट का नाटक था लेकिन दृश्य भिन्न थे. अब इस नाटक का दूसरा एक्ट शुरू हुआ. रामपुर और लाहौर के नुस्खे बाजार में आये तो उर्दू साहित्य के कुछ काफिरों को संदेह हुआ कि यह माल खरा है या खोटा. अलीगढ़ विश्वविद्यालय के एक लेक्चरार अंसार उल्ला 'नजर' और श्रीनगर में कमाल अहमद सिद्दीकी (प्रोड्यूसर रेडियो, कश्मीर) ने खोजबीन शुरू की. 'नजर' साहब ने इस विषय में अंजुमन तरक्की-ए-उर्दू के पत्र **'हमारी जबान'** (अलीगढ़) में विरोध प्रकट किया. लेकिन कमाल अहमद सिद्दीकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ने किसी पत्र-पत्रिका में कुछ लिखने की बजाय २०×३० साइज की ४८८ पृष्ठ की एक पूरी थीसिस **'बयाज-ए-गालिब'** लिख डाली जो कई कारणों से १९६९ की बजाय १९७१ में प्रकाशित हो सकी और उसमें तरह-तरह के सैकड़ों उदाहरणों द्वारा यह सिद्ध कर दिया कि वह बयाज बड़ी होशियारी से लिखी जाने के बावजूद सरासर जाली है.

अब जरा इस जाल को भी समझें जो भोपाल से खोजी गयी इस बयाज में किया गया है.

इसे गालिब की सर्वप्रथम बयाज बताया गया है. और इसके अंत में दिन, दिनांक, समय सब कुछ लिखा है लेकिन सन् छोड़ दिया गया है. प्रत्येक पृष्ठ पर संशोधन मौजूद हैं लेकिन छूटा हुआ सन् नहीं भरा गया; जो जंत्री के हिसाब से १२३५ हिजरी निकलता है. उस समय गालिब की आयु १९ वर्ष की थी. इसके अतिरिक्त इस बयाज के सभी मक्तों में 'असद' उपनाम का प्रयोग किया गया है और बहुत से मक्तां के मिस्रों (पंक्तियों) को बाद में बदल कर 'गालिब' उपनाम डाला गया है.

कमाल अहमद सिद्दिकी ने अपनी पुस्तक में उमदए-मुंतखबा (तजकिरा-ए-सरवर) के उद्धरण प्रस्तुत किये हैं जो १२१५ हिजरी में शुरू हो कर १२२४ में पूर्ण हुई थी और जिसमें 'गालिब' उपनाम के मक्ते मौजूद हैं.

एक शायर 'असद' मीर अमानी थे; जिनका देहांत गालिब के जन्म से बहुत पहले हो चुका था. उनकी एक गजल पर मियां हिदायत जी ने एक खम्सा कहा था (तीन मिस्रे हिदायत जी के और दो 'असद' मीर अमानी के) हिदायत जी का देहांत उस समय हुआ था जब 'गालिब' की आयु तीन वर्ष की थी. हिदायत जी ने 'असद' मीर अमानी की जिस गजल पर खम्सा लिखा था उसका शेर है :—

दिले-बेताब कि सीने में दमे-चंद रहा
ब-दमे चंद गिरफ्तारे-गमे-चंद रहा

और यह गजल तथाकथित 'दर्याफ्तशुदा' बयाज में मौजूद है.

'असद' मीर अमानी के एक शेर को असदउल्ला खां 'गालिब' की शेर समझ कर जब एक साहब ने गालिब को दाद दी थी तो गालिब ने कहा था— 'यह शेर किसी और 'असद' का हो तो उस पर खुदा की रहमत हो और अगर मेरा हो तो मुझ पर खुदा की लानत हो.

इस नुस्खे में एक मसखरापन यह भी है कि न केवल गालिब के लिए नयी गजलें लिख कर इसमें शामिल कर दी गयी हैं बल्कि शेरों को उनकी शक्ल बिगाड़ कर लिखा गया है ताकि यह सिद्ध किया जा सके कि पहले गालिब ने यों लिखा था और बाद में यों कर दिया. इस सिलसिले में एक गलती हुई है :

शुरू-शुरू में गालिब पर मिर्जा 'बेदिल' छाये हुए थे; अतएव कई स्थानों पर गालिब ने अपने शेरों में मिर्जा 'बेदिल' की प्रसंसा की है और एक पूरी गजल बेदिल के मिस्रे पर लिखी है और मक्ते में 'बेदिल' के मिस्रे पर मिस्रा लगाया है. जिन लोगों ने जाली पांडुलिपि तैयार की, वे यह नहीं जानते थे कि मक्ते का दूसरा मिस्रा स्वयं बेदिल का था. उन्होंने उसे भी बिगाड़ कर लिख दिया ताकि दिखाया जाये कि गालिब ने पहले यों कहा था.

बेदिल का मिस्रा है :—

आलम हमा अफसाना-ए-मादारद-ओ-माहेच

लेकिन यह यों लिखा गया :—

आलम हमा अफसाना-ए-माबाशद-ओ-माहेच

'गालिब' के दीवान का सबसे प्राचीन नुस्खा जो १२३७ हिजरी में नकल हुआ था, 'नुस्खा-ए-भोपाल' है. इसके पांच-छह वर्ष बाद जो दीवान नकल हुआ, 'नुस्खा-ए-शीरानी' है. नुस्खा-ए-भोपाल और नुस्खा-ए-शीरानी के कलाम में थोड़ा-बहुत अंतर है क्योंकि नुस्खा-ए-शीरानी, नुस्खा-ए-भोपाल का संशोधित रूप है; इसलिए नुस्खा-ए-शीरानी में मिस्रों की जो पढ़त है, वह नुस्खा-ए-भोपाल के बाद के किसी नुस्खे में तो हो सकती है लेकिन नुस्खा-ए-भोपाल से पहले के किसी नुस्खे में नहीं हो सकती. और अहमद सिद्दीकी ने डेढ़-दो सौ

गालिब का प्रामाणिक हस्तलेख

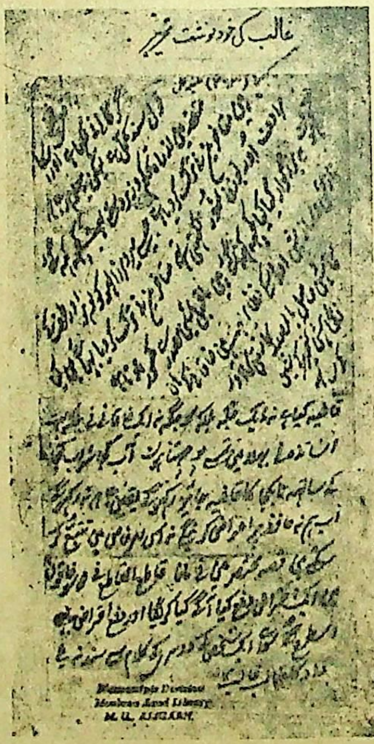

कमाल ने बेदिल के रंग में शेर लिखे और न जाने किसके हाथ से किताबत करवायी.

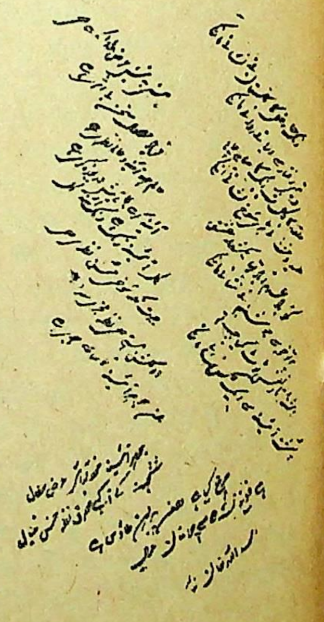

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

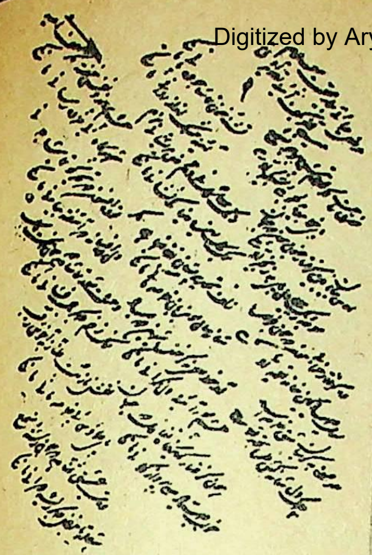

'दर्याफ्तशुदा' बयाजे-गालिब का हस्तलेख

मिस्रे इस जाली बयाज में ऐसे दिखाये हैं जो नुसखा-ए-भोपाल की बजाय नुस्खा-ए-शीरानी के मुताबिक हैं. अर्थात मिर्जा गालिब ने १२३१ हिजरी में जो मिस्रा लिखा, १२३७ में उसमें संशोधन किया और वह नुस्खा-ए-भोपाल में लिखा गया. फिर पांच-छह वर्ष बाद उसमें संशोधन किया और वह १२३१ की पढ़त पर वापस आ गये. चार-छह मिस्रे ऐसे होते तो संदेह का लाभ दिया जा सकता था लेकिन थोक में ऐसा कोई दीवाना ही कर सकता था. और मिर्जा गालिब चूंकि दीवाने नहीं थे इसलिए गालिब शताब्दी के वर्ष में जो बयाज दर्याफ्त की गयी वह जाली थी. कमाल अहमद सिद्दीकी की पुस्तक में एक बात और मिली है कि उन्होंने मिर्जा गालिब के 'बेदिली' रंग में स्वयं कुछ शेर लिख कर और उन्हें तथाकथित 'बयाजे-गालिब-बखते-गालिब' की तर्ज पर न जाने किसके हाथ से लिखवा कर अपनी पुस्तक के अंत में शामिल कर दिया है. देखिए गालिब का असली हस्तलेख, नकली हस्तलेख और फिर आज के किसी कालिब का हस्तलेख और निर्णय कीजिए कि दर्याफ्तशुदा बयाज को गालिब ही की हस्तलिखित सिद्ध करने वाले महानुभावों ने किस प्रकार देश और जाति को मूर्ख बनाने का दुस्साहस किया है. □□□

समांतर रंगमंच

'प्रतिध्वनि' द्वारा 'फंदी' का सफल मंचन

हिंदी के समांतर रंगमंच की एक इकाई उत्तरप्रदेश की प्रमुख नाट्य संस्था 'प्रतिध्वनि' (कानपुर) ने विगत २७ और २९ अप्रैल १९७५ को दो बार कानपुर के यू. पी. मर्चेंट्स चेंबर के प्रेक्षागार में ख्यातिलब्ध नाटककार डा. शंकर शेष '(बंबई) के समस्यामूलक नाटक 'फंदी' का अत्यंत सफल मंचन कर समांतर रंगमंच की क्षमताओं और संभावनाओं को उजागर किया. नाटक के निर्माता थे 'प्रतिध्वनि' के अध्यक्ष श्री ललित मोहन अवस्थी और निर्देशन श्री विजय दीक्षित ने किया था.

मानवीय संवेदना से भरपूर 'फंदी' में नाटककार ने इस पेचीदा समस्या को उठाया है कि कानून मनुष्य के लिए है या मनुष्य कानून के लिए है? और यह कि, सामाजिक परिवर्तन के साथ यदि कानून पत्थर की भांति जड़ बना रहता है तो समय की अपेक्षाएं वह कैसे पूरी कर सकता है? इस पेचीदा सवाल

को केवल तीन पात्रों के माध्य[म] से पेश कर नाटककार प्रत्येक प्रेक्ष[क] की मानसिकता को अपने पक्ष [में] खींच लेता है. अपने प्रथम प्रया[स] में ही निर्देशक विजय दीक्षित [ने] पीर गुलाम सिंह (प्रकाश-व्यवस्था) और ओम प्रकाश अवस्थी (ध्व[नि] एवं संगीत) के सहयोग से नाट[क] को अत्यंत सादे और सांकेति[क] मंच-सज्जा के माध्यम से सफलत[ा]पूर्वक प्रस्तुत कर सभी को चम[त्]कृत कर दिया.

फंदी (के. कुमार) और वकील (अशोक गोस्वामी) की भूमिकाएं जीवंत ढंग से अभिनीत की गयीं. दोनों कुशल कलाकारों [ने] अन्य पात्रों की भूमिकाएं भी स्वर पात्रानुकूल प्रस्तुत कीं. अशोक गोस्वामी ने बैरिस्टर गंगानाथ तथा के. कुमार ने पठान, फंदी की स्त्री मित्र आदि की भूमिकाएं पूर्ण भावमयता और यथार्थता के साथ प्रस्तुत कीं.

इस अवसर पर 'आम्रपाली' द्वारा आयोजित त्रिदिवसीय नाट्य-समारोह के अंतर्गत आयोजित नाट्य-गोष्ठी में श्री ललित मोहन अवस्थी ने समांतर रंगमंच के उद्देश्य, नीतियों, स्वरूप, क्षमता और संभावनाओं की विस्तृत व्याख्या प्रस्तुत की.

□ उपमन्यु

'फंदी' का एक दृश्य—(बायें से) अशोक गोस्वामी (वकील), फंदी (के. कुमार) और वार्डर (माली).

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ड्रेनेज का ढक्कन खुला होगा क्योंकि वह बाहर आया है और ऊपर आते-आते गटर की बासी गंध भी उसके साथ-साथ आयी है.

निश्चय ही नीचे ड्रेनेज में उसे कितना गरम सुखद अनुभव हो रहा था. फिर भी उसकी इच्छा बाहर आने की हुई और वह आ गया. हो सकता है, बाहर आने का कारण ढक्कन का खुला रहना हो या किसी ने उस ड्रेनेज के ढक्कन को खुला छोड़ा हो. कोई अज्ञात सार्वभौम शक्ति ही उसके बाहर आने का कारण रही.

चाहे कुछ भी हो, बाहर आने की उसे इच्छा हुई और वह निकल आया. जो कुछ सत्य है, वह इतना ही है.

प्रारंभ में एकदम बाहर की खुली गहरी हवा में उसे ठीक तरह से सांस लेने में कठिनाई हुई. अंदर ड्रेनेज की घुटन से वह भली-भांति परिचित था. इस खुली हवा में सांस लेने से उसे दम चढ़ने लगा. इधर उसकी दृष्टि भी बहुत ही क्षीण हो चुकी थी. उसकी आंखें बाहर के स्फटिक सदृश्य स्वच्छ प्रकाश की अभ्यस्त नहीं थीं इसलिए ग्लीसीरीन लगाने के समान उसकी आंखों से निरंतर पानी बहने लगा.

शर्ट की बांह से उसने आंखें पोंछी. बार-बार पोंछी. शर्ट तो सिर्फ नाममात्र का था. उसकी कब की धज्जियां उड़ गयी थीं और उसमें पुता था गटर का काला गंदा रंग. पैंट फटे तो शायद वर्ष बीत चुका था. शरीर पर केवल अंडरपैंट ही थी. लेकिन इससे उसे क्या? वैसे उसका सब कुछ ठीक ही था. अंदर की ड्रेनेज की सड़ान भरी हवा से उसकी चमड़ी पीली स्पंज के समान गिलगिली बन गयी थी. दांत कब के गिर चुके थे. भौंहें गल गयी थीं. आंखें पथरीली, ठंडी, निस्तेज हो गयी थीं. हमेशा रेंगते-रेंगते पीठ में अजीब-सा कूबड़ उठ आया था. लेकिन नाखून अधिक बढ़े हुए न थे क्योंकि वह उन्हें हमेशा अंदर पाइप की किनार पर घिसता रहा था.

नीचे गटर में अल्प मात्रा में बहता हुआ गरम पानी उसे अच्छा और हल्का लगता था, किंतु बाहर की यह कड़ी धूप उसे सहन नहीं हो रही थी. अभी दोपहर का समय ही होगा पर इस धूप की गर्म लू उसके शरीर को झुलसा रही थी.

ड्रेनेज के ढक्कन पर वह संभल कर बैठ गया. उसके पैर अभी भी ड्रेनेज में नीचे लटक रहे थे और वह वैसे ही बैठा रहा.

उसका इस प्रकार बैठना आवश्यकता पड़ने पर वापस ड्रेनेज में उतरने के लिए अच्छा था. लेकिन घबराने के लिए कोई कारण नहीं था. धूप भरी सड़क लंबे-चौड़े अजगर के समान फैली थी. धूप निर्बाध तपती जा रही थी. दूर के पेड़ अपनी परछाइयों से हलकी-हलकी कानाफूसी कर रहे थे.

उसे अचानक अनुभव हुआ, अब मुझे खड़ा रहना चाहिए. लेकिन पिंडलियों में अजीब-सा दर्द भरा हुआ है. खड़ा रहना कठिन हो रहा था. वह अपने घुटने टिका कर सड़क पर संभल कर बैठा रहा. ड्रेनेज में हर समय रेंगते रहने के कारण उसके घुटने फूटे हुए थे इसलिए घुटना में दर्द होना चाहिए था. किंतु ऐसा कुछ हुआ नहीं, गरम तारकोल का लेप और धूल जख्म पर जमा होने लगी और सेंक के कारण उत्तेजना भी आने लगी.

• राजनारायण शर्मा

अमीबा

• अनिल डांगे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

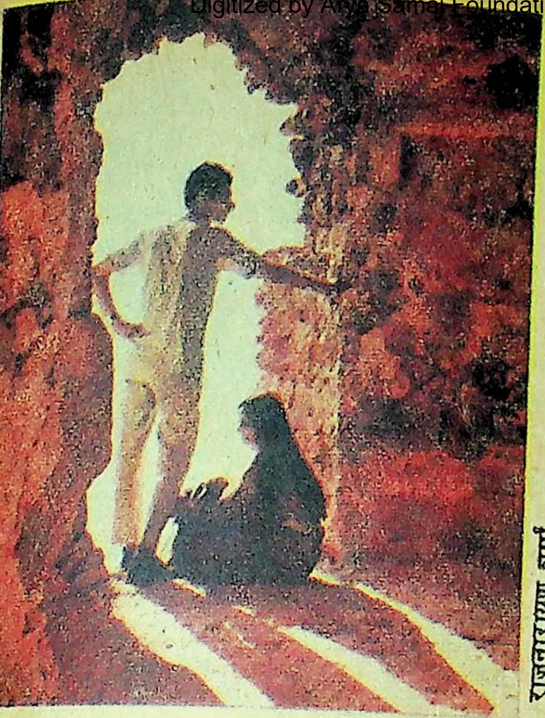

राजनारायण शर्मा

उसने दृष्टि ऊपर घुमाई. ऊपर याने ऊपर आकाश की ओर. ऊपर तश्तरी के समान सूर्य और आकाश का गोरा गुंबज उसे अधखुले बड़े स्तनों जैसा बेढंगा-सा दीख रहा था. उसे यह प्रकाश और विस्तृत आकाश विचित्र, अश्लील लगने लगा. क्या साला! एकदम नंगा खुला उजाला. सब नंगा मुक्त परिवेश. थोड़ी भी प्रायवेसी नहीं. थोड़ी भी आड़ नहीं. सभी कुछ प्रकाशमय, ऐसे आंखें झुलसने वाले प्रकाश के सन्मुख आत्मसमर्पण करने वाला. सभी किस प्रकार प्रकाश के सामने हताश, निष्प्रभ बने हुए हैं. पूरा आकाश सस्ता और सार्वजनिक...

अचानक बीच में ही अब काई के समान हवा की आंधी आयी. सूखे पत्ते, धूल, तिनके आदि उसके गिर्द नाचकर चलते बने. आंखों में धूल भर गयी, नाक और गले में भी. वह थूका. बहुत दिनों बाद उसने पहली बार थूका था. ड्रेनेज में कभी खकारना, थूकना नहीं पड़ता था. नीचे ड्रेनेज में ऐसा तीखापन लिये धूल कहां थी. सभी कैसा शांत पारदर्शक.

उसने फिर अंगूठे से आंखें साफ की और सामने ठीक तरह से देखा. उसे थोड़ा-सा आश्चर्य हुआ. हवा के साथ उसके सामने कागज के एक-दो टुकड़े आ गिरे जैसे किसी ने खास संदेश भेजा हो. किसने भेजा होगा? अभी कौन ऊपर बाकी बचा है? और कौन? और कौन?

लगता है, उसे इस समय तक तेज प्रकाश की आदत हो गयी क्योंकि आंखें ठीक तरह से खोलने आ रही थीं. उसे उठकर खड़े रहने की तीव्र इच्छा हुई. लेकिन वैसा वह कर नहीं पा रहा था. घुटने से सुई सदृश्य चुभती टीस निकली और वह पेट के बल पड़ा रहा.

ऐसे पड़े रहने से उसकी छाती रास्ते की गरमी अनुभव कर रही थी. इतना तो सहना होगा. बाहर आने का इतना तो मूल्य चुकाना ही होगा. इस प्रकार सेंक लेना छाती, पेट, पिंड़लियां सभी को.

★ ★

इसके बाद उसने अपनी गर्दन अनुमानतः एक सौ तीस अंश में घुमाई. वह थोड़ा पेट के बल पर ही घूमा और फिर थोड़ी देर पूर्व आंधी के साथ आये समाचारपत्र के टुकड़े की ओर सरकने लगा.

हाथ बड़ा कर उसने वह टुकड़ा उठाया. छाती से चिपकाया, फिर आंखों के पास ले जाकर घूरकर उस कागज को देखने लगा. उसे स्मरण हो आया कि वह अब पढ़ना भूल गया है. उस टुकड़े पर के अक्षर उसे बिल्कुल अनजान से लग रहे हैं. क्या संदेश है इसमें छपा हुआ, भगवान जाने!

लेकिन वह पढ़ना कैसे भूला? कितने दिन बीते ड्रेनेज में रहते हुए? चूंकि वह पढ़ना भी भूल चुका है तो बहुत वर्ष बीत चुके होंगे.

बम गिरने के बाद वह ड्रेनेज में रहने आया था. बम गिरने के बाद हुई भगदड़ में उसे यह ड्रेनेज ही अच्छा मिला. अन्यथा क्या पता कैसी परिस्थिति में फंस गया होता. ड्रेनेज में आकर कितने साल हो गये होंगे? बम कब गिरा था? लेकिन करना भी क्या है निश्चित समय जानकर? समय सीमा से कोई संबंध न रहना ही अच्छा है. इस ड्रेनेज में कम से कम समय के संबंध से मुक्त तो हुआ हूं.

ड्रेनेज का जीवन वास्तव में महान है ही. बुनियादी तौर पर एक तो समय का बंधन नहीं. हर समय केवल धुंधला-अंधेरा. धुंधला-धुंधला प्रकाश, कलकल करता हुआ पानी, ठंडे पाईप का स्पर्श.

बाहर की दुनिया से ड्रेनेज कितना और किस प्रकार श्रेष्ठ है, यह अब उसकी समझ में आने लगा. वहां अन्न का प्रश्न ही नहीं था. गटर के पानी में घुले हुए प्रोटींस, व्हिटामिंस की भरमार थी ही. आवश्यकता से अधिक ही थी, उसके शरीर के लिए. केवल जीभ का स्वाद जाता रहा था. लेकिन करना क्या इन स्वादों की संवेदनाओं से? यही ठीक है.

और ड्रेनेज से ऊपर दिन और रात की झंझट साली! रात में सोना और दिन में कुत्ते के समान घूमते रहना. काम करना. काम-काम. पैसा. वेतन. कार्यालय में फाइल्स. कारखानों में यंत्र. दुकान में माल. स्टेशन पर गाड़ियां. रास्ते पर केवल मोटरें, आदमी और अनेक प्रकार के वाहन. कैसी भगदड़, एक बांझ भीड़-भाड़.

अच्छा हुआ साला एक बार का बम गिरा. नहीं तो यही नीरस, कक्ष जीवन बीताने के लिए मजबूर होना पड़ता और इस ड्रेनेज के सुखद वातावरण से भी परिचय न होता. ड्रेनेज की उष्मा, कलकल बहता पानी, बीच-बीच में कीचड़ का मृदु स्पर्श, कोमल अस्फुट अंधकार और सुरक्षित स्थान. सब कुछ लुभावना-लुभावना. आत्मीयता अनुभव कराने लगा.

और ड्रेनेज में हम अकेले ही स्वयं की जिम्मेदारी संभालने वाले. अर्थपूर्ण अकेलापन. अंततः यह अकेलापन महत्वपूर्ण है, यही सच है. ऐसी स्वच्छंद, स्वतंत्र रिक्तता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यही एक आधार था. जिसने इस अकेलेपन की अनुभूति की है— वह वास्तव में भाग्यशाली है और जिसने नहीं की, वह भाग्यहीन.

ऊपर धरती पर बचे बेचारे प्राणी रेडियो-एक्टिव राख में फंसे होंगे. मेरे सामने ही थोड़े बहुत इससे संक्रमित हुए थे. बम फटने पर तो यह अपेक्षित ही था. सभी ऊपर के प्राणी धीरे-धीरे समाप्त हो गए होंगे.

फिर भी बम गिरने पर एक दिन हम भी ऊपर ही थे. भाग्य! हमें 'इंफेक्शन' नहीं हुआ.

बम गिरने तक कौन कहां? कौन कहां, यह पूछ-ताछ ठीक थी. लेकिन एक बार गिरने वाला बम-फटने पर सब कुछ समाप्त हो गया. सभी अपने-अपने में सिमट गये. सभी नाते, सभी रिश्ते निर्वासित हुए.

नहीं कहने पर भी उसमें मेरे प्राण अटके रहे. उसने कितने अपनत्व से मुझे अपनाया था. उसने जीवन का हर क्षण, स्वयं का शरीर मुझे अपनाया था. उसने जीवन का हर क्षण, स्वयं का शरीर मुझे समर्पित किया था.

इसलिए तो मैं उससे आग्रह किया. दूसरा कोई होता तो मैं सोचता भी नहीं लेकिन वह थी इसलिए उससे आग्रह किया इस ड्रेनेज में आने का. उस पर प्रेम व्यक्त करने की यही तो सच्ची कसौटी थी.

शुरू में थोड़ी वह कुड़कुड़ाई, बाद में वह भी ड्रेनेज में आ गयी, बेचारी. मेरा आग्रह ठुकराना उसके लिए कठिन जो था. ड्रेनेज की चिकनी, ठंडी नम हवा से उसे उल्टियां होती, सिर चकराता, थोड़ा टेंप्रेचर भी बीच-बीच आता, इतना तो आदत न होने से शुरू-शुरू में कष्ट होना ही था.

इसमें से वह आसानी से रिकवर हुई होती. उसका सांवला मुलायम शरीर आसानी से ड्रेनेज के वातावरण से अभ्यस्त हुआ होता. उसकी त्वचा भी मेरे ही समान नम पीली हुई होती. बाल झड़ गये होते. पचनेंद्रिय नरम पड़ी होती. फिर कोई भी कष्ट न हुआ होता.

ऊपर धरती के चिड़चिड़े प्रकाश में, मनुष्यों की भीड़ में, तंग ब्लाक में, सार्वजनिक बागों में, वाहनों की भीड़भाड़ में, पूरे ऊपर के दूषित जंतुमय वातावरण में जो स्वप्न उभारे थे सान्निध्य से, उन्हें यहां ड्रेनेज में मूर्त किया जा सकता था. ड्रेनेज में दोनों रहने आने के चार ही दिन बाद ध्यान में आया कि उसे पेशाब गाढे रंग की होने लगी है. याने रेडियो-एक्टिव धूल का इंफेक्शन उसे पहले ही हो चुका था, फिर भी और दो दिन प्रतीक्षा की. लेकिन कोई लाभ नहीं था. उसका रोग दिन-ब-दिन बढ़ने ही लगा. बाद में तो उसके नाखून भी काले पड़ने लगे. थूक शैवाली हरे रंग का आने लगा. वह अब पूरी तरह से रेडियो-एक्टिव राख की चपेट में आ गयी थी. दिल पर पत्थर रख कर उसे बाहर जाने के लिए कहना पड़ा. यहां से बाहर. ड्रेनेज के बाहर. हां कोई दूसरा विकल्प ही न था.

लेकिन अब वह मानती ही न थी. वापस नहीं जाना चाहती थी इसलिए सिसकियां भर भरकर रोई. कहती— यहीं रहती हूं आपके पास. छिपकली के समान बदन से चिपटी.

कोई बहाना नहीं चलेगा. निकल जा एकदम, चली जा इंफेक्शन हुआ है न तुझे? फिर यह ड्रेनेज तेरे लिए नहीं. तू यहां से जा!

फिर भी वह जाने से कतराती रही तो उसे जबरन बाहर करना पड़ा. ड्रेनेज का कीचड़ निकालने की सलाई से ठेल-ठेलकर ऊपर भगाया और ड्रेनेज का ढक्कन भी बिठाया. जा नहीं रही थी बाहर. साली!

हां, और उसके बाहर जाते समय उसकी गीता की कापी भी उसके साथ दे दी. अंदर ड्रेनेज में आते समय वह गीता अपने साथ लाई थी. लेकिन करना क्या है यहां इस सुरक्षित अंधेरी दुनिया में गीता का? गीता की आवश्यकता ऊपर के अस्थिर तड़पते लोगों को है.

फिर वह ऊपर चली गयी प्रकाश की दुनिया में. मुक्त हवा में कष्ट और दुःखों को झेलने. विवशता से क्यों न हो, लेकिन उससे पिंड तो छूटा.

ऊपर उसे बहुत कुछ सहना पड़ा होगा लेकिन जो टलना असंभव था है, उसे सहने के सिवाय दूसरा मार्ग ही क्या है? फिर भी मैंने उसे ऊपर जाते समय समझा दिया था कि कहीं तेरी हड्डियां अंधेरे में नाईट लैंप की तरह चमकने लगें तो फिर तू स्वयं का हाल बेहाल न कर लेना. सीधा-साधा पोटाशियम साईनाइड के समान जहर. . .अंत में उसने किया क्या, वह या उसका कृष्ण जाने या फिर गीता. जो अंत उसके भाग्य में था, वह उसे प्राप्त हुआ होगा. इतनी देर उसकी स्मृतियों में खोकर उसे अजीव-सी अनुभूति होने लगी. मस्तिष्क चकरा गया.

इसी समय ड्रेनेज के ढक्कन का सहारा लेकर खड़े रहने की उसे इच्छा हुई. प्रकाश में, धूल से सने रास्ते से भागने की इच्छा होने लगी. उसने खड़े रहने का थोड़ा-सा प्रयास किया भी. किंतु उसमें सफलता न मिली और उसने इसका विचार त्याग दिया.

वैसे इस दुनिया में कौन खड़ा रहता है? खड़े रहने का अर्थ है अंततः गिरना-टूटना इसलिए रेंगना ही वास्तविक है. रेंगते-रेंगते ड्रेनेज के छेद के पास आया. कुछ समय पूर्व उसके पास संदेश के समान आये कागज के टुकड़े को अभी भी उसने पक्का पकड़ रखा था.

ड्रेनेज में उतरने से पहले उसने उस कागज के टुकड़े को बाहर फेंक देने का निश्चय किया. तुरंत उसने वह टुकड़ा बाहर फेंका भी.

लेकिन इसी समय उसकी नजर उसके हाथ की हथेली की ओर गयी और उसे धक्का-सा लगा.

उसके ध्यान में आया कागज के टुकड़े को जिस हाथ में पकड़ा रखा था, उस हाथ की हथेली काजल के समान काली पड़नी शुरू हो गयी है और यह काली रेडियो-एक्टिव स्याही तेजी से त्वचा से होते हुए शरीर में फैलती जा रही है. . .

अभी तक उसके ड्रेनेज में छोड़े पैर वैसे ही लटके हुए थे. और डूबते सूर्य की अंतिम किरणें उसके सफेद फक्क बीचोबीच तड़के हुए कांच जैसे चेहरे पर जमती जा रही थीं. □□□

(अनु : ज्योति)

केलकर बिल्डिंग, हीरापुर रोड, चालीसगांव.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निर्माणाधीन फिल्म : 'भला मानुष'

इधर अनेक युवा फिल्मकार लीक से हट कर फिल्में बनाने की ओर अग्रसर हुए हैं. विश्वा मित्तर ऐसे ही निर्देशकों में से एक हैं. उनकी फिल्म का नाम है 'भला मानुष', जिसका निर्माण एक और युवा फिल्मकार हर्ष कोहली कर रहे हैं. संगीत दे रहे हैं — आर. डी. वर्मन. कलाकार हैं—रणधीर कपूर, असरानी (देखिए नीचे दिया गया चित्र), नीतू सिंह, जीवन आदि. फिल्म का निर्माण तेजी से चल रहा है. □

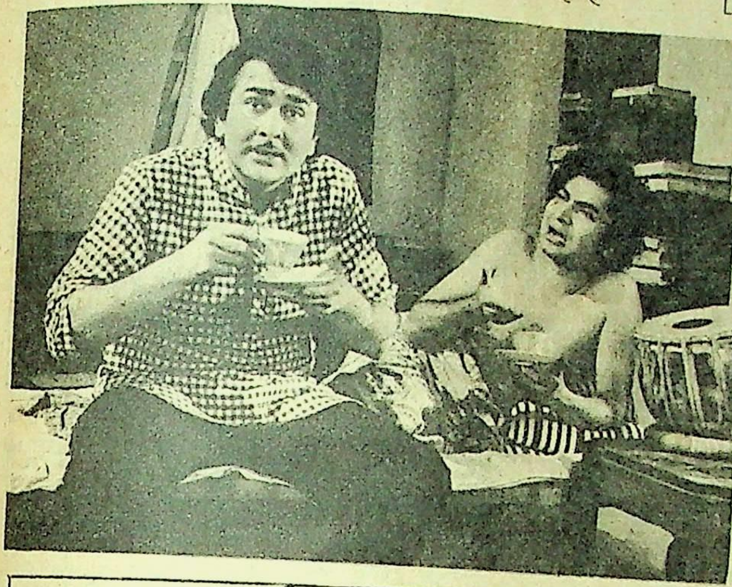

एक नज़्म

● गुलजार

मर्सिया

मोड़ पे देखा है वह बूढ़ा-सा इक पेड़ कभी?
मेरा वाकिफ है बहुत सालों से, हम जानते हैं
जब मैं छोटा था तो इक आम उड़ाने के लिए
परली दीवार से कंधों पे चढ़ा था उसके
जाने दुखती हुई किस शाख से जा पांव लगा था
धाड़ से नीचे गिरा. फेंका था उस पेड़ ने मुझको
मैंने खुन्नस में बहुत फेंके थे पत्थर उस पर.
मेरी शादी पे, मुझे याद है, शाखें दे कर
मेरी वेदी का हवन गर्म किया था उसने
और जब हामला थी 'बीबा' तो हर रोज दोपहरे
मेरी बीवी की तरफ कैरियां फेंकी थीं इसी ने
वक्त के साथ सभी फूल सभी पत्ते गये.
तब भी जल जाता था जब मुन्ने से कहती थी 'बीबा'
'हां उसी पेड़ से आया है तू, लायी थी वहीं से.'
अब भी जल जाता हूं, जब मोड़ गुजरता हूं कभी
खांस कर कहता है, 'क्यों, सर के सभी बाल गये?'
सुबह से काट रहे हैं वह कमेटी वाले
मोड़ तक जाने की हिम्मत नहीं पड़ती मुझको. □

सारिका के वार्षिक ग्राहकों के लिए विशेष छूट

'सारिका' के प्रत्येक अंक का मूल्य एक रुपया है. किंतु वर्ष भर के लिए वार्षिक शुल्क मात्र दस रुपये है, यानी साल भर में २ अंक मुफ्त ! यदि आप दो साल के लिए ग्राहक बनते हैं, तो शुल्क केवल उन्नीस रुपये है यानी दो वर्षों में ५ अंक मुफ्त. हां, तीन वर्ष के लिए शुल्क केवल सत्ताईस रुपये है और इस तरह आप तीन वर्षों का शुल्क एक साथ भर कर ९ अंक मुफ्त में प्राप्त कर सकते हैं.

आपके लिए सारिका की विशेष दरें इस प्रकार हैं:
एक वर्ष — १० रुपये
दो वर्ष — १९ रुपये
तीन वर्ष — २७ रुपये
विदेश में समुद्री डाक से
एक वर्ष — २२ रुपये

कृपया यह कूपन जरूरी राशि के चेक/ड्राफ्ट/मनी-ऑर्डर के साथ-साथ आज ही भेज दें—

सर्कुलेशन मैनेजर,
सारिका, टाइम्स आफ इंडिया बिल्डिंग, बम्बई-४००००१

कृपया मुझे/हमें निम्न पते पर एक वर्ष/दो वर्षों/तीन वर्षों के लिए 'सारिका' भेजने की व्यवस्था करें. १० रुपये/१९ रुपये/२७ रुपये चेक/ड्राफ्ट/मनीऑर्डर द्वारा भेजे जा रहे हैं.
नाम ——————
पता ——————
——————
——————
हस्ताक्षर ——————

TIMES ART

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बेटियों वाले

• ज्योतिस्वरूप तिवारी

बहुत देर से अंदर-ही-अंदर बल खा रहा था जैला. दलीपो के 'छंगन-मंगन' खत्म होते नहीं दिखाई देते थे. यह जनानी जात भी अजीब है! कहती थी—मरजाने छिंदी को घर में पैर नहीं डालने दूंगी. और अब उसी 'मरजाने' के लिए घर का सारा सामान उलट-पलट कर रख दिया था.

—जाने भी दे अब. जैले से नहीं रहा गया. सो जायेगा सौहरा कहीं पर! न बंदा न बंदे की जात. . . .

—तेरी तो अकल मारी गयी है! दलीपो चारपाई पर नया खेस बिछाते हुए बोली. दो साल बाद भाग जागे हैं महिंदरो के. देख, कोई अबे-तबे न बोलने लग जाना उसके सामने!

—ओए, रहने दे अपना लिचकर! जैले को गुस्सा आ गया. आ गया दो साल बाद हक जताने! दो लगाऊं कूल्हों पर—सारी शेखी भूल जाये!

—तू जरूर कजिया खड़ा करेगा! दलीपो दांत पीसते हुए बोली. अकल के बैरी! बेटी वालों का सिर हमेशा नीचा होता है. जा, बाहर घूम आ थोड़ी देर. सिर को हवा लगे थोड़ी.

—चुप करती है या लगाऊं दो घूंसे!

—रब के वास्ते,तेरे पैरों पड़ूं. जा, चला जा, थोड़ी देर के लिए. ले, महिंदरो भी आ गयी! सौंह गुरू की—मुंह कैसा उतरा हुआ है!

महिंदरो चुपचाप एक कोने में खड़ी हो गयी थी. जैले ने उस का उतरा हुआ चेहरा देखा, तो उसे और ज्यादा गुस्सा आया. मगर वह बोला कुछ नहीं.

—बड़ी देर कर दी! दलीपो ने महिंदरो से कहा. जा जल्दी से चूल्हा जला दे. छिंदी आने ही वाला होगा.

—झाई. . .मैं. . .महिंदरो के स्वर से लगता था कि वह बस फूट ही पड़ने वाली है. मुझे उस बैरी के साथ मत भेजना.

—जा पगली! दलीपो ने उसे झिड़की दी. वह तेरा साईं है, महिंदरो. उसी का घर तेरा घर है. 'धीए घर जा आपने', वह एक लोकगीत गुनगुनाने लगी.

—बापू! . . . .महिंदरो ने जैले के गले में बाहें डाल दीं और धीरे-धीरे सिसकने लगी.

—ठीक है, ठीक है. . .जैला उसके सिर पर हाथ फेरता हुआ बोला. परंतु स्वयं उसे भी यह नहीं मालूम था कि महिंदरो या दलीपो में से किस की बात की हामी भर रहा है. धीरे से महिंदरो को अलग करके वह कोठरी से निकल गया.

★ ★

घर से बाहर, ज्वाले के कोठे के अलावा जैले का कोई अड्डा न था. ज्वाला कोठे के बाहर चारपाई डाले बैठा था. जैले को देखते ही बोला—सुना भई जैले, आज तो पाहुन आया हुआ है!

—हां. . .आ गया अपनी बहन का खसम!

ज्वाले ने अर्थपूर्ण दृष्टि से जैले की ओर देखा और बोला—मक्खनसिंह के घर गया है.

मारे गुस्से के जैले की मूंछें फड़कने लगीं. मगर वह चुप ही रहा.

—यार, महिंदरो के घर वाले को शेरसिंह वाली बात का पता नहीं है क्या?

—नहीं. . .! पता नहीं कहां-कहा की मिट्टी चाट कर आया है, दो साल बाद!

—यार, तेरी लड़की के करम ही बुरे हैं. क्या किया जाये? सच कहा है सयानों ने—जवांई दसवां ग्रह होता है . .

—दसवें ग्रह की तो. . .

—हां-हां. . .जबान ठीक कर अपनी. बेटी वालों का सिर हमेशा नीचा होता है.

इस बार जैले ने दिल-ही-दिल में दुनिया के सारे बेटियों वालों को गंदी-सी गाली दी. मगर मुंह से कुछ नहीं बोला. गुस्से से उसका सारा जिस्म सुलग रहा था.

—शेरसिंह भी आज आया हुआ है! ज्वाले ने मानो आग पर घी छिड़का.

जैले ने छिंदी और शेरसिंह, दोनों की मां-बहन से गंदा-सा रिश्ता कायम करते हुए मोटी-सी गाली बकी.

—यह टुंडा शेरसिंह अब अपनी टांगें भी तुड़वायेगा.

ज्वाला हंसने लगा.

जैले के हाथों टूटी शेरसिंह की बांह ठीक न हो पायी थी. शामत ही तो आयी थी उसकी, जो 'जंगल पानी' जाती हुई महिंदरो को छेड़ बैठा. जैले के हाथों उसकी मरम्मत पर गांव के सभी बहू-बेटी वालों ने बगलें बजायी थीं. शेरसिंह था भी इसी काबिल. जब उसने गुरदित्ते चमार की बेटी मीतो पर हाथ डाला, तब भी खासा हंगामा हुआ था. यह और बात थी कि गांव के जाट, शेरसिंह के खिलाफ एक चमार की तरफदारी न कर सके हों.

कुदरत ही साथ दे गयी उस रोज. जैला संयोग से ठीक समय पर पहुंच गया था. वरना नाक कट जाती. शेरसिंह ने मुंडेर की ओट में महिंदरो को जमीन पर गिरा रखा था. महिंदरो की कमीज फट चुकी थी और उसका जिस्म उसमें से झांक रहा था. शेरसिंह ने अपना घुटना महिंदरो के पेट पर रखा हुआ था और उसकी सलवार नोचने की कोशिश कर रहा था. महिंदरो जिबह की जा रही बकरी की तरह चीख रही थी.

शेरसिंह ही था जो इतनी मार बर्दाश्त करके भी जिंदा रहा. मगर उसकी दायीं बांह को तो करीब के गांव का वह हकीम भी ठीक नहीं कर सका था, जो आदमी का पेशाब देख कर हर बीमारी का इलाज कर देता था.

और स्वयं महिंदरो का घरवाला इस समय उसी शेरसिंह के घर में बैठा शायद गुड़ की शराब पी रहा था. जैले के हाथों की मुठ्ठियां भिंच गयीं.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

—यह मक्खनसिंह भी हरामी है. [illegible] बोली.
जैला केवल 'हूं' करके रह गया.

दिन ढल गया था. हवा भी चलने लगी थी. ज्वाले ने कहा—— चल खटिया अंदर कर लें—— ठंड हो गयी है.

——नहीं, मैं अब चलता हूं. जैला उठ खड़ा हुआ.

जब वह घर में दाखिल हुआ तो महिंदरो सिसक रही थी और दलीपो उसे समझा रही थी. जैले को देख कर उसने कहा—— ले, तू ही समझा अपनी लाडो को.

——क्यों, क्या बात हो गयी?

——पूछ ले इससे ही.

——क्या हुआ, कुड़िए? जैले ने महिंदरो से पूछा. मगर वह जवाब देने की बजाय सिसकियां लेने लगी.

—तू ही फूट मुंह से कुछ! जैले ने दलीपो से कहा.

दलीपो जवाब दिये बगैर चौके की तरफ चली गयी. जैले ने महिंदरो को पुचकारने की कोशिश की. परंतु जब वह रोती ही रही तो चौके की ओर चला गया.

दलीपो के करीब बैठते हुए उसने कहा——तू ही कुछ बोल, भागवान! वह तो रोये ही जाती है.

——रोती है अपने करमों को! दलीपो चूल्हे में सुलग रहे उपलों पर चीमटा मारते हुए बोली. भगवान ने औरत की जून दी है तो औरत बन कर रहे—— दो साल बाद घरवाला आया है और पहली ही रात. . .

——मगर हुआ क्या?

——सौ-सौ हुज्जतें करती है. . .कहती है, छिंदी के साथ कोठड़ी में अकेली नहीं सोयेगी. दलीपो ने धीरे से कहा.

जैले ने कुछ कहने के लिए होंठ खोले, मगर फिर बंद कर लिये.

दलीपो बड़बड़ाने लगी—जाने कैसा हौल बैठ गया है! कहती है, देह ठीक नहीं. भला मां के सामने ऐसा झूठ चलेगा? आठ दिन हो गये हैं उसे—— पूरे आठ दिन. यह सफेद बाल नहीं देखती? भला पूछो मैंने उसे जना है या उसने मुझे? इतना डरती क्यों है? दो-एक थप्पड़ ही तो मारेगा. सारे मरद मारते हैं औरतों को. मैंने क्या कम मार खायी है अपने घरवाले से? एक-आध बच्चा हो जाये—— सब ठीक हो जाता है—— और फिर मारेगा भी, तो प्यार से ही मारेगा न?

ठीक तो है, जैले ने सोचा. दलीपो ने क्या कम मार खायी है उससे? मगर हर बार दिमाग की गर्मी, देह की गर्मी में घुल कर खत्म हो जाती रही है. अजीब है यह औरत जात भी——सब कुछ हजम कर जाती है. . .

थोड़ी देर बाद महिंदरो भी आ गयी. शायद रो-रो कर थक गयी थी. दलीपो को उठने के लिए कहा और चुपचाप मक्की की रोटियां बनाने लगी. तभी छिंदी आ गया. शायद पूरी बोतल चढ़ा कर आया था. बोला—रोटी खा आया हूं. मेरा बिस्तर कहां बिछाया है?

—जा महिंदरो! दलीपो ने महिंदरो से कहा. और वह चुपचाप उठ कर छिंदी के साथ कोठड़ी के अंदर चली गयी. कुछ देर बाद लौटी तो दलीपो ने थाली में रोटी डाल कर उसके सामने रखते हुए कहा—— ले, जल्दी से खा ले. और सुन—— जाते वक्त छिंदी के लिए दूध का गिलास लेती जाना.

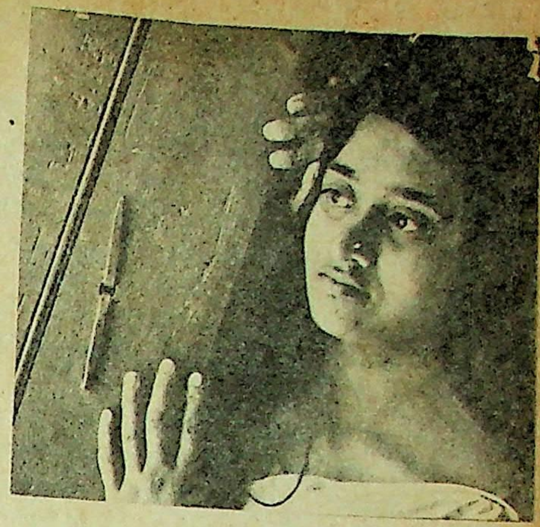

• रजनीकांत

महिंदरो चुपचाप रोटी खाने लगी. दलीपो ने जैले को भी रोटी डाल दी थी. वह भी खाने लगा.

रोटी खा कर महिंदरो ने 'काढ़ने' से दूध का गिलास भरा और उसे लिये हुए कोठरी की ओर चली. दलीपो ने पीछे से टोका—शक्कर तो डाल ले. . .खुद ही जूते खाने की बात करती है!

महिंदरो ने कोई जवाब दिये बगैर दूध में चीनी डाल कर मिलायी और कोठरी के अंदर चली गयी. दरवाजा बंद हो गया.

दलीपो ने अपने और जैले के लिए चौके में ही बिस्तर बिछा लिये थे. जैला रोटी खाते ही अपनी रजाई में घुस गया. दलीपो अभी चौके का काम निपटा ही रही थी कि जैले की आंख लग गयी.

जैले ने महिंदरो की चीखें सुनीं—— वह भागा—— भागता गया—— मगर महिंदरो की चीखें बहुत दूर से आ रही थीं. जैला भागता रहा—— महिंदरो की कमीज फट चुकी थी. उसका जिस्म उसमें से झांक रहा था—— शेरसिंह ने उसे जमीन पर गिरा रखा था—— वह उसके कपड़े नोच रहा था. . . महिंदरो जिबह की जा रही बकरी की तरह चीख रही थी. जैले ने ललकारा—— खड़ा हो तेरी मां की. . .शेरसिंह ने मुड़ कर जैले की ओर देखा—— मगर यह क्या? यह तो छिंदी था! महिंदरो फिर चीखी—— नहीं. . . यह शेरसिंह ही था—— ठहर रे अपनी बहन के खसम! . . .

——क्यों बकबक कर रहा है! दलीपो ने जैले को झिंझोड़ा. जले ने बौखला कर आंखें खोल दीं.

तभी कोठरी से हलकी-सी चीख सुनायी दी. जैला उछल कर उठ बैठा.

दलीपो ने उसकी बांह पकड़ ली—चल, सो जा. चुपचाप! उसने घुड़की दी.

——मगर महिंदरो. . .

——तू लेटता है चुपचाप कि नहीं? . . .

जैले ने लेट कर रजाई सिर तक खींच ली. □□□

द्वारा 'होशियार' पाक्षिक ,
पुराना बाजार, लुधियाना.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चौथा समांतर लेखक सम्मेलन : एक रिपोर्ट (४)

गत २७, २८, २९ और ३० जनवरी को मद्रास तथा कालीकट में समांतर लेखकों का चौथा सम्मेलन हुआ, जिसमें हिंदी के अलावा डोगरी, गुजराती, मराठी, तमिल, तेलुगु तथा मलयालम के लेखकों ने भी भाग लिया. मद्रास में, तथा कालीकट में हुई दो गोष्ठियों की रिपोर्ट आप पिछले अंकों में पढ़ चुके हैं. २८ जनवरी की रात और २९ की सुबह को समांतर लेखकों की पहली अनौपचारिक गोष्ठी हुई, जिसके पूर्वार्द्ध का विवरण आपने अक्तूबर '७५ अंक में पढ़ा. यहां पढ़िए इसी गोष्ठी के उत्तरार्द्ध का विवरण.

बात प्रतिक्रियावादी शक्तियों की अवसरवादी प्रवृत्ति तथा प्रगतिशील-संबद्ध लेखक को ले कर चल रही थी.

बांगलादेश की क्रांति का उदाहरण देते हुए कमलेश्वर ने कहा कि वहां की क्रांति के पीछे सबसे अहम भूमिका वहां की साधारण जनता और बुद्धिजीवी वर्ग की ही थी. परंतु आज उसका सबसे अधिक लाभ उठाने में वहां का राजनीतिक संप्रदाय ही क्रियाशील है.

राम अरोड़ा ने फिर एक नया प्रश्न उठाया. उन्होंने कहा कि कभी किसी राजनीतिक पार्टी को हमारा लेखन अपने अनुकूल लग सकता है. और तब वह दल हमारा लाभ उठा सकता है. क्या ऐसी स्थिति में हम उसके अवसरवाद का फायदा नहीं उठा सकते?

राम अरोड़ा की बात लोगों पर ठीक से स्पष्ट भी नहीं हो पायी कि आशीष सिन्हा ने उन्हें टोका—अवसरवादिता अगर क्रांति या परिवर्तन को स्थगित करती है, तो हमें उसका विरोध करना चाहिए.

यात्री ने अवसरवाद शब्द के प्रयोग पर आपत्ति की. उन्होंने कहा कि यह शब्द एक स्वस्थ परिवेश के निर्माण में बाधक है, अतः इसका हम जितना ही कम इस्तेमाल करें, उतना ही अच्छा है.

कमलेश्वर ने इस सारी बहस को सही परिप्रेक्ष्य में रखने का प्रयत्न करते हुए कहा कि 'अवसरवाद' अथवा किसी राजनीतिक पार्टी द्वारा हमारे लेखन का इस्तेमाल या हमारे द्वारा उस पार्टी का इस्तेमाल गलत सोच ही नहीं, गलत शब्दावली भी है. हम स्वीकार कर चुके हैं कि हम साधारण आदमी के लिए प्रतिबद्ध ही नहीं, उसकी सोच और उसके संघर्ष से संबद्ध भी हैं. 'संबद्धता' शब्द पर हमने इसी लिए बार-बार जोर दिया है, क्योंकि 'प्रतिबद्धता' हमें एक आरोपित और राजनीति-प्रेरित स्थिति लगती है. समांतर लेखक के संदर्भ में संबद्धता ही शायद सही शब्द और स्थिति है. ऐसी स्थिति में यदि हमारा लेखन साधारण जन की स्थिति को बेहतर बनाने में कहीं भी सहायक होता है, तो हमें क्या आपत्ति हो सकती है? हां, इसके लिए यह आवश्यक होगा कि समय-समय पर हम अपने लेखन का स्वयं जायजा लेते रहें, उसका मूल्यांकन करते रहें, उसकी अर्थवत्ता को परिभाषित और व्याख्यायित करते रहें, ताकि हम उन खतरों से बचे रह सकें जिन्हें 'लेखन के इस्तेमाल' की संज्ञा दी जा सकती है.

राम सुरेश ने भी इसी बात पर जोर दिया कि यदि हमारी समझ और नीयत साफ है, अर्थात् हम चीजों को सही परिप्रेक्ष्य में देखते हुए अपनी संबद्धता को बनाये रखते हैं, तो हमें किसी प्रकार के अवसरवाद का मुंह नहीं देखना होगा. न ही किसी प्रकार का खतरा हमारे लेखन के इस्तेमाल का ही हो सकता है.

बहस लंबी होती जा रही थी. अतः कामतानाथ ने मूल मुद्दों को दोबारा रेखांकित करना चाहा. उन्होंने कहा, बात राजनीतिक पार्टियों को ले कर उठी थी. किसी ने यह भी कहा कि सभी पार्टियां भ्रष्ट हैं. परंतु इस तरह के स्वीपिंग रिमार्क से काम नहीं चलेगा. इतना साफ है कि बिना किसी राजनीतिक दल या स्पष्ट विचारधारा के जिस परिवर्तन की कामना हम करते हैं, वह संभव नहीं है. क्रांति अलग-अलग इकाइयों में बंट कर जीने और सोचने से नहीं होगी.

दूसरी बात, जैसे कि आशीष सिन्हा ने प्रश्न उठाया था, क्रांति का स्वरूप भी हमारे मस्तिष्क में साफ होना चाहिए. मेरी समझ से, उन्होंने कहा, हिंसात्मक क्रांति या शांतिपूर्ण संक्रमण का फैसला समय ही करेगा.

यह भी संभव है कि आज जो राजनीतिक दल शांतिपूर्ण संक्रमण के पक्ष में हो, वह समय या स्थितियों के अनुसार एक भयानक परिवर्तन के पक्ष में हो जाये.

फिलहाल हमें अपनी समझदारी में क्रांति के पक्ष और प्रतिपक्ष के बारे में साफ होना होगा. उन शक्तियों को पहचानना होगा जो क्रांति की बातें करते हुए भी वस्तुतः प्रतिक्रांति की पोषक हैं.

बसंतकुमार ने कामतानाथ के वक्तव्य से सहमति जाहिर करते हुए कहा कि भविष्य के सारे प्रश्नों का उत्तर वर्तमान में नहीं खोजा जा सकता. क्रांति या परिवर्तन निश्चित अपना मार्ग खुद-ब-खुद कर लेता है.

कमलेश्वर ने बात आगे बढ़ायी. उन्होंने कहा, क्रांति के किसी भी रूप से डरने की बात नहीं है.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साहित्यकार, विशेषकर दलित समांतर साहित्यकार, हमेशा यथास्थिति को नकारता रहा है. हम परिवर्तन ही नहीं, बल्कि यथार्थ-पोषित समाजवाद चाहते हैं.

सड़क पर खड़ा एक-एक व्यक्ति जब तक अपने भविष्य और वर्तमान के प्रति आश्वस्त नहीं होता, साहित्यिक धरातल पर हमारी लड़ाई तब तक समाप्त नहीं होती. महज व्यवस्था के ढांचे को बदलने तक हमारी बात सीमित नहीं है.

व्यवस्था के बदलने के साथ-साथ हम साधारण आदमी के लिए आर्थिक एवं सामाजिक न्याय की बात भी करते हैं, जिसके पक्षधर हम हर व्यवस्था में होंगे.

इसी संदर्भ में हमने साहित्यकार की भूमिका को चिरंतन वाम की भूमिका की संज्ञा दी है. और इसीलिए आज यदि यह परिवर्तन शांतिपूर्ण ढंग से होता है, तो हम उसके साथ हैं.

इसी संदर्भ में हमें वर्ण-व्यवस्था की ओर भी ध्यान देना होगा, जो इस सामंतवादी-पूंजीवादी व्यवस्था की ही देन है. समाज में आज वर्ग-भेद ही नहीं, वर्ण-भेद भी है और आजादी के पिछले सत्ताइस वर्षों में उसमें भी कोई खास परिवर्तन नहीं आया है. दलित साहित्य के हमारे प्रखर साहित्यकार वर्ग-भेद के साथ-साथ आज इस वर्ण-व्यवस्था से भी जूझ रहे हैं.

वीरेंद्र सक्सेना ने कहा कि हमें दोहरे मानदंडों से भी बचना चाहिए.

कभी-कभी ऐसा भी होता है कि क्रांति की बात करते हुए भी हम परोक्ष रूप से पूंजीवादी मूल्यों से ही जुड़े रहते हैं. उदाहरणार्थ समाज में महिलाओं का अब भी वह स्तर नहीं, जो होना चाहिए. हम इस विषय पर लंबे-लंबे भाषण जरूर दे लेंगे. परंतु अपने व्यक्तिगत जीवन में, अपने परिवार में ही, उन बातों का विरोध करेंगे.

निश्चय ही, कमलेश्वर ने कहा, यह सारी चीजें परिवर्तन की मानसिकता के प्रसार में बाधक हैं और हमें धीरे-धीरे इन चीजों से आगे निकलना है. यही नहीं, धार्मिक संस्कार भी प्रायः हमारे आड़े आते हैं. उन्हें भी हमें बदलना होगा. यह एक लंबी प्रक्रिया हो सकती है, परंतु निश्चित रूप से साहित्यकार इसमें एक अहम भूमिका अदा कर सकता है. और यह सब मेरे विचार से शांतिपूर्ण ढंग से ही संभव होगा. इसीलिए मैं समझता हूं, वर्तमान स्थिति में समाजवाद का हमारा रास्ता शांतिपूर्ण संक्रमण का रास्ता ही हो सकता है.

इस संदर्भ में इब्राहीम शरीफ ने उन प्रतिक्रियावादी शक्तियों की ओर इंगित किया, जो इस परिवर्तन की प्रक्रिया को स्थगित करना चाहती हैं या उसे किसी दूसरी दिशा में मोड़ देना चाहती हैं. समय-समय पर वे एसे क्रांतिकारी नारे भी गढ़ लेती हैं, जिनसे जन साधारण को भ्रम में डाल सकें. ऐसी शक्तियों को समझना बहुत जरूरी है.

दया पवार ने दलित साहित्य की चर्चा की. उन्होंने कहा, हम पर आये दिन सवर्ण हिंदुओं और प्रतिक्रियावादी तत्वों का आक्रमण होता रहता है. हमें उसकी भी निंदा करनी चाहिए.

अपराह्न के दो बजने को हो रहे थे. गेस्ट-हाउस में दोपहर का भोजन सब की प्रतीक्षा कर रहा था. अतः गोष्ठी को यहीं समाप्त कर दिया गया.

(क्रमशः)

विश्वविद्यालय-गेस्टहाउस के कमरा नंबर-१ में विचार-गोष्ठी : भाग लेने वाले कुछ लोग— (बायें से) डा. मलिक मोहम्मद, डा. चंद्रशेखरन नायर, डा. वीरेंद्र सक्सेना, अजित पुष्कल, दामोदर सदन, दया पवार, हिमांशु जोशी, कामतानाथ तथा अन्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपके व्यवसाय में चार्टर्ड सहायक कैसे है

समय के साथ-साथ व्यवसाय और भी जटिल होते जाते हैं और चार्टर्ड द्वारा दी गयी अतिरिक्त किन्तु आवश्यक सेवायें व्यवसायों के लिए, चाहे वे छोटे हों या बड़े, प्राय: अत्यन्त महत्व की होती हैं।

चार्टर्ड में आपको हमारा ग्रूप, जो एक विश्वव्यापी संस्था है, अन्य लाभ भी देता है जैसे कि असाधारण व्यवसायिक तत्परता, क्योंकि एक ही ग्रूप आप के लिए यहाँ भी और विदेशों में भी काम करता है।

एशिया, अफ्रिका, योरोप, मध्य एवं सुदूर पूरब, अस्ट्रेलिया एवं अमेरिका के ६० देशों में १५०० शाखाएं तथा ग्रूप कार्यलयें हैं।

यह अनुठा कार्य-जाल केन्द्रीय संग्रह को जो स्थानीय जानकारी देता है वह कम ही बैंक अपने ग्राहकों को दे पाते हैं।

आपके वैदेशिक व्यवसाय के लिए एक-एक पल की सूचना अत्यन्त महत्व की हो सकती है। चार्टर्ड आपकी सहायता और भी प्रकार से कर सकता है।

दि चार्टर्ड बैंक

अमृतसर, बम्बई, कलकत्ता, कालीकट, कोचीन, दिल्ली, कानपुर, मद्रास, नई दिल्ली, वास्को-डा-गामा

स्टैण्डर्ड एण्ड चार्टर्ड
बैंकिंग ग्रूप का एक सदस्य

sekai/cb/283

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

OBM 5080 HIN

जब कभी मीरा को
चोट लग जाती है

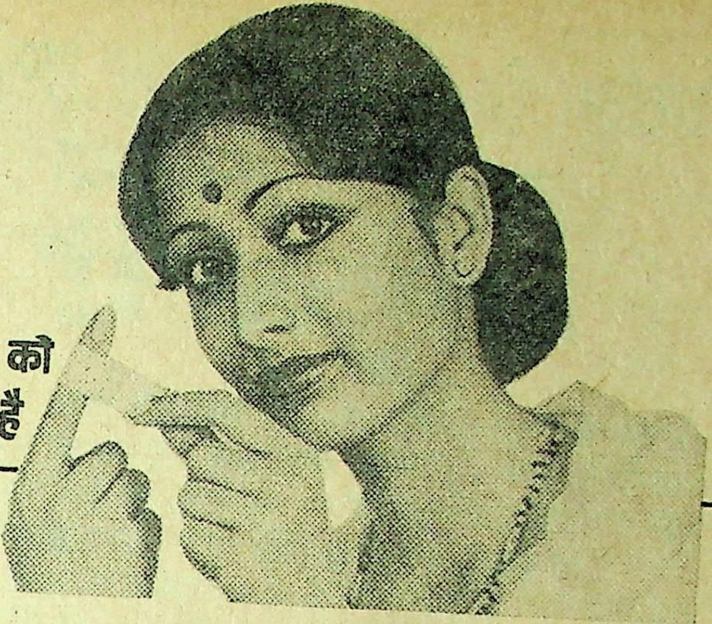

वह स्वयं को छूत से बचाने के लिए
हमेशा BAND-AID BRAND पट्टियों
पर ही भरोसा करती हैं

खुले घाव को हमेशा छूत लगने का डर रहता है। बैन्ड-एड ब्रान्ड पट्टियों से इसकी रक्षा कीजिये। बैन्ड-एड ब्रान्ड पट्टियाँ कीटाणुओं से घावों की रक्षा करती हैं और कार्यसिद्ध ऐन्टीसेप्टिक मर्क्युरोक्रोम घाव को आराम पहुंचाती है और अच्छा करती है। सावधानी बरतिए — बैन्ड-एड ब्रान्ड पट्टियाँ लगाइये। हमेशा कुछ पट्टियाँ अपने पास रखिए।

बैन्ड-एड ब्रान्ड
पट्टियाँ केवल
जॉन्सन एण्ड जॉन्सन ही बनाते हैं।
Johnson & Johnson*

मर्क्युरोक्रोम से
औषधियुक्त

*Trademark © J&J 75

थोक व्यापारिक पूछ-ताछ के लिए सम्पर्क करें :

हसमुख एजेन्सी
गोखले रोड (दक्षिण)
बम्बई ४०० ०२५

हसमुखलाल एण्ड कम्पनी
गोखले रोड (दक्षिण)
बम्बई ४०० ०२५

ठक्कर परषोत्तम हीरजी एण्ड कम्पनी
जॉली सेंटर बेसमेंट, सांताक्रूज
बम्बई ४०० ०५४

जवाहर मेडिकल एण्ड जनरल स्टोर्स
९९-१०१ के. एन. रोड
बम्बई ४०० ००९.

sekai/cb/283

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दीपावली के पुनीत पर्व पर प्रस्तुत है
एक महान जैन कथा
बाहुबली

जैनधर्म के प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव पहले एक महान शासक थे. उनके पुत्रों में दो भरत और बाहुबली को साहस और शौर्य विरासत में मिला था. पर साम्राज्य की लिप्सा ने भरत को स्वार्थी बना दिया. बाहुबली का राज्य छीनने के घमंड में भरत और बाहुबली के बीच संघर्ष हुआ. भरत ने बाहुबली को हराने के कैसे-कैसे प्रयास किये ? बाहुबली ने कैसे विजय पायी ? लेकिन बाहुबली ने भी राजपाट छोड़कर क्यों वैराग्य धारण किया ?

— पढ़िए रंगीन चित्रों भरी कहानी

इंद्रजाल कॉमिक्स

१५ नवम्बर १९७५

अपनी प्रति तुरंत खरीद लें, वरना कहीं पछताना न पड़े !

मूल्य मात्र एक रुपया

टाइम्स आफ इंडिया प्रकाशन

TIMES ART

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सही पालन पोषण का आधार
पराग
(स्प्रे-ड्राईड)
शिशु दुग्ध आहार

पूर्णतया संतुलित 'पराग' नवजात शिशु के सही पालन पोषण के लिए विश्वसनीय दुग्ध आहार है। इसे आप शिशु को जन्म के बाद पहले ही सप्ताह से दे सकती हैं। स्वादिष्ट तथा शक्तिदायक पराग-पिलाने से शिशु सदा स्वस्थ और सक्रिय रहेगा।

ताज़े दूध से अत्याधुनिक स्प्रे-ड्राइंग द्वारा निर्मित, पल-भर में तैयार प्रोटीन, विटामिनों (आठ), खनिज पदार्थों तथा अन्य पौष्टिक तत्वों से भरपूर 'पराग' को आप अपने शिशु की कोमल पाचन शक्ति के अनुकूल पायेंगी।

प्रादेशिक कोआपरेटिव डेरी फेडरेशन लिमिटेड, लखनऊ द्वारा इन्फैंट मिल्क फूड फैक्ट्री, (मुरादाबाद) में निर्मित

बेनेट कोलमैन एंड कंपनी लिमिटेड, स्वत्वाधिकारी के लिए श्रीकृष्ण गोविंद जोशी द्वारा टाइम्स आफ इंडिया प्रेस, बंबई में मुद्रित व प्रकाशित. पो बाक्स २१३, बंबई-१; दिल्ली आफिस : ७ बहादुरशाह जफर मार्ग, नयी दिल्ली-१; कलकत्ता आफिस : १३/१ और १३/२ गवर्नमेंट प्लेस ईस्ट. लंदन आफिस : ३०-ए, ... मिडिलसेक्स, यू. के.

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पंजीयत सं. एम. एच. दक्षिण बंबई-३९९

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar